वाणी-सरोवर

जनवरी, १९७३

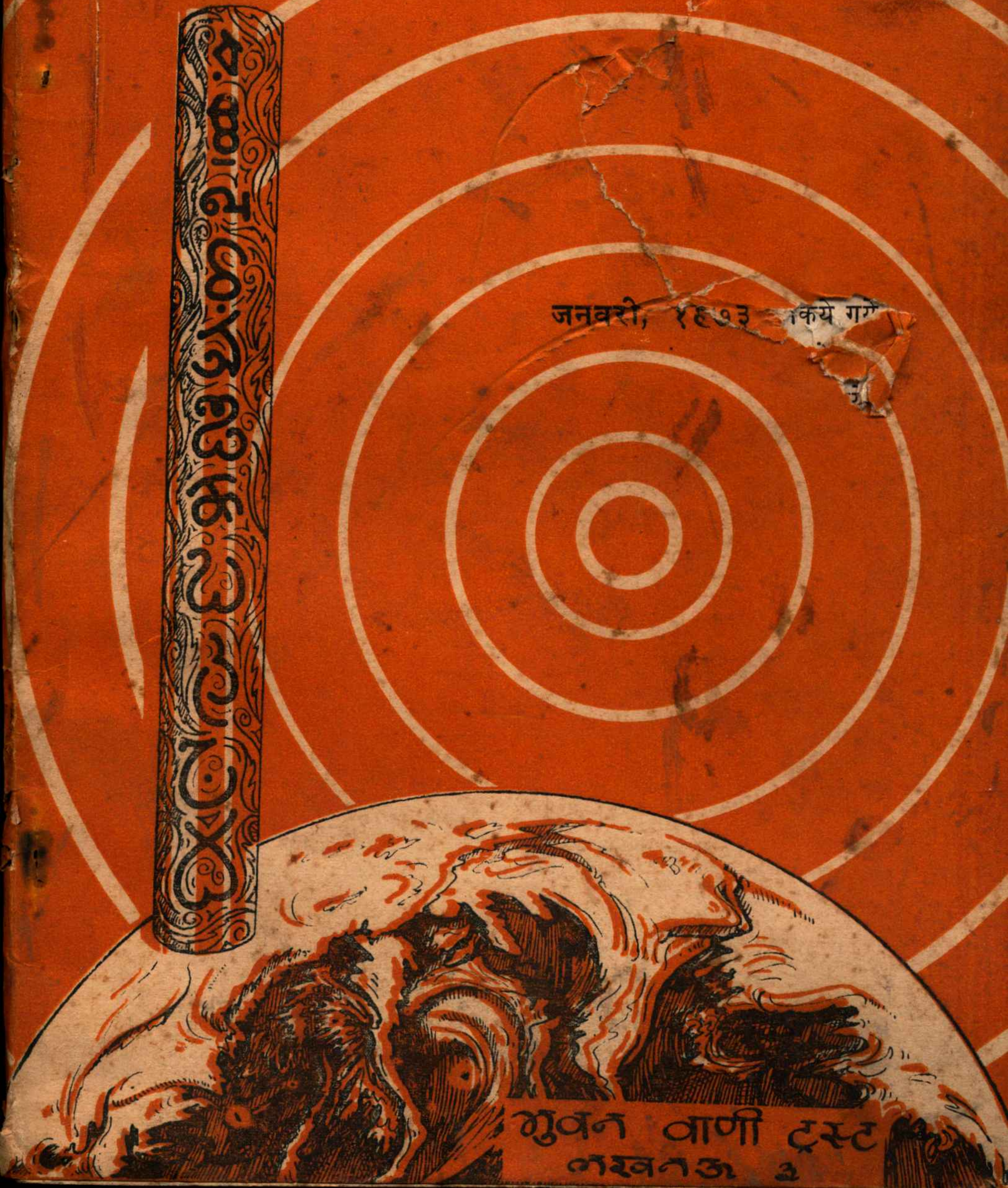

भुवन वाणी ट्रस्ट
लखनऊ ३

[भुवन वाणी ट्रस्ट (पंजीकृत) लखनऊ का मुखपत्र (त्रैमासिक)]

वाणी सरोवर

प्रत्येक क्षेत्र प्रत्येक संत की बानी।
संपूर्ण राष्ट्र में घर-घर है पहुँचानी ॥

संपादक—नन्दकुमार अवस्थी   प्रब०सं०—विनयकुमार अवस्थी

वर्ष—४   जनवरी, १९७३   अंक—१

विद्वत्-परिषद्

असमिया—बसन्तकुमार सैकिया
सुश्री दीप्ति बरगुहाईं

अरबी—क़ारी मुहम्मद उस्मान सिद्दीक़ी, दारुल्-मुबल्लग़ीन, लखनऊ

ओड़िया—सुरेशचन्द्र नन्द एम. ए. हिन्दी-ओड़िया, रा० भा० रत्न, कटक

अंग्रेज़ी—डॉ. एम. डी. पटियाल
प्रि. उ. भा. धर्ममहाविद्या. बरेली

उर्दू—डॉ.स० असदअली एम.ए.,पीएच्. डी.
सुश्री माजदा असद एम.ए. पीएच्.डी.

कन्नड़—डॉ. वी. बी. पुत्रन, एम. ए. पीएच्. डी., बंबई

कश्मीरी—डॉ. शिबनकृष्ण रैणा एम. ए., पीएच्. डी. नाथद्वारा (राज.)

गुजराती—डॉ. दीनेश हरिलाल भट्ट,एम.ए. पीएच्.डी., रा०भा० रत्न, बंबई

गुरुमुखी—डॉ० अमरसिंह खालसा, डा० आफ़ डिविनिटी (यू. एस. ए.)
प्र० संपादक 'सरदार' लखनऊ

तमिळ—वी. नटराजन एम. काम.

तेलुगु—डॉ. भीमसेन 'निर्मल', एम. ए., पीएच्.डी.,रीडर,उस्मानिया वि.वि.

नेपाली—नन्दकुमार आमात्य
सुश्री तपेश्वरी देवी आमात्य

पाली—डॉ० हर्षनारायण एम.ए.,पीएच्.डी.

पारसी—सुश्री नाजू दारा दे[illegible],

फ़ारसी—स० मस्ऊदहसन रिज़्[illegible] [illegible]त-सरकार-सम्मानित, भू.पू. ([illegible]सी) विभागाध्यक्ष लखनऊ वि० वि०

बंगला—प्रबोध मजुमदार

मराठी—प्रा० गजानन साठे, एम.ए.,मराठी-अंग्रेजी, हिन्दी, बी.टी., पीएच्. डी. (हिन्दी), बंबई
सुश्री कुसुम ताम्बे, एम. ए.

मलयाळम—के. ए. एस. अय्यर, भू. पू. उपकुलपति लख० वि० वि०

संस्कृत—बिहारीलाल शास्त्री, काव्यतीर्थ, बरेली

सिन्धी—प्रा० कु० पी. टी. आसवाणी, एम. ए. साहित्यरत्न
एन. के. केवलरामानी, सा.मं.सिं.स.

हिन्दी—रामेश्वर प्रसाद पाण्डेय 'रमेश' शास्त्री, साहित्यरत्न

वार्षिक मूल्य १०·००   एक प्रति २·५०

विषय-सूची

क्रम	विषय	लेखक	पृष्ठ
१	विद्वत्परिषद्	... ...	१
२	विषय-सूची	... ...	२
३	चिथड़े (कविता) (क्रमशः)	श्री हरनन्दन वाजपेयी	३
४	सम्पादकीय	नन्दकुमार अवस्थी	४
५	(फ़ारसी) सिर्रे अक्बर—शा. दाराशिकोह कृत ५० उपनिषदों की व्याख्या। (क्रमशः)	अनुवादक—डॉ. हर्षनारायण एम.ए.,पीएच्.डी.	१६९-१७६
६	(मलयाळम) कवि तुञ्चत्त् एळुत्तच्छन्‌कृत महाभारत (क्रमशः)	सानु.लिप्य.—श्री के.ए.एस.अय्यर,भू.पू. उपकुलपति लख. वि.वि.	१७७-१८४
७	(बंगला) कृत्तिवास रामायण लं.कां.—(क्रमशः)	लिप्य.—नन्दकुमार अवस्थी, अनु.—श्री प्रबोध मजुमदार	१७७-१८४
८	(तमिऴ) तिरुक्कुरळ्—सानु०लिप्य०—सुश्री गोमती अय्यर, बी. ए.	पद्य-भावानुवाद—नन्दकुमार अवस्थी (क्रमशः)	१५३-१६०
९	(उर्दू) गुज़श्तः लखनऊ—मौ० अब्दुल हलीम शरर, (क्रमशः)	लिप्यन्तरणकार—सुश्री कु० हुमैरा सिद्दीक़ी	२५-३२
१[illegible]	रियाज़ुस्सालिहीन (ज़ादे सफ़र)—(क्रमशः)	लिप्यन्तरणकार—नन्दकुमार अवस्थी	१३७-१४४
[illegible]	[illegible]ड़िया) वैदेहीश-विळास—उपेन्द्र भञ्ज कृत—(क्रमशः)	सानु० लिप्य०—श्री सुरेशचन्द्र नन्द, एम.ए., कटक	१५३-१६०
१२	(मराठी) श्रीराम-विजय—श्रीधर स्वामी कृत—(क्रमशः)	अनु०—डॉ० गजानन साठे,पूना एम.ए.,अंग्रेज़ी-मराठी-हिन्दी	११३-१२०
१३	(असमिया) माधव कन्दली कृत रामायण—(क्रमशः)	सानु० लिप्य०—श्री प्रबोध मजुमदार	८९-९६
१४	(गुजराती) गिरधर-रामायण—(क्रमशः)	सानु. लिप्य०—डॉ. गजानन साठे,पूना,डॉ. दीनेश भट्ट,बंबई	८१-८८
१५	(तेलुगु) रंगनाथ रामायण—(क्रमशः)	सानु० लिप्य०—डॉ० भीमसेन 'निर्मल',एम.ए.,पी.एच्. डी.	७३-८०
१६	(सिन्धी) सामीअ जा सलोक—(क्रमशः)	सानु० लिप्य०—प्रा० कु० पी. आसवाणी एम. ए. सा०र०	७३-८०
१७	(कन्नड़) पम्प रामायण—रच० अभिनव पम्प नागचन्द्र (क्रमशः)	सानु. लिप्य. डॉ. वी. बी. पुव्रन एम.ए. पीएच्. डी.	५७-६४
१८	(नेपाली) भानुभक्त रामायण—(क्रमशः)	अनु० श्री नन्दकुमार आमात्य	५७-६४
१९	(कश्मीरी) रामावतार-चरित—(क्रमशः)	सानु. लिप्य. डॉ. शिबनकृष्ण रैणा एम. ए. पीएच्. डी.	६५-७२
२०	(गुरमुखी) श्री गुरुग्रन्थ साहिब—हिन्दी व्याख्या सहित (क्रमशः)	सरदार कृपालसिंह ऐबट, बी. काम, एल. एल. बी.	३३-४०
२१	(संस्कृत) श्रीरामचरितमानस संस्कृत पद्यानुवाद सहित (क्रमशः)	श्री जनार्दन गंगाधर रटाटे एम. ए., साहित्यरत्न	३३-४०

चिथड़े

(गतांक से आगे)

५

किसी का कहीं ठीक नहीं कुछ भी, किसी को नहीं भान भविष्य का है!
पड़े देखना क्या-क्या, यहाँ किसको, अनुमान किसे उस दृश्य का है ?
किसे ज्ञात है पीना हलाहल, या, लिखा भाग्य में भोग हविष्य का है?
बड़ी गूढ़ है माया दुरत्यया रे ! बड़ा अद्भुत खेल अदृश्य का है ॥

६

मिला मान था ऐसा जिन्हें कि नरेशों के द्वारा, जो हाथों ही हाथ लिये गये।
महोत्कर्ष भी कैसा हुआ ! जिनके नये से नये नित्य शृँगार किये गये।
इन्हें क्या पता था, चिथड़े बनेंगे ? इतना जो सँवार-सँवार सिये गये।
हुए जीर्ण, तो हाय ! तिरस्कृत होके, उतार के, फाड़ के, फेंक दिये गये ॥

७

बुझे दीपकों की उदासीनता से, लुटे अंचलों का सा विषाद लिये हुए।
हुए आह! ये कैसे निरीह से हैं, छली भाग्य का भावानुवाद लिये हुए।
इन्हें व्यंग्य से शूलो न यों, चिथड़े स्वयमेव घना अवसाद लिये हुए।
पड़े भूमि के अंक पे आहतों से, निज स्वर्ण-अतीत की याद लिये हुए ॥

८

पड़े राह में देख इन्हें फटे हा ! इनसे सभी लोग फटे हुए हैं।
जिन्हें साज के गौरव देते थे ये, चिथड़ा बता वे ही हटे हुए हैं।
बड़े गूढ़ हैं भाग्य के लेख रे ! ये, इसी से उचटे-उचटे हुए हैं।
गये भूल जो भूलनेवाले तो क्या ! जिन्हें याद हैं वे भी कटे हुए हैं ॥

(क्रमशः)

—हरनन्दन वाजपेयी "हर्ष"

सम्पादकीय

माला में सुमेरु

प्रस्तुत अंक से 'वाणीसरोवर' चतुर्थ वर्ष में प्रवेश कर रहा है। पाठकों की जानकारी के लिए संक्षेप में निवेदन है कि इन पंक्तियों के लेखक ने, विगत बीस वर्षों के श्रम के फलस्वरूप, अरबी धर्मग्रंथ क़ुर्आनशरीफ़ और बंगला कृत्तिवासी रामायण (पाँचकाण्ड) के सानुवाद देवनागरी-लिप्यन्तरण की पूर्ति के बाद, इस राष्ट्रीय कार्य को अधिक व्यापक बनाने के उद्देश्य से, सन् १९६९ में भुवनवाणी ट्रस्ट की संस्थापना की। भुवनवाणी ट्रस्ट (पंजीकृत) के मुखपत्र 'वाणीसरोवर' त्रैमासिक का जनवरी १९७० में उदय हुआ।

ट्रस्ट तथा वाणीसरोवर त्रैमासिक ने भारतीय एवं भारत में व्यवहृत प्राच्य भाषाओं के लोकप्रिय सद्ग्रन्थों के मूलपाठ को देवनागरी लिपि में हिन्दी अनुवाद सहित तैयार करा कर प्रकाशित करने का समीचीन कार्य आरंभ किया। इन सभी भाषाओं के सत्साहित्य को, उनकी अपनी लिपि में अपने क्षेत्रों में फलते-फूलते रहने के साथ-साथ देवनागरी कलेवर में उनके क्षेत्र से बाहर, सारे देश में पहुँचा देना, और विना किसी कटुता-स्पर्द्धा के राष्ट्रभाषा के साथ-साथ सभी भाषाओं को सारे देश में सुपरिचित कराना—इस पुनीत उद्देश्य में गत चार वर्षों में ट्रस्ट को आशातीत सफलता प्राप्त हुई, यह भगवान् की अपार अनुकम्पा है।

पृष्ठ २ पर प्रस्तुत विषय-सूची के अनुसार, संस्कृत, फ़ारसी, अरबी, उर्दू, नेपाली, बंगला, असमिया, ओड़िया, गुरुमुखी, कश्मीरी, सिन्धी, गुजराती, मराठी, तेलुगु, तमिळ, कन्नड़ और मलयाळम के सद्ग्रंथ हिन्दी-अनुवाद सहित देवनागरी लिपि में प्रकाशित हो रहे हैं। वाणीसरोवर में धारावाहिक निकालने के साथ-साथ, उन अंशों से कहीं आगे तक छाप कर, ग्रंथ-रूप में लाने के लिए हम छपे हुए फ़ार्म सञ्चित करते जा रहे हैं। ग्रन्थ विशाल हैं; उनके पूर्ण होने में समय अपेक्षित है। प्रत्येक भाषा के देवनागरी में अनुपलब्ध विशिष्ट उच्चारणों से देवनागरी लिपि को परिवर्द्धित किया जा रहा है; यह इसलिए कि देवनागरी लिपि में, जहाँ ज़रूरत हो, सरलता से उन भाषाओं को शुद्ध रूप में पढ़ने में कठिनाई न हो।

संयोग से गुरुमुखी का 'जपुजी-सुखमनी साहिब' और उर्दू का 'शरीफ़ज़ादः', कलेवर में सामान्य होने के कारण, संपूर्ण हो चुके हैं। इसलिए गुरुमुखी के महान् ग्रन्थ 'श्री गुरुग्रन्थ साहिब' और उर्दू में मौलाना शरर के सुप्रसिद्ध 'गुज़श्तः लखनऊ' का प्रकाशन आरंभ कर दिया गया है। भुवनवाणी ट्रस्ट की नीति है कि जब तक पाठक, लेखक, प्रकाशक, मुद्रक—सब में कई-कई भाषाओं में सामान्य पैठ प्राप्त करने की अभिरुचि जाग्रत न हो जाय, तब तक प्रत्येक भाषा के एक ग्रन्थ के समाप्त होते ही उसी भाषा के दूसरे श्रेष्ठ ग्रन्थ के सानुवाद लिप्यन्तरण का आरम्भ—यह कार्य बराबर चलता रहे।

उपर्युक्त कार्यक्रम की जवाबी में, राष्ट्रभाषा के साहित्य को भारत की दूसरी लिपिओं और भाषाओं में प्रकाशित करने का भी कार्यक्रम अपनाया जा चुका है। संयोग से रामचरितमानस, ललित संस्कृत पद्यानुवाद-सहित, प्रस्तुत अंक से आरंभ है। भारत की सभी भाषाएँ संस्कृत से जन्मीं अथवा अतिप्रभावित हैं। इसलिए अनेक रामायण, महाभारत तथा विभिन्न धर्मों के विविध-भाषाई मान्य ग्रन्थों के बीच, 'मानस' और उसका 'संस्कृत अनुवाद' सारी ग्रन्थमाला में सुमेरुवत् सुशोभित होगा।

—अन्तेवास्युत्तररूपम्, विद्या संधिः, प्रवचनꣳ संधानम् । इत्यधिविद्यम् ।। अथाधिप्रजम्—माता पूर्वरूपम्, पितोत्तररूपम्, प्रजा संधिः, प्रजननꣳ संधानम् । इत्यधिप्रजम् ।। ३ ।।

अनु०-अन्तिम वर्ण शिष्य है, विद्या सन्धि है, और प्रवचन सन्धान है-यह विद्यासम्बन्धी दर्शन कहा गया ।। अब अधिप्रज [दर्शन] कहा जाता है-प्रथम वर्ण माता है, अन्तिम वर्ण पिता है, प्रजा (सन्तान) सन्धि है, और प्रजनन सन्धान है-यह प्रजासम्बन्धी [दर्शन] कहा गया । (३)

अथाध्यात्मम्—अधरा हनुः पूर्वरूपम्, उत्तराहनुरुत्तररूपम्, वाक् संधिः, जिह्वा संधानम् । इत्यध्यात्मम् ।।

इतीमा महासꣳहिताः । य एवमेता महासꣳहिता व्याख्याता वेद, संधीयते प्रजया, पशुभिः, ब्रह्मवर्चसेनान्नाद्येन, सुवर्गेण, लोकेन ।। ४ ।।

अनु०-अब अध्यात्म [दर्शन] कहा जाता है-प्रथम वर्ण नीचे का हनु (नीचे के होठ से ठोडी तक का भाग) है, अन्तिम वर्ण ऊपर का हनु (ऊपर के होठ से नासिका तक का भाग) है, वाणी सन्धि है, और जिह्वा सन्धान है । यह अध्यात्म [दर्शन] कहा गया ।।

इस प्रकार ये महासंहिताएँ कहलाती हैं । जो पुरुष इस प्रकार व्याख्या की हुई इन महासंहिताओं को जानता है वह प्रजा, पशु, ब्रह्मतेज, अन्न, और स्वर्गलोक से सन्धियुक्त किया जाता है । (४)

चतुर्थोऽनुवाकः

यश् छन्दसामृषभो विश्वरूपश् छन्दोभ्योऽध्यमृतात् संबभूव स मेन्द्रो मेधया स्पृणोतु । अमृतस्य, देव ! धारणो भूयासम्, शरीरं मे विचर्षणम्, जिह्वा मे मधुमत्तमा, कर्णाभ्यां भूरि विश्रुवम् । ब्रह्मणः कोशोऽसि मेधया पिहितः । श्रुतं मे गोपाय । आवहन्ती, वितन्वाना, ।। १ ।।

—कुर्वाणा चीरमात्मनः वासाꣳसि, मम गावश् च, अन्नपाने च सर्वदा । ततो मे श्रियमावह, लोमशां पशुभिः सह ।

स्वाहा ! आमायन्तु ब्रह्मचारिणः—स्वाहा ! विमायन्तु ब्रह्मचारिणः—स्वाहा ! प्रमायन्तु ब्रह्मचारिणः—स्वाहा ! दमायन्तु ब्रह्मचारिणः—स्वाहा ! शमायन्तु ब्रह्मचारिणः—स्वाहा ! ॥ २ ॥

अनु०–जो वेदों में ऋषभ (प्रधान) और सर्वरूप है, जो वेदरूप अमृत से आविर्भूत हुआ है, वह इन्द्र मुझे मेधा से अनुगृहीत करे। हे देव ! मैं अमरत्व का धारण करने वाला होऊँ। मेरा शरीर समर्थ हो। मेरी जिह्वा अत्यन्त मधुमती (माधुर्ययुक्त) हो। मैं कानों से ख़ूब श्रवण करूँ। तू ब्रह्म का कोष है, बुद्धि से ढका हुआ। तू मेरी श्रवण की हुई विद्या की रक्षा कर। [श्री] मेरे लिए वस्त्र, गौ, और अन्न-पान को सर्वदा शीघ्र ही ले आने वाली और विस्तार करने वाली है। अतः श्री को पशुओं के सहित लोम वाली लक्ष्मी को तू मेरे पास ला—स्वाहा ! ब्रह्मचारी मेरे पास आयें—स्वाहा ! ब्रह्मचारी मेरे पास विशेष रूप से आयें—स्वाहा ! ब्रह्मचारी मेरे पास प्रकट रूप से आयें—स्वाहा ! ब्रह्मचारी लोग [इन्द्रियों का] दमन करें—स्वाहा ! ब्रह्मचारी लोग शम (मनोनिग्रह) करें—स्वाहा ! (१-२)

यशो जनेऽसानि—स्वाहा ! श्रेयान् वस्यसोऽसानि—स्वाहा ! तं त्वा भग ! प्रविशानि—स्वाहा ! स मा भग ! प्रविश—स्वाहा ! तस्मिन् सहस्रशाखे निभगाहं त्वयि मृजे—स्वाहा। यथाऽऽपः प्रवता यन्ति, यथा मासा अहर्जरम्, एवं मां ब्रह्मचारिणो धातरायन्तु सर्वतः—स्वाहा ! प्रतिवेशोऽसि, प्र मा भाहि, प्र मा पद्यस्व ॥ ३ ॥

अनु०–मैं जनता में यशस्वी होऊँ—स्वाहा ! मैं अधिक धनवानों से भी अधिक धनवान् होऊँ—स्वाहा ! हे भगवन् ! मैं उस तुझी में प्रवेश कर जाऊँ—स्वाहा ! हे भगवन् ! वह तू मुझ में प्रवेश कर—स्वाहा ! हे भगवन् ! उस सहस्रशाखायुक्त तुझ में मैं शुद्ध होता हूँ—स्वाहा ! जिस प्रकार जल नीचे जाता है तथा महीने संवत्सर में जाते हैं, उसी प्रकार, हे धातः ! ब्रह्मचारी लोग सब ओर से मेरे पास आयें–स्वाहा ! तू आश्रयस्थान है, तू मुझ पर प्रकाशित हो, तू मुझे प्राप्त हो। (३)

पञ्चमोऽनुवाकः

भूर्, भुवः, सुवरिति वा—एतास् तिस्रो व्याहृतयः। तासामु ह स्मैतां चतुर्थीं माहाचमस्यः प्रवेदयते—मह इति। तद् ब्रह्म। स आत्मा। अङ्गान्यन्या देवताः। भूरिति वा अयं लोकः, भुव इत्यन्तरिक्षम्, सुवरित्यसौ लोकः, ॥ १ ॥

अनु०—'भू, भुवः, और सुवः'—ये तीन व्याहृतिआँ हैं। उन में से इस चौथी व्याहृति—महः—को माहाचमस्य (महाचमस का पुत्र) प्रख्यापित करता है। वही आत्मा है। अन्य देवता [उस के] अङ्ग हैं। 'भूः' ही यह लोक है, 'भुवः' अन्तरिक्ष [लोक] है, 'सुवः' वह लोक है, (१)

—मह इत्यादित्यः। आदित्येन वाव सर्वे लोका महीयन्ते॥ भूरिति वा अग्निः, भुव इति वायुः, सुवरित्यादित्यः, मह इति चन्द्रमाः। चन्द्रमसा वाव सर्वाणि ज्योतीꣳषि महीयन्ते॥ भूरिति वा ऋचः, भुव इति सामानि, सुवरिति यजूꣳषि॥ २ ॥

अनु०—'महः' आदित्य [लोक] है। आदित्य से ही समस्त लोक महिमान्वित होते हैं॥ 'भूः' ही अग्नि है, 'भुवः' वायु है, 'सुवः' आदित्य है, 'महः' चन्द्रमा है। चन्द्रमा से ही सम्पूर्ण ज्योतिआँ महिमान्वित होती हैं॥ 'भूः' ही ऋचाएँ है, 'भुवः' साम है, 'सुवः' यजुः है, (२)

—मह इति ब्रह्म। ब्रह्मणा वाव सर्वे वेदा महीयन्ते॥ भूरिति वै प्राणः, भुव इत्यपानः, सुवरिति व्यानः, मह इत्यन्नम्। अन्नेन वाव सर्वे प्राणा महीयन्ते॥ ता वा एताश् चतस्रश् चतुर्धा, चतस्रश् चतस्रो व्याहृतयः। ता यो वेद स वेद ब्रह्म। सर्वेऽस्मै देवा बलिमावहन्ति॥ ३ ॥

अनु०—'महः' ब्रह्म है। ब्रह्म से ही समस्त वेद महिमान्वित होते हैं॥ 'भूः' ही प्राण है, 'भुवः' अपान है, 'सुवः' व्यान है, 'महः' अन्न है। अन्न से ही समस्त प्राण महिमान्वित होते हैं॥ इस प्रकार ये चारों चार-चार प्रकार की हैं, व्याहृतिआँ चार-चार हैं। जो इन्हें जानता है वह ब्रह्म को जानता है। सभी देवता उसे बलि (उपहार) अर्पित करते हैं। (३)

षष्ठोऽनुवाक:

स य एषोऽन्तर्हृदय आकाशः तस्मिन्नयं पुरुषो मनोमयः, अमृतो, हिरण्मयः। अन्तरेण तालुके य एष स्तन इवावलम्बते सेन्द्रयोनिः। यत्रासौ केशान्तो विवर्तते, व्यपोह्य शीर्षकपाले, भूरित्यग्नौ प्रतितिष्ठति, भुव इति वायौ, ॥ १ ॥

अनु०–यह जो हृदय के मध्य में आकाश है उस में ही यह मनोमय अमर, हिरण्मय पुरुष रहता है। तालुओं के बीच में यह जो स्तन के समान लटका हुआ है, वह इन्द्रयोनि (आत्मा का द्वार) है।[1] मस्तक के कपालों को बेध कर जहाँ केशों का मूल अवस्थित है, वह [आत्मा प्रयाण करते समय] 'भूः' रूप अग्नि में स्थित होता है, 'भुवः' रूप वायु में, (१)

—सुवरित्यादित्ये, मह इति ब्रह्मणि। आप्नोति स्वाराज्यम्, आप्नोति मनसस्पतिम्। वाक्पतिश्, चक्षुष्पतिः, श्रोत्रपतिर्, विज्ञानपतिः। एतत् ततो भवति—आकाशशरीरं ब्रह्म, सत्यात्म, प्राणारामं, मनआनन्दम्, शान्तिसमृद्धममृतम्। इति प्राचीनयोग्योपास्स्व ॥ २ ॥

अनु०–'सुवः' रूप आदित्य में, 'महः' रूप ब्रह्म में। [इस प्रकार वह] स्वाराज्य (आत्मराज्य) प्राप्त कर लेता है, मन के पति को पा लेता है। तथा वाणी का पति, चक्षु का पति, श्रोत्र का पति, और विज्ञान का पति [हो जाता है]। इस से भी बड़ा हो जाता है—आकाश रूपी शरीर वाला, सत्यात्मा, प्राणाराम, मनआनन्द (जिस के लिए मन आनन्दस्वरूप है), शान्तिसम्पन्न, और अमर ब्रह्म। हे प्राचीनयोग्य (पुरातन योग में आस्था रखने वाले शिष्य)! तू इस प्रकार उपासना कर। (२)

सप्तमोऽनुवाक:

पृथिव्यन्तरिक्षं, द्यौर्, दिशो,ऽवान्तरदिशः; अग्निर्, वायुरादित्यश्, चन्द्रमा, नक्षत्राणि; आप, ओषधयो, वनस्पतय, आकाश, आत्मा—इत्यधिभूतम्। अथाध्यात्मम्—प्राणो, व्यानो, ऽपान,

---

१ तुलनीय ऐतरेयोपनिषद् ३.१२, १४।

उदानः, समानः; चक्षुः, श्रोत्रं, मनो, वाक्, त्वक्; चर्म, माꣳसꣳ, स्नावास्थि, मज्जा। एतदधिविधाय ऋषिरवोचत्—पाङ्क्तं वा इदꣳ सर्वम्, पाङ्क्तेनैव पाङ्क्तꣳ स्पृणोतीति ॥ १ ॥

अनु०—पृथिवी, अन्तरिक्ष, द्युलोक, दिशाएँ, और अवान्तर दिशाएँ [—यह लोकपाङ्क्त]; अग्नि, वायु, आदित्य, चन्द्रमा, और नक्षत्र [—यह देवतापाङ्क्त]; अप्तत्त्व, ओषधि, वनस्पति, आकाश, आत्मा [—यह भूतपाङ्क्त] —ये अधिभूतपाङ्क्त हैं। अब अध्यात्मपाङ्क्त बतलाते हैं—प्राण, व्यान, अपान, उदान, और समान [—यह वायुपाङ्क्त]; चक्षु, श्रोत्र, मन, वाक्, और त्वचा (—यह इन्द्रियपाङ्क्त); चर्म, मांस, स्नायु, अस्थि, और मज्जा) [—यह धातुपाङ्क्त]। इस प्रकार इस [पाङ्क्तोपासना का] विधान कर ऋषि ने कहा—'यह सब पाङ्क्त ही है;[1] इस पाङ्क्त से ही [उपासक] पाङ्क्त को प्राप्त करता है'। (१)[2]

अष्टमोऽनुवाकः

ओमिति ब्रह्म। ओमितीदꣳ सर्वम्। ओमित्येतदनुकृतिर् ह स्म वा अपि—'ओ श्रावय'—इत्याश्रावयन्ति, ओमिति सामानि गायन्ति, ओꣳ शोमिति शस्त्राणि शꣳसन्ति, ओमित्यध्वर्युः प्रतिगरं प्रतिगृणाति, ओमिति ब्रह्मा प्रसौति, ओमित्यग्निहोत्रमनुजानाति। ओमिति ब्राह्मणः प्रवक्ष्यन्नाह— 'ब्रह्मोपाप्नवानि'— इति। ब्रह्मैवोपाप्नोति ॥ १ ॥

अनु०—'ॐ' ब्रह्म है, 'ॐ' यह सब है, 'ॐ' यह अनुरूप क्रिया है। ऐसा भी निश्चय ही प्रसिद्ध है—[याज्ञिक लोग] 'ओ श्रावय' कह कर श्रवण कराते हैं, 'ॐ' कहकर सामगान करते हैं, 'ॐ शोम्' कहकर शस्त्रों (गीति-रहित ऋचाओं) का पाठ करते हैं, अध्वर्यु प्रतिगर (प्रत्येक कर्म) के प्रति 'ॐ' उच्चारण करता है, 'ॐ' कह कर ब्रह्मा अनुज्ञा देता है। 'ॐ' कह कर वह अग्निहोत्र की आज्ञा देता है, ब्राह्मण 'ॐ' उच्चारण करता हुआ कहता है—'मैं ब्रह्म (वेद अथवा परमात्मा) को प्राप्त करूँ।' वह ब्रह्म को ही प्राप्त कर लेता है। (१)

---

१ तुलनीय बृहदारण्यकोपनिषद् १.४.१७।
२ 'पाङ्क्त' का अर्थ है पञ्चक, पाँच की समष्टि।

नवमोऽनुवाकः

ऋतं च स्वाध्यायप्रवचने च, सत्यं च स्वाध्याय-प्रवचने च, तपश् च स्वाध्यायप्रवचने च, दमश् च स्वाध्यायप्रवचने च, शमश् च स्वाध्यायप्रवचने च, अग्नयश् च स्वाध्यावप्रवचने च, अग्निहोत्रं च स्वाध्यायप्रवचने च, अतिथयश् च स्वाध्यायप्रवचने च, मानुषं च स्वाध्यायप्रवचने च, प्रजा च स्वाध्यायप्रवचने च, प्रजनश् च स्वाध्यायप्रवचने च, प्रजातिश् च स्वाध्यायप्रवचने च। सत्यमिति सत्यवचा राथीतरः, तप इति तपोनित्यः पौरुशिष्टिः, स्वाध्यायप्रवचने एवेति नाको मौद्गल्यः। तद्धि तपस्, तद्धि तपः ॥ १ ॥

अनु०—ऋत तथा स्वाध्याय (शास्त्राध्ययन) और प्रवचन (अध्यापन अथवा वेदपाठ), सत्य तथा स्वाध्याय और प्रवचन, दम (इन्द्रियदमन) तथा स्वाध्याय और प्रवचन, शम (मनोनिग्रह) तथा स्वाध्याय और प्रवचन, अग्नि (अग्न्याधान) तथा स्वाध्याय और प्रवचन, अग्निहोत्र तथा स्वाध्याय और प्रवचन, अतिथि तथा स्वाध्याय और प्रवचन, मानुषकर्म (लोक-व्यवहार) तथा स्वाध्याय और प्रवचन, संतान तथा स्वाध्याय और प्रवचन, प्रजन (ऋतु-काल में भार्यागमन) तथा स्वाध्याय और प्रवचन, प्रजाति (पौत्रोत्पत्ति) तथा स्वाध्याय और प्रवचन। 'सत्य' ऐसा रथीतर का पुत्र सत्यवचा (सत्यभाषी) कहता है। 'तप', ऐसा नित्य तपोनिष्ठ पौरुशिष्टि कहता है। 'स्वाध्याय और प्रवचन', ऐसा मुद्गल का पुत्र नाक कहता है, क्योंकि वही तप है, वही तप है। (१)

दशमोऽनुवाकः

अहं वृक्षस्य रेरिवा, कीर्तिः पृष्ठं गिरेरिव। ऊर्ध्वपवित्रो, वाजिनीव स्वमृतमस्मि, द्रविणꣳ सवर्चसम्, सुमेधा अमृतोक्षितः[1]। इति त्रिशङ्कोर् वेदानुवचनम् ॥ १ ॥

---

१ 'अमृतोक्षितः'=अमृत से सिक्त अथवा भीगा हुआ।
'अमृतोऽक्षितः'=अमर और अव्यय।

अनु०—मैं वृक्ष का प्रेरक हूँ, [मेरी] कीर्ति पर्वतशिखर के समान है। उच्चता के कारण पवित्र, मैं अन्नवान् सूर्य में उत्तम अमृत के समान हूँ, प्रकाशमान धन, सुमेधा (सुन्दर मेधावाला), अमर और अक्षित (अव्यय अथवा अमृत से सिक्त)। यह त्रिशंकु [ऋषि] का वेदानुवचन (वेद-व्याख्यान) है। (१)

एकादशोऽनुवाकः

वेदमनूच्याचार्योऽन्तेवासिनमनुशास्ति—सत्यं वद, धर्मं चर, स्वाध्यायान् मा प्रमदः, आचार्याय प्रियं धनमाहृत्य प्रजातन्तुं मा व्यवच्छेत्सीः। सत्यान् न प्रमदितव्यम्, धर्मान् न प्रमदितव्यम्, कुशलान् न प्रमदितव्यम्, भूत्यै न प्रमदितव्यम्, स्वाध्यायप्रवचनाभ्यां न प्रमदितव्यम् ॥ १ ॥

अनु०—वेदाध्ययन कराकर आचार्य शिष्य को उपदेश देता है—सत्य बोल, धर्म का आचरण कर, स्वाध्याय से प्रमाद न कर, आचार्य के लिए अभीष्ट धन ला कर [स्त्री परिग्रह कर और] सन्तान-परम्परा का उच्छेद न कर। सत्य से प्रमाद नहीं करना चाहिए, धर्म से प्रमाद नहीं करना चाहिए, कुशल [आत्मरक्षा में उपयोगी कर्म] से प्रमाद नहीं करना चाहिए, ऐश्वर्य से प्रमाद नहीं करना चाहिए, स्वाध्याय और प्रवचन से प्रमाद नहीं करना चाहिए। (१)

देवपितृकार्याभ्यां न प्रमदितव्यम्। मातृदेवो भव, पितृदेवो भव, आचार्यदेवो भव, अतिथिदेवो भव। यान्यनवद्यानि कर्माणि तानि सेवितव्यानि, नो इतराणि। यान्यस्माकꣳ सुचरितानि तानि त्वयोपास्यानि, ॥ २ ॥

अनु०—देवकार्य और पितृकार्य से प्रमाद नहीं करना चाहिए। तू मातृदेव (माता ही जिस का देव है ऐसा) हो, पितृदेव हो, आचार्यदेव हो, अतिथिदेव हो। जो अनिन्द्य कर्म हैं उन्हीं का सेवन करना चाहिए, दूसरों का नहीं। हमारे (हम गुरुजनों के) जो शुभ आचरण हैं तुझे उन्हीं की उपासना (अनुसरण) करनी चाहिए। (२)

—नो इतराणि । ये के चास्मच्छ्रेयाꣳसो ब्राह्मणाः तेषां त्वयाऽऽसनेन प्रश्वसितव्यम् । श्रद्धया देयम्, अश्रद्धयाऽदेयम्, श्रिया देयम्, ह्रिया देयम्, भिया देयम्, संविदा देयम् । अथ यदि ते कर्मविचिकित्सा वा वृत्तिविचिकित्सा वा स्यात्, ।। ३ ।।

अनु०—दूसरे प्रकार के आचरण की नहीं । जो कोई हम से श्रेष्ठ ब्राह्मण हैं उन का आसन [आदि] के द्वारा तुझे आश्वासन (श्रमापहरण) करना चाहिए । श्रद्धापूर्वक देना चाहिए, अश्रद्धापूर्वक नहीं देना चाहिए, [अपने] ऐश्वर्य के अनुसार देना चाहिए । लज्जापूर्वक देना चाहिए, भय मानते हुए देना चाहिए, संवित् (सहानुभूति) से देना चाहिए । यदि तुझे कर्म या वृत्ति के विषय में सन्देह उपस्थित हो, (३)

—ये तत्र ब्राह्मणाः संमर्शिनः, युक्ता, आयुक्ताः, अलूक्षा, धर्मकामाः स्युः, यथा ते तत्र वर्तेरन् तथा तत्र वर्तेथाः । अथाभ्याख्यातेषु, ये तत्र ब्राह्मणाः संमर्शिनः, युक्ता, आयुक्ताः, अलूक्षा, धर्मकामाः स्युः, यथा ते तेषु वर्तेरन् तथा तेषु वर्तेथाः । एष आदेशः, एष उपदेशः, एषा वेदोपनिषत्, एतदनुशासनम् । एवमुपासितव्यम्, एवमु चैतदुपास्यम् ।। ४ ।।

अनु०—तो वहाँ जो विचारशील, योग्य, आयुक्त (कर्मपरायण), अरूक्ष (सरलमति) एवं धर्माभिलाषी ब्राह्मण हों, वहाँ वे जैसा बरतें वैसा ही वहाँ तू भी बरत । अब जिन के विषय में आरोप किया गया है उन के विषय में, वहाँ जो विचारशील, योग्य, आयुक्त, सरल-हृदय और धर्माभिलाषी ब्राह्मण हों, वे जैसा बरतें तू भी वैसा ही बरत । यह आदेश (विधि) है, यह उपदेश है, यह वेद का रहस्य है, यह अनुशासन है । तुझे इसी प्रकार उपासना करनी चाहिए—निश्चय ऐसी ही उपासना करनी चाहिए । (४)

द्वादशोऽनुवाकः

ॐ शं नो॑ मि॒त्रः, शं वरु॑णः, शं नो॑ भवत्वर्य॒मा,
शं न॒ इन्द्रो, बृहस्पति॒ः, शं नो॒ विष्णु॑रुरुक्र॒मः ।

शय्याति रुशन्तुविन् नन्दन वरांगियां
मय्यल्क्कणाळें विवाहं चेय्तु वाळुंकालं २४
अवळ् पेट्टहंपतियेन्नोरु नृपनुण्टा-
यवनुं कृतवीर्यतनयतन्ने वेट्टान् । २५
अवळ्क्कु नामं भानुमतियेन्नाकुन्नितु-
मवळ् पेट्टुळ्ळ सार्व्वभौमनां नरपति । २६
अवन्टे पत्नी वसुन्धर केकयपुत्रि-
यवळ् पेट्टुण्टायितु चोल्लेळुं जयसेनन् । २७
तल्पत्नि सुषुप्तयां विदर्भात्मजयल्लो
तल्पुत्रनरचिनन् तल्पत्नि मर्यादयुम् । २८
अवळ्पेट्टुळ्ळ महाभौमनां नरपति-
यवनेप्पोलें परिपालनं चेय्तीलारुम् । २९
चोल्लेळुं प्रसेनजिल्प्पुत्रियां सुमन्त्रये
नल्लनां महाभौमन् वेट्टितु विधियाले । ३०
नयशौर्योपायादि सकलगुणङ्ङळो-
टयुतनाय नृपनवळ् पेट्टुण्टायवन्नान् । ३१
तल्पत्नी पृथुश्रवाविन्मकळ् भासयल्लो
तल्पुत्रनक्रोधननाकिय महीपति । ३२
तल्पत्नी करण्टुवां कलिंगात्मजयल्लो
तल्पुत्रन् देवातिथि देवनायकसमन् । ३३

सुन लीजिए कि उसकी पत्नी का नाम था अश्मकी जिसने शय्याति नामक पुत्र को जन्म दिया। शय्याति ने रुशन्तु की वरांगी सुन्दरी कन्या के साथ विवाह किया। उसने राजा अहंपति को जन्म दिया जिसने कृतवीर्य की लड़की से विवाह किया। उसका नाम था भानुमती और उसने नरपति सार्वभौम को जन्म दिया। २६ उसकी पत्नी केकयपुत्री वसुन्धरा थी जिसका पुत्र था विख्यात जयसेन। उसकी पत्नी विदर्भ की कन्या सुषुप्ता और उसका पुत्र अरचिन जिसकी पत्नी थी मर्यादा। उसने भूपाल महाभौम को जन्म दिया जिसके समान किसी ने भी प्रजा का परिपालन नहीं किया। अच्छे राजा महाभौम ने प्रसिद्ध प्रसेनजित् की पुत्री सुमन्त्रा से विधिवत् विवाह किया। उसने राजा अयुत को जन्म दिया जो नय, शौर्य, उपाय आदि सभी गुणों से अलंकृत था। उसकी पत्नी थी पृथुश्रवा की पुत्री भासा जिसका पुत्र था महीपति अक्रोधन।

तल्पत्नी विदेहन्तन् पुत्रियां मर्यादयुं
तल्पुत्रन् नृपनंगभूपतिपुत्रनल्लो । ३४
तल्पत्नी वामदेवी तल्पुत्रनृक्षनृपन्
तल्पत्नी वललयां तक्षकपुत्रियल्लो । ३५
तल्पुत्रनन्तिनारन् तल्पत्नी सरस्वति
तल्पुत्रन् त्रस्नुनृपन् तल्पत्नी काळिन्दियुम् ३६
तल्पुत्रन् निलीलनुं तल्पत्नी रथन्तरी
तल्पुत्रन्मारञ्चुपेर् दुष्षन्तादिकळल्लो । ३७
विश्वामित्रन्टे मकळाकिय शकुन्तळ
दुष्षन्तमहीपतितन्नुटे कान्तयायाळ् । ३८
अवळ्पेट्टुण्टायतु भरतनेन्न नृपन्
अवन्टे पारम्पर्यं भारतमाकुन्नतुं ३९
काशेयियाय सर्व्वसेनियां सुनन्दये-
याशया विवाहं चेय्तीटिनान् भरतनुं । ४०
अवनु भूमन्युवेन्नुण्टायानोरु सुत-
नवनुं दाशार्हन्टे मकळां सुवर्ण्णये ४१
वेट्टितु सुहोत्रनेन्नुण्टायि तनयनुम् ।
वेट्टितु जयन्तियामैक्ष्वाकितन्नेयवर् ४२

उसकी पत्नी थी कलिंगराज की पुत्री करण्टु और उसका पुत्र था इन्द्र के तुल्य देवातिथि। उसकी पत्नी थी विदेहराज की पुत्री मर्यादा जिसका पुत्र राजा था और [वह था] अंगराजा का पुत्र। ३४ उसकी पत्नी वामदेवी जिसका पुत्र राजा ऋक्ष। उसकी पत्नी तक्षक की पुत्री वलला थी। उसका पुत्र था अन्तिनार जिसकी पत्नी थी सरस्वती। उसका पुत्र था नृप त्रस्नु जिसकी पत्नी थी कालिन्दी। उसका पुत्र था निलील जिसकी पत्नी थी रथन्तरी। उसके दुष्षन्त आदि पाँच पुत्र थे। विश्वामित्र की पुत्री शकुन्तला राजा दुष्षन्त की कान्ता (पत्नी) हुई। उसने भरत नामक भूपति को जन्म दिया जिसके वंश ही को भारत कहते हैं। भरत ने काशिराज सर्वसेन की पुत्री सुनन्दा के साथ प्रेम से विवाह किया। उसका सुमन्यु नामक पुत्र पैदा हुआ जिसने दाशार्ह की कन्या सुवर्णा से विवाह किया। उसका पुत्र हुआ सुहोत्र। उसने इक्ष्वाकु की पुत्री जयन्ती से विवाह किया जिसका एक पुत्र विख्यात और उत्तमकीर्ति

हस्तियां नरपति पुत्रनायुण्टाय्वन्नि-
तेत्रयु प्रसिद्धनायुत्तमकीर्तियोटे । ४३
हस्तितान् निर्म्मिच्चोरु पुरमायतुमूलं
हस्तिनपुरमेन्नु चोल्लुन्नितरिञ्ञालुम् । ४४
हस्तिनमे.नु चोल्वान् तोन्नियतेन्नाकिलुं
शास्त्रिकळ् चोल्लीटुन्नु हास्तिनमेन्नुतन्ने । ४५
हस्तियु त्रिगर्त्तन्टे मकळे वेट्टुकोण्टा-
ना स्त्रीरत्नत्तिनु पेरायतु यशोधर । ४६
अवळुं विकञ्जननेन्नोरुवनेप्पेटा-
ळवनु दाशार्हन्टे मकळां सुनन्दये ४७
वेट्टितन्नवळ् पेट्टिट्टुण्टायानजमीढन् ।
वेट्टितु नारिमारेक्कनिवोटञ्चुपेरे ४८
कैकेयी नाग पिन्ने गान्धारी विमलयु
माळ्कातै रागंतेटुमृक्षयु क्रमत्ताले । ४९
चतुर्व्विंशतिसुतशतमुण्टायितव–
नतिनाल् पल वंशमुण्टायि नृपन्मारुम् । ५०
अविटे वंशकर्त्तावायतु संवरण-
नवनुमादित्यन्टे मकळां तपतिये ५१
वसिष्ठनियोगत्ताल् वेट्टितु सुखत्तोटे
वसिक्कुं नाळिल् कुरुवाकिय सुतनुण्टाय् । ५२

वाला हस्तिन् हुआ । हस्तिन् द्वारा निर्मित होने के कारण जान लीजिए, उसकी राजधानी का हस्तिनपुर नाम हुआ । यद्यपि उसे हस्तिन कहना चाहिए तथापि शास्त्री लोग उसे हास्तिन कहते हैं । हस्ती ने त्रिगर्त की पुत्री को व्याहा । उस स्त्रीरत्न का नाम था यशोधरा । उसने विकञ्जन को जन्म दिया । उसने दाशार्ह की पुत्री सुनन्दा को ब्याहा जिसने अजमीढ को जन्म दिया । उसने प्रेम से पांच कन्याओं के साथ विवाह किया जिनके क्रम से ये नाम हैं—कैकेयी, नागा, गान्धारी, विमला और अक्षीण शोभावाली ऋक्षा । उनके चौबीस सौ पुत्र हुए । अतएव अनेक राजवंश भी हुए । ५० एक वंश का कर्ता था संवरण । उसने आदित्य (सूर्य) की लड़की तपती के साथ वसिष्ठ जी की आज्ञा से विवाह किया । जब वे सुख से रह रहे थे तब उनके कुरु नामक पुत्र पैदा हुआ । उस कुरु के ही कारण उसके वंश में उत्पन्न गौरव गुणवाले राजाओं को कौरव

गौरवगुणं तेट्टुं तल्क्कुलजातन्मारे-
क्कौरवन्मारेन्नवन्मूलमाय् चॊल्लीटुन्नु । ५३
दाशार्हन्तन्टॆ मकळाकिय शुभांगियॆ-
याशया वेट्टु कुरु तल्सुतन् विदूरथन् ५४
तल्पत्नी मागधन्तन् पुत्रियाममृताख्य
तल्पुत्रन् परीक्षित्तु तल्पत्नी सुरूपयुं ५५
तल्पुत्रन् भीमसेननाकिय नृपश्रेष्ठन्
तल्पत्नी सुकुमारियाय कैकेयियल्लो । ५६
अवळ्क्कु सत्यश्रवावॆन्नॊरु मकनुण्टा-
यवनॆ प्रतीपनॆन्नॆल्लारुं चॊल्लीटुन्नु । ५७
तल्पत्नी सुनन्दयां शिबिनन्दनयल्लो
तल्पुत्रन्माराय् मूवरुण्टायितग्निपोलॆ ५८
देवापि पुनरथ शन्तनु बाह्लीकनुम् ।
देवापि वनवासं तुटङ्ङि चॆरियन्ने । ५९
सोमवंशवुं मेलिलवनालुण्टाय्वरुम् ।
भूमियॆ रक्षिच्चतु शन्तनु महीपति । ६०
अवन्टॆ पत्नियायि वन्नितु भागीरथि-
यवळ् पॆट्टुळ्ळू देवव्रतनॆन्नरिञ्ञालुम् । ६१
कामिच्चु वलञ्ञितु शन्तनु काळियॆन्न
कामिनियाय दाशनारियॆक्कण्टमूलम् । ६२

कहते हैं। कुरु ने दाशार्ह की लड़की शुभांगी को प्रेम से ब्याहा। उसका पुत्र था विदूरथ। उसकी पत्नी हुई मागध की लड़की अमृता उसका पुत्र हुआ परीक्षित् जिसकी पत्नी थी सुरूपा। उसका पुत्र हुआ नृपवर भीमसेन जिसकी पत्नी थी सुकुमारी कैकेयी। उसका सत्यश्रवा नाम पुत्र पैदा हुआ जिसे सब लोग प्रतीप कहते हैं। ५७ शिबि की पुत्री सुनन्दा उसकी पत्नी थी। उसके तीन पुत्र हुए अग्निसमान—देवापि, शन्तनु और बाल्हीक। देवापि ने बाल्यावस्था में ही वनवास प्रारंभ किया। आगे चलकर उसी से चन्द्रवंश भी प्रारंभ होगा। राजा शन्तनु ने पृथ्वी का परिपालन किया। भागीरथी उसकी पत्नी हुई जिसने देवव्रत को जन्म दिया। शन्तनु काली नामक कामिनी दास कन्या (मल्लाह की पुत्री) को देखकर काम से परेशान हुआ। यही कारण है कि देवव्रत ने राज्य को त्याग दिया। फिर उस बुद्धिशाली ने ब्रह्मचर्य को

अतिनाल् देवव्रतन् राज्यवुमुपेक्षिच्चु
मतिमान् ब्रह्मचर्यं प्रापिच्चु कैवर्त्तनो- ६३
टवळे वाङ्ङिक्कत्तन्टे तातनु नल्कीटिनान् ।
अवने भीष्मरेन्नु चॊल्लुन्नु महाजनम् । ६४
अवळे वेळ्क्कुं मुम्पे पुल्किनान् पराशर-
नवळिल् वेदव्यासनुण्टायितन्नु तन्ने । ६५
पिन्ने शन्तनुजन्मारायिवळ् पॆट्टुण्टायार्
मन्नवन् चित्रांगदन् विचित्रवीर्यन्तानुम् । ६६
शन्तनुविन्टे कालं कळिञ्ञोरनन्तरं
शन्तनुपुत्रन् चित्रांगदनाय्वन्नु राज्यम् । ६७
उग्रनां चित्रांगदनाकिय गन्धर्वेन्द्रन्
निग्रहिच्चितु चित्रांगदनां नृपेन्द्रने । ६८
सत्वरं बालकनां विचित्रवीर्यन्तन्ने
पृथ्वीवल्लभनाक्कि वाळिच्चु गंगादत्तन् , ६९
कम्बुकण्ठिकळाय काशिराजात्मजमा-
रंबिकतानुमंबालिकयुमवन्तन्टे ७०
वल्लभमाराय्वन्नु मरिच्चु नृपतियुम् ।
अल्लल् पूण्टितु राज्यवासिकळतु मूलं । ७१
सन्ततियिल्लाञ्ञाशु दुःखिच्चु सत्यवति
चिन्तिच्चु वेदव्यासनाकिय मुनीन्द्रने । ७२

अपना कर कैवर्त (मल्लाह) को समझाकर उसकी पुत्री लेकर अपने पिता को दे दिया। इसीलिए महाजन उसको भीष्म कहते हैं। ६४ काली के विवाह के पहले पराशर ने उससे प्रेम किया था। और उससे वेद-व्यासजी पैदा हुए। विवाह के बाद उसके शन्तनु से दो पुत्र पैदा हुए— राजा चित्रांगद और राजा विचित्रवीर्य। शन्तनु का काल समाप्त होने पर राज्य उसके पुत्र चित्रांगद के हाथ में आया। उग्र प्रकृति के चित्रांगद नामक गन्धर्वेन्द्र ने राजा चित्रांगद का निग्रह किया। तुरन्त ही गंगादत्त (भीष्म) ने बालक विचित्रवीर्य को पृथ्वीपति बनाकर उससे राज कराया। काशिराज की सुन्दरी पुत्रियां अम्बिका और अम्बालिका उनकी पत्नियां हुईं। तदनन्तर राजा की मृत्यु हुई। जिसके फलस्वरूप राज्य के निवासी बहुत दुःखित हुए। ७१ (विचित्रवीर्य के सन्तान न होने के कारण) सत्यवती दुःखित हुई और उन्होंने मुनीन्द्र वेदव्यास का ध्यान

माताविन्मतमरिञ्ञीटिन मुनिवरन्
भ्राताविन् कळत्रत्तिल् सन्ततियुण्टाक्किनान् । ७३
चौल्लेंळुं धृतराष्ट्रनंबिक पॆट्टुण्टायि
नल्लयामंबालिकय्क्कुण्टायि पाण्डुतानुम् । ७४
ज्ञानियां विदुंररुमुण्टायि शूद्रितन्निल्
सानन्दं धार्त्तराष्ट्रन्माराय् नूट्टॊन्नुण्टायि ७५
पाण्डुविनञ्चु मक्कळ् धर्म्मजादिकळल्लो
पाण्डवन्मारैवर्क्कुं पत्नि पांचालितानुं । ७६
अवळ् पॆट्टञ्चु मक्कळैवर्क्कुं कूटियुण्टा-
यवर्कळुटॆ नामं वॆव्वेरॆ चौल्लामल्लो । ७७
प्रतिविन्ध्यनुं सुतसोमनुं श्रुतसेनन्
मतिमान् शतानीकन् श्रुतकर्म्मावुतानुं । ७८
पिन्नेयुं वेरॆयौन्नु वेट्टितु युधिष्ठिरन्
कन्यक शैब्यपुत्रि देवकियॆन्नवळॆ । ७९
यौधेयनॆन्न मकनुण्टायानवळ् पॆट्टु ।
वातजन् वाराणसि पुक्कु काशीशन्तन्टॆ ८०
मकळां बलधरतन्नेयुं वेट्टु पिन्नॆ
मकनाय् शर्म्मत्रातनुण्टायानवळ् पॆट्टु । ८१
फल्गुनन् द्वारवतिपुक्कुटन् सुभद्रयॆ-
क्कैक्कॉण्टु पोन्नानवळ्पॆट्टभिमन्युवुण्टाय् । ८२

किया। मुनिवर ने माता का उद्देश्य समझकर अपने भाई के कलत्र (स्त्रियों) में सन्तति पैदा की। अंबिका ने विख्यात धृतराष्ट्र को जन्म दिया। साध्वी अंबालिका का पाण्डु नामक पुत्र हुआ। ज्ञानी विदुर भी शूद्री में पैदा हुआ। धृतराष्ट्र के एक सौ एक पुत्र सुख से हुए और पाण्डु के धर्मपुत्र आदि पांच पुत्र हुए। उन पांचों पाण्डवों की पत्नी पांचाली थी। उसने पांच पुत्रों को जन्म दिया जो पांचों (पतियों) के थे। उनके नाम सुना रहा हूँ। ७७ प्रतिविन्ध्य, सुतसोम, श्रुतसेन बुद्धिशाली शतानीक और पांचवां श्रुतकर्मा। युधिष्ठिर (धर्मपुत्र) ने शैब्य की पुत्री देविका के साथ एक और विवाह किया। उसने यौधेय नामक पुत्र को जन्म दिया। वातज (भीमसेन) वाराणसी गया और उसने काशिराज की पुत्री बलधरा से शादी की। उसने शर्मत्रात नामक पुत्र को जन्म दिया। फलगुन (अर्जुन) ने द्वारवती जाकर सुभद्रा से

नकुलन् वेट्टु पिन्ने रेणुकयेन्नु पेरां
मकरनेत्रयाय चेदीशपुत्रितन्ने । ८३
पुत्रनाय् निरमित्रनेन्नवळ्क्कुण्टोय्वन्नु ।
मद्रेशसुतात्मजनाकिय सहदेवन् ८४
मद्रेशन्तन्टे मकळ् विजयतन्ने वेट्टान् ।
पुत्रनाय् सुहोत्रनेन्नुण्टायानवळ्पेट्टु । ८५
भीमसेननु मुन्नं हिडिम्बीतनयनाय्
भीमनां घटोत्क्कचनुण्टायानवळ् पेट्टु । ८६
अर्ज्जुनन् गंगास्नानं चेय्तनेरत्तु तत्र
विज्वरमुलूपियिलुण्टायानिरावानुम् । ८७
पिन्नेयुं मणलूरपतिनन्दनयाय
कन्यक चित्रांगदा फल्गुनभार्य्ययायाळ् । ८८
सुभ्रुवामवळुमाय् विभ्रमं कलर्न्नोळु-
मभ्रवाहनसुतनविटेयिरुन्ननाळ् ८९
अद्भुतगात्रि पेट्टिट्टर्भकनुण्टाय्वन्नु ।
बभ्रुवाहननेन्नु सत्पुमानवनेटम् । ९०
इङ्ङने पतिम्मून्नु नन्दनन्मारुण्टायि
मंगलन्मारायुळ्ळ पाण्डवन्मार्क्कुं मुन्नम् । ९१
अन्नतिलभिमन्यु वेट्टितु विराटन्टे
कन्यकयाय् मेवीटुमुत्तरयेन्नवळे । ९२

विवाह किया जिससे अभिमन्यु पैदा हुआ। नकुल ने चेदीश की पुत्री मकर (मछली) के समान आंखवाली रेणुका से विवाह किया। उसका निरमित्र नामक पुत्र पैदा हुआ। माद्री के पुत्र सहदेव ने मद्रेश की कन्या विजया से विवाह किया। उसने सुहोत्र नामक पुत्र को जन्म दिया। भीमसेन को पहले ही हिडिम्बी से घटोत्कच नामक भीम (भयानक) पुत्र पैदा हो गया था। ८६ जब अर्जुन गंगा स्नान कर रहा था उन दिनों उसके उलूपी द्वारा इरावान् नामक पुत्र हुआ। फिर मणलूर के राजा की पुत्री चित्रांगदा फल्गुन की पत्नी हुई। जब उस सुन्दरी के साथ अभ्रवाहनसुत (अर्जुन) सुख से रह रहे थे तब उस अद्भुतगात्री ने एक बालक पैदा किया जो बभ्रुवाहन नामक साधु पुरुष था। इस प्रकार पुरा (प्राचीन काल में) मंगलशाली पाण्डवों के तेरह पुत्र पैदा हुए। उनमें से अभिमन्यु ने विराट की पुत्री उत्तरा से विवाह किया। उसी से

अवळिलुण्टायितु निन् पिता परीक्षित्तु-
मवनीपति विष्णुरातनां विष्णुभक्तन् । ९३
अश्वत्थामाविन् वाणदग्धनां कुमारनें-
यच्युतन् चक्रंकोंण्टु जीविप्पिच्चतुमेंटो । ९४
तन्महिमानमेंल्लां परञ्ञालोंटुङ्ङुमो
निर्म्मलनाय भवानवन्टें मकनल्लो । ९५
निनक्कु शतानीकन् शङ्कुवेंन्नतुं पेराय्
निनक्कु समन्माराय् रण्टु पुत्रन्मारुण्टाम् । ९६
निन्नुटें शतानीकन् तन्नुटें पुत्रनायि
पिन्नेंयुमश्वमेधदत्तनेंन्नुण्टाय्वरुम् । ९७
पूरुविन् वंशमुटनविटेंयोंटुङ्ङीटुं
पूर्व्वन्मारुटें कथ परञ्ञालोंटुङ्ङुमो । ९८
पाण्डित्यमिल्ल परञ्ञीटुवान् केट्टुकोंळ्क
पाण्डवन्मार्क्कु कालं कळिञ्ञप्रकारवुम् । ९९
अत्तल् पूण्टच्छन् मरिच्चटवितन्निल्निन्नु
हस्तिनपुरत्तिङ्कल् चेंन्नवर् पुक्ककालम् । १००
पतिनाऱब्दं धर्म्मपुत्रर्क्कु भीमनन्नु
पतिनञ्चायि पतिन्नालायि फल्गुननं १०१

तुम्हारे पिता राजा विष्णुरात (विष्णु का दिया हुआ विष्णुभक्त) परीक्षित् पैदा हुए। जिस बालक को अश्वत्थामा ने अपने बाण से जला दिया था उसे अच्युत (विष्णु) ने अपने चक्र से फिर जिलाया। कहते कहते इस महिमा का अन्त न होगा। अब निर्मल (चरित्रवाले) तुम उनके पुत्र हो। ९५ तुम्हारे शतानीक और शङ्कु नामक तुम्हारे ही तुल्य दो पुत्र होंगे। और तुम्हारे पुत्र शतानीक का अश्वमेधदत्त नामक पुत्र होगा। वहीं तक पूरु का वंश भी समाप्त हो जायगा। पूर्वजों की कथा का वर्णन कब समाप्त हो सकता है?। मुझमें सुनाने के लिए पाण्डित्य नहीं है। फिर भी पाण्डवों का काल कैसे समाप्त हुआ—यह सुन लीजिए। जहाँ पिता (पाण्डु) की दुःख के साथ मृत्यु हुई उस बन से जब सब लोग हस्तिनपुर लौटे तब धर्मपुत्र (युधिष्ठिर) की आयु सोलह वर्ष की थी, भीमसेन की पन्द्रह वर्ष की, फल्गुन की चौदह वर्ष की और माद्री के पुत्रों की तेरह वर्ष की थी।

एतेक कहिल यदि रावण-नन्दन ❋ युद्ध करिवारे आज्ञा दिल दशानन
राज-आभरण दिल देवेर वाञ्छित ❋ संग्रामेते साजिल कुमार इन्द्रजित्
बापेर दुलाल सेइ पुत्र मेघनाद ❋ सर्व्वांग भरिया परे राजार प्रसाद
अंगूले अंगुरी परे, बाहुते कंकण ❋ सर्व्वांग भूषित करे राज-आभरण
वीर-परिधान परे नेतेर जे फालि ❋ तिनशत फेर दिया बान्धिल काँकालि
सर्व्वांगे लेपन करे चन्दनेर सार ❋ गलार उपरे तुलि दिल रत्नहार
स्वर्ण-नवगुण परे, परे स्वर्णपाटा ❋ भुवन जिनिया छटा कपालेर फोंटा
सोनार दापनि परे अष्ट-अंग वहि ❋ एमन सुन्दर रूप त्रिभुवने नाहि
राज-आभरण परे देवेर वाञ्छित ❋ संग्रामेते साजिल कुमार इन्द्रजित्
घन-घन सारथिरे करिछे मेलानि ❋ शीघ्र कर रथसज्जा, डाकिछे आपनि
सारथि आनिल रथ संग्राम-कारण ❋ मनोहर-वेशे रथ करिल साजन
करिलेक रथसज्जा रथेर सारथि ❋ माणिक्य प्रवाल कत बसाइल तथि
कनक-रचित रथ मुक्तार सञ्चारे ❋ चारिदिके स्वर्ण-वृक्ष फल-फूल धरे
चन्द्र-सूर्य-तेज जिनि रथेर किरण ❋ प्रवाल-मुकुता कत रथेर साजन
पार्व्वतीय घोड़ा, गले रत्नेर बिम्बकि ❋ तेइश अक्षोहिणी ठाट युद्धेर धानुकी

कौन सी बड़ी बात है, अभी जाकर श्रीराम और लक्ष्मण को बाँधकर लाता हूँ ॥ १६६ ॥

रावण-नन्दन मेघनाद ने जब इतना कहा तो राजा दशानन ने उसको युद्ध में जाने की आज्ञा दे दी। देवताओं द्वारा वांछित राज-आभरण उसको दिया गया और कुमार इन्द्रजीत ने अपने को रण के लिए सुसज्जित किया। पिता के लाडले मेघनाद ने राजा से प्राप्त प्रसाद को धारण किया। अंगुलियों में अँगूठियाँ और बाहु में कंकण धारण कर राज-आभरण से सारे अंग को सजाया। उसने अपने शरीर पर वीरोचित नेत-वस्त्र धारण किया और कमर में तीन सौ लपेट (फेंट) बांधे। सारे शरीर पर चन्दन का प्रलेप चढ़ाकर गले में रत्नहार पहन लिया। नौ गुना स्वर्णालंकार पहनने के उपरान्त सुवर्ण-कवच भी पहन लिया। माथे पर तिलक की शोभा का क्या कहना है। आठों अंगों पर उसने सोने का दर्पण पहन लिया। ऐसा सुन्दर रूप त्रिभुवन में नहीं है। देव-वांछित आभरणों से सज्जित हो कुमार इन्द्रजीत रण के लिए तैयार हो गया। सारथी को बार-बार स्वयं बुला कर कहने लगा, तुरन्त रथसज्जा कर डालो। तब सारथी युद्ध के लिए मनोहर वेश में रथ को सुसज्जित कर आ पहुँचा। रथ पर कितने ही माणिक और मूंगे जड़े हुए थे। उस स्वर्ण-निर्मित रथ पर मोतियों की सजावट थी उसके चारों ओर फूल और फलों से सुशोभित स्वर्ण-वृक्ष थे। रथ में पार्वतीय घोड़ा जुता था जिसके गले में रत्न-निर्मित पदक लटक रहा था। युद्ध में तेईस अक्षौहिणी धनुषधारी सैनिक चले। उस सेना

कटकेर पदभरे काँपिछे मेदिनी ❋ इन्द्रजितेर निज-वाद्य तिन-अक्षौहिणी
काड़ा पड़ा ढाक ढोल तबोल टिकारा ❋ तूरी भेरी जगझम्प वीणा सप्तस्वरा
काँशी बाँशी राक्षसी-ढाकेर परिपाटी ❋ दामामा-दगड़े पड़े लक्ष-लक्ष काठि
ढेमचा खेमचा बाजे, बाजे करताल ❋ ठमक खमक तासा शुनिते रसाल
बाजे शिङ्गा डमरु तम्बूरा जयढाक ❋ झाँझरि मोचङ्ग बाजे, मधुर पिनाक
शंख बाजे, घण्टा बाजे, मन्दिरा मृदंग ❋ रणशिङ्गा खञ्जनी ओ गभीर भोरंग
कोटि-कोटि जयढाक घोर-रवे बाजे ❋ कोटि-कोटि जगझम्प महाशब्दे गाजे
बेहाला मन्दिरा आर वीणा-आदि कत ❋ कहिते ना पारा जाय, तार संख्या यत
असंख्य सेतार बाजे, कोटि-कोटि डम्फ ❋ वाद्यभाण्ड-घोर-शब्दे त्रिभुवन-कम्प
तिनकोटि राक्षसेते बाजाय मादल ❋ प्रलयेर काले येन उठिल बादल२००
कटक साजाये वीर जुझिवारे नड़े ❋ मन्दोदरी जननी तखन मने पड़े
माये ना कहिया यदि युद्धे यात्रा करि ❋ अन्नजल त्यजिबेन माता मन्दोदरी
भक्तिभरे जननीरे प्रणाम करिये ❋ तबे जाब रणस्थले मातृ-आज्ञा लये
एत भावि इन्द्रजित् सभक्ति-अन्तरे ❋ मातार निकटे वीर चलिल सत्वरे
सैन्य-सेनापति यत द्वारेते राखिया ❋ जननीर अन्तःपुरे प्रवेशिल गिया

के पदचाप से पृथ्वी थर्राने लगी। इन्द्रजीत का निजी वाद्य-संभार (बाजों-गाजों का समूह) तीन अक्षौहिणी था। ढाक, ढोल, तबला, चिकारा, तुरही, सींगी, जगझम्प, सप्तस्वरा वीणा, झाँझ, बाँसुरी और धौंसा इन सबके समाहार का क्या कहना। नगाड़ों और डंकों पर लाख-लाख संटियाँ पड़ने लगीं। करताल और मंजीरे बजने लगे। ताशा की आवाज भी बड़ी मधुर लगने लगी। सींगी, डम्बरू, तम्बूरा और जयढाक; झाँझ, झाँझरी और मधुर तूती बजने लगे। शंख, घंटा, मन्दिरा, मृदंग, रणसींगी, खंजड़ी और गंभीर-नाद वाला भोरंग बजने लगा। करोड़ों जय-डंके महानाद से बजने लगे और करोड़ों जगझम्प महाशब्द से गरजने लगे। बेला, मन्दिरा, और वीणाओं की संख्या गिनती से परे है। असंख्य सितार और कोटि-कोटि डफ भी बजने लगे। वाद्यों के घनघोर शब्द से तीनों लोक थरथराने लगे। तीन करोड़ राक्षस इस प्रकार मादल बजाने लगे मानों प्रलय के समय बादल घिर आए हों ॥ २०० ॥

जब कटक सुसज्जित कर वीर मेघनाद युद्ध करने के लिए चल पड़ा तो उसे जननी मन्दोदरी याद आ गयी। उसने सोचा यदि मैं माँ से बिना कहे युद्ध के लिए प्रयाण करूँगा तो माता मन्दोदरी अन्नजल त्याग देंगी। मैं जननी को भक्ति से प्रणाम कर उनकी आज्ञा लेने के उपरान्त रणभूमि में जाऊँगा। इस प्रकार सोच कर वीर इन्द्रजीत भक्तिपूर्ण हृदय से माता के निकट गया। समस्त सेना और सेनापतियों को द्वार पर छोड़ कर वह

सुवर्णेर खाट-पाट, स्वर्णमयी पुरी ❋ से पुरीर तुल्य शोभा भुवने ना हेरि
दश-हाजार सतिनी-वेष्ठिता मन्दोदरी ❋ ताहार सुखेर सीमा कहिते ना पारि
नारायण-तैले ज्वले तिनलक्ष बाति ❋ मन्दोदरी पूजा करे महेश-पार्व्वती
झिउड़ी बहुड़ी आर कतशत नारी ❋ दश-हाजार सतिनी-सहित मन्दोदरी
न-हाजार नारी मेघनादेर गृहिणी ❋ दुइलक्ष आर यत पुत्रेर रमणी
आर यत रमणी लंकार एकत्तर ❋ शिव-दुर्गा पूजि मागे रण-जयवर२०१
हेनकाले इन्द्रजित् हलो उपनीत ❋ पूर्व्वाचल हैते येन आदित्य उदित
किरणे अरुण जेन, रूपे चन्द्रकला ❋ ताहारे देखिते यत स्त्रीलोकेर मेला
प्रणमिल मेघनाद मायेर चरणे ❋ मन्दोदरी पुलकित चाहि पुत्र पाने
आस्ते-व्यस्ते उठि राणी धरि दुइहाते ❋ लक्ष-लक्ष चुम्ब दिल मेघनाद-माथे
मन्दोदरी बले आमि, पूजि गंगाधरे ❋ सेइ पुण्यफले पुत्र, पेयेछि तोमारे
तोमा पुत्रे गर्भे धरि हइ पाटराणी ❋ चेड़ी ह'ये खाटे दस-हाजार सतिनी
श्रीराम मनुष्य नहे, बुझि अभिप्राय ❋ फिरे ना आइसे, रणे जेइ वीर जाय
परदार महापाप करे तोर बाप ❋ सेइ अपराधे पाइ एत मनस्ताप

जननी के अन्तःपुर में गया। सुवर्ण का बना अन्तःपुर जिसकी शोभा की तुलना संसार में नहीं है। वहाँ के पलंग आदि सभी वस्तुएँ स्वर्ण की बनी हुई हैं। दस हजार सौतों से घिरी मन्दोदरी के सुख की कोई सीमा नहीं। वहाँ तीन लाख बत्तियों में नारायण-तैल जल रहा है और मन्दोदरी महेश-पार्वती की पूजा कर रही है। दस हजार सौतों के अतिरिक्त सैकड़ों बहू-बेटियाँ और अन्य नारियाँ भी हैं। नौ हजार नारियाँ तो मेघनाद की गृहिणियाँ हैं और बाकी दो लाख नारियाँ अन्यान्य पुत्रों की पत्नियाँ हैं। लंका की और सारी रमणियाँ एकत्र होकर शिव-दुर्गा की पूजा कर युद्ध-विजय का वरदान माँग रही हैं ॥ २०१ ॥

ऐसे ही समय इन्द्रजीत वहाँ आ उपस्थित हुआ मानों पूर्वाचल से आदित्य का उदय हुआ। उसकी शोभा अरुण-किरण जैसी है और उसका चन्द्रकला जैसा सौन्दर्य निरखने के लिए नारियों का मेला लग गया। मेघनाद ने माता के चरणों में प्रणाम किया। मन्दोदरी ने पुलकित नेत्रों से पुत्र की ओर देखा। अस्त-व्यस्त हो रानी ने उसे बाहों में भर लिया और मेघनाद के माथे पर लाख-लाख चुम्बन किया। मन्दोदरी ने कहा, हे पुत्र मैं गंगाधर शंकर की पूजा करती हूँ और उसी पुण्य के कारण मुझे तुम जैसा पुत्र प्राप्त हुआ है। तुमको गर्भ में धारण करते ही मैं पटरानी बनी और दस हजार सौतें मेरी दासी बनकर सेवा करने लगीं। मैं यह समझती हूँ कि श्रीराम कोई मनुष्य नहीं हैं—जो भी युद्ध में जाता है लौट कर नहीं आता। तेरे बाप ने पराई स्त्री को ग्रहण कर महापाप किया है और उसी अपराध के कारण उसे इतना मनोकष्ट

रामेर सीता रामे देह, करह पिरीति ❋ मजिल कनक-लंका नाहि अव्याहति
वानरे पोड़ाये लंका कैल छारखार ❋ श्रीराम मनुष्य नहे, विष्णु-अवतार
विभीषण खुड़ा तव गुणेर सागर ❋ तारे लाथि मारे राजा सभार भितर
आनिला रामेर सीता करिया हरण ❋ अन्यके रणेते केन पाठाय एखन
तोमारे कपाट दिया राखिब गृहेते ❋ नर-वानरेर युद्धे ना दिब जाइते
सीता फिरे दिन राजा, शुनून मन्त्रणा ❋ आजि हैते युद्ध नाइ, करह घोषणार
मन्दोदरी-कथा शुनि मेघनाद हासे ❋ मायेरे प्रबोध देय अशेष-विशेषे
जगतेर कर्ता माता, हय मोर बाप ❋ अष्टलोकपाले जिनि दुर्ज्जय-प्रताप
एतेक वैभव भोग कर कार तेजे ❋ हेनजने निन्दा कर स्त्रीगण-समाजे
बामाजाति हओ तुमि, तेमति वचन ❋ स्वामिनिन्दा महापाप कर कि कारण
अतुल ऐश्वर्य भोग करेन इन्द्राणी ❋ शची जिने शत गुणे तुमि ठाकुराणी
स्वर्ग-मर्त्य-पातालेते यत देवगण ❋ परदार नाहि करे कोन महाजन
सुरपति इन्द्र देख देवतार सार ❋ गुरुपत्नी-हरणे कि हैल देख तार
गौतमेर शिष्य ह'ये इन्द्र देवराज ❋ करिल कुत्सित कर्म, ना भाविल लाज

मिल रहा है। तुम राम की सीता को दे दो और उनसे मित्रता कर लो। कनक-लंका नष्ट-भ्रष्ट हो रही है, इसे बचाने का कोई उपाय नहीं। बन्दरों ने सोने की लंका को जलाकर नष्ट-भ्रष्ट कर दिया है। श्रीराम कोई मनुष्य नहीं है, वह विष्णु का अवतार हैं। तुम्हारे चाचा विभीषण गुणों की निधि हैं, उनको राजा ने भरी-सभा में पदाघात किया। स्वयं तो राम की सीता को हर लाया, अब दूसरों को क्यों रण में भेजने लगा। तुमको किवाड़ बन्द कर घर में रखूँगी--नर-वानर के युद्ध में नहीं जाने दूँगी। राजा सीता को लौटा दें—यह परामर्श सुनें। यह घोषणा कर दो कि आज से कोई युद्ध नहीं रहा॥ २०२॥

मन्दोदरी के ये वचन सुनकर मेघनाद हँसने लगा और माता को विभिन्न प्रकार से समझाने-बुझाने लगा। हे मा, मेरे पिता संसार के प्रभु हैं, वे अष्ट-लोकपालों को हरा कर दुर्जय-प्रतापी बन गये हैं। किसके रोब-दाब के कारण तुम इतने वैभव को भोग रही हो। ऐसे व्यक्ति की निन्दा तुम नारियों के समाज में कर रही हो। तुम नारी जाति की हो इस कारण तुम्हारे वाक्य भी वैसे ही हैं। पतिनिन्दा महापाप है—क्यों ऐसा कर रही हो? इन्द्राणी अतुल ऐश्वर्य का भोग करती है। तुम उस शचीदेवी (इन्द्राणी) से सौ गुना अधिक अधिकार-सम्पन्न हो। स्वर्ग-मर्त्य-पाताल में जितने देवता हैं उनमें कौन ऐसा है जिसने पराई स्त्री को न रखा हो। देवताओं में श्रेष्ठ सुरपति इन्द्र को ही देख लो न—उसने गुरुपत्नी का हरण क्यों कर किया? गौतम का शिष्य होकर भी देवराज इन्द्र को ऐसा कुत्सित कार्य करते लाज न आई।

सबे बले, देवराज देवेर उत्तम ❋ जाहार कारणे नारी त्यजिला गौतम
ब्राह्मणेर राजा चन्द्र जगते बाखानि ❋ चन्द्र केन हरिलेन गुरुर गृहिणी
पड़िवारे गेल बृहस्पतिर आलय ❋ तथा हरे गुरुपत्नी, मिथ्या ताहा नय
तबु चन्द्र-रूपेते जगत् आलो करे ❋ पुरुषे एमन पाप केवा नाहि करे
जगतेर श्रेष्ठ एक देवता पवन ❋ सेओ करेछिल देख वानरी गमन
कोन जन नाहि करे हेन कदाचार ❋ मिछे केन देह दोष पिताके आमार
राम से मनुष्यजाति, नहे त गर्व्वित ❋ आनिल ताहार नारी, किवा अनुचित
खर-दूषण मारि राम हइयाछे बैरी ❋ भाल करिलेन पिता आनि तार नारी३
एत कथा माये यदि दिल पातियान ❋ दुइलक्ष राण्डी तबे दिलेक योगानि
कहिछे सकल राण्डी करि जोड़हात ❋ निवेदन करि, शुन राक्षसेर नाथ
युद्ध करि मरिल मोदेर स्वामिगण ❋ शोकेते आकुल मोरा तादेर कारण
गगने जखन हय द्विप्रहर बेला ❋ पड़े जाय राण्डीदेर हविष्येर मेला
लंकापुरे घरे-घरे ज्वलये तियड़ि ❋ कहिते विदरे बुक, नित्य फेलि हाँड़ि
न-हाजार नारी तव परम सुन्दरी ❋ करुक तोमार सेवा यत बहुयारी
सकलेरे तुष्ट राखि जाह रणस्थले ❋ नर ओ वानर जिनि आइस कुशले

सब लोग कहते हैं कि देवताओं में सर्वोत्तम देवराज इन्द्र हैं जिनके कारण गौतम को अपनी नारी को त्यागना पड़ा। संसार में प्रसिद्ध है कि चन्द्र ब्राह्मणों का राजा है—उसने क्यों अपने गुरु की पत्नी का हरण किया। वृहस्पति के घर वह पाठाभ्यास के निमित्त गया और अपनी गुरुपत्नी का हरण कर लाया—यह कोई झूठी बात नहीं। फिर भी वह चन्द्र के रूप में संसार भर को प्रकाश देता है। पुरुषों में कौन है जो ऐसा पाप नहीं करता। संसार में श्रेष्ठ माना जाने वाला पवन भी वानरी-गमन कर चुका है। कौन ऐसा है जो इस प्रकार का दुराचार नहीं करता ? फिर नाहक क्यों मेरे पिता को दोषी बनाती हो। राम तो मनुष्य जाति का है कोई पूज्य भी नहीं, तो उसकी नारी लाकर पिता ने कौन सा अनुचित कार्य किया। खर-दूषण का वध कर राम हमारा वैरी बन गया। उनकी नारी लाकर पिता ने अच्छा ही काम किया है ॥ २०३ ॥

इतनी बातों से जब उसने माँ के मन को समझाया तो दो लाख विधवाओं ने कहना शुरु कर दिया। सभी विधवाओं ने हाथ जोड़ कर कहा, हे राक्षसों के नाथ, हम लोगों का निवेदन सुनो, हमारे पतियों ने युद्ध कर प्राण दिये, उनके कारण हम शोकाकुल हैं। जब दिन में दोपहर हो जाता है तो सारी विधवाएँ हविष्य-अन्न पकाने बैठ जाती हैं। लंकानगरी के घर-घर में चूल्हा जलने लगता है—कहने में दिल फटा जाता है कि हम लोग नित-प्रतिदिन अपनी हाँड़ी फेंक देती हैं। तुम्हारी नौ हजार सुन्दरी नारियाँ हैं वे तुम्हारी जी भर कर सेवा करें। सभी को सन्तुष्ट कर तुम रणभूमि में जाओ और

शुभयोगे यात्रा कैले नाहि पराजय ❋ संसारेते केह येन राण्डी नाहि हय
राण्डीर असाध्य कर्म्म नाहि त्रिभुवने ❋ आकाशे पातये फाँद स्वभावेर गुणे
बुझिया देखह मने राक्षसेर पति ❋ एक राँड़े मजाइल लंकार बसति
शूर्पणखा राण्डी देख हय तव पिसी ❋ राक्षसी हइया से मानुषे अभिलाषी
वयसेर संख्या नाहि, पाकाइल केश ❋ रामेरे भुलाते धरे मनोहर वेश
राण्डीर असाध्य कर्म्म नाहिक संसारे ❋ संग्रामेते जाह बाछा, शुभयात्रा क'रे
पड़िल रामेर युद्धे बड़-बड़ वीर ❋ बन्धु-बान्धवेर शोके दहिछे शरीर
हर-पार्व्वतीर प्रियभक्त दशानन ❋ केन आसि रक्षा नाहि करे दुइजन
उपकार कि करिल शंकर-पार्व्वती ❋ शूर्पणखा मजाइल लंकार बसति
विलाप करिया कान्दे लक्ष-लक्ष नारी ❋ श्रावणेर धारा-सम चक्षे बहे वारि४
राण्डीर रोदने इन्द्रजितेर विषाद ❋ सबारे प्रबोध-वाक्ये कहे मेघनाद
ना कान्द ना कान्द सबे, परिहर शोक ❋ तोमादेर पति सब गेछे स्वर्गलोक
श्रीराम-लक्ष्मणे रणे मारिया एखनि ❋ निवाइब सकलेर मनेर आगुनि
एत बलि सकलेरे दिल पातियान ❋ मन्दोदरी कहे तबे पुत्र-विद्यमान

नर-वानर पर विजय प्राप्त कर सकुशल लौट आओ। शुभ घड़ी में यात्रा करने पर पराजय नहीं होती। संसार में कोई कभी विधवा न हो। त्रिभुवन में विधवाओं द्वारा असाध्य कार्य कोई भी नहीं है, अपने स्वभाव के कारण वे आकाश में भी जाल बिछा देती हैं। हे राक्षसों के पति, तनिक मन में विचार कर देखो, एक विधवा ने ही लंका की सारी बस्ती को नष्ट-भ्रष्ट कर दिया। तुम्हारी बुआ शूर्पणखा विधवा थी—राक्षसी होकर भी उसने मनुष्य की कामना की। उसकी आयु का कोई ओर-छोर नहीं, केश पक चुके हैं फिर भी मनोहर वेश लेकर वह राम को फुसलाने गई थी। विधवाओं के लिए संसार में कोई भी कार्य असाध्य नहीं। जाओ बेटा, शुभयात्रा कर संग्राम में जाओ। राम के युद्ध में बड़े-बड़े वीर काम आ गये, उन इष्ट-मित्रों के शोक से सारा शरीर तप रहा है। दशानन शंकर-पार्वती का प्रिय भक्त है। वे दोनों आकर रक्षा क्यों नहीं करते? शंकर-पार्वती ने क्या भला किया? सूर्पणखा ने लंका की सारी आबादी को नष्ट-भ्रष्ट कर दिया। इस प्रकार लाख-लाख नारियाँ विलाप करती हुई रोने लगीं। उनकी आँखों से सावन की वर्षा के समान आँसू झरने लगे॥ २०४॥

उन विधवाओं के रोने से इन्द्रजीत बड़ा बिषादमग्न हो गया और सभी को प्रबोध-वाक्य से समझाने लगा। वह कहने लगा तुम लोग मत रोओ, मत रोओ, शोक मत करो, तुम लोगों के पति स्वर्गलोक गये हैं। श्रीराम-लक्ष्मण को मारकर अभी सभी लोगों के मन की आग शान्त करूँगा। इतना कहकर उसने सबके मन को ढाँढ़स बँधाया। तब मन्दोदरी ने पुत्र से कहा,

रूपे-गुणे वीर तुमि परम-सुन्दर ❊ देव-दानवेर कन्या विवाह विस्तर
न-हाजार नारी तव परम-सुन्दरी ❊ आजि सेवा करुक यतेक बहुयारी
राखह मायेर वाक्य हइया सुमति ❊ अन्तःपुरे थाक बाछा, आजिकार राति
मन्दोदरी कथा कहे सकरुण-भाषे ❊ वदन झाँपिया वस्त्रे इन्द्रजित् हासे
जुझिवारे पिता मोरे दिलेन आरति ❊ केमने थाकिब गृहे, ना हय युकति
ससैन्येते आसियाछि जुझिवार मने ❊ कोन लाजे गृहमाझे थाकिब एक्षणे
करिब कठिन यज्ञ नामे निकुम्भिला ❊ इष्टदेव-अर्च्चने हइल एत बेला
यज्ञेते आहुति दिब गिया ये एखनि ❊ छोँबार थाकुक काज, ना हेरि रमणी
यात्राकाले छुँले नारी पड़िबे प्रमाद ❊ एत बलि बिदाय हइल मेघनाथ
भक्तिभरे जननीर चरण बन्दिया ❊ यज्ञतरे इन्द्रजित् चलिल साजिया
कृत्तिवास-पण्डितेर मधुर वचन ❊ लंकाकाण्डे गाहिलेन गीत रामायण५

इन्द्रजितेर निकुम्भिला-यज्ञानुष्ठान

बैसे गिया इन्द्रजित् यज्ञ करिवारे ❊ योगाय यज्ञेर द्रव्य लक्ष-निशाचरे
रक्तवस्त्र भारे-भारे आनिछे तखन ❊ रक्तवर्ण पुष्पमाल्य, सुरक्त-चन्दन
शरपत्र बोझा-बोझा, घृतेर कलस ❊ कालोछाग पाले-पाले बहिछे राक्षस

तुम रूप-गुण में परम-सुन्दर और वीर हो, तुमने देव-दानवों की असंख्य कन्याओं से विवाह किया है। तुम्हारी नौ हजार परम सुन्दरी नारियाँ हैं—वे सब बहुएँ आज तुम्हारी सेवा करें, आज की रात तुम अन्तःपुर में रह जाओ। मन्दोदरी करुण भाषा में कहती रही और कपड़े से मुँह ढाँप कर इन्द्रजीत हँसता रहा। युद्ध करने के लिये पिता ने मेरी आरती उतारी है अब मैं किस युक्ति पर घर में रह सकता हूँ। अपनी सेना सहित युद्ध करने को निश्चय कर आया हूँ अब किस मुँह से गृह में रह सकता हूँ। अब मैं निकुम्भिला नामक कठिन यज्ञ करूँगा—इष्टदेव की अर्चना में इतना विलम्ब हो गया। अभी जाकर मैं यज्ञ में आहुति चढ़ाऊँगा, रमणी को छूना तो दरकिनार, दर्शन तक नहीं करूँगा। यात्रा के समय नारी को छूने से विपत्ति आ जायगी। इतना कहकर मेघनाद ने बिदा ली। भक्ति से जननी के चरणों की वन्दना कर इन्द्रजीत सुसज्जित हो यज्ञ के लिए चल पड़ा। पंडित कृत्तिवास के वचन बड़े मधुर हैं उन्होंने युद्धकांड में रामायण का गीत गाया ॥ ५ ॥

इन्द्रजीत का निकुम्भिला यज्ञानुष्ठान

इन्द्रजीत जाकर यज्ञ करने बैठा। एक लाख निशाचर यज्ञ के उपकरण जुटाने लग गये। उस समय तरह-तरह के रक्तवस्त्र, लाल पुष्पों की मालाएँ और रक्त चन्दन लाये जाने लगे। ढेर से सरकंडे के पत्ते और घी के घड़े

यज्ञशाले शरपत्र बिछाय सकल ❋ मन्त्र पड़ि यज्ञकुण्डे ज्वलिल अनल
तीक्ष्ण-अस्त्रे छागल छेदिल कोटि-कोटि ❋ यज्ञेते आहुति देय अति परिपाटी
आतप-तण्डुल जब पाटि-पाटि आने ❋ हविते मिलित करि दितेछे आगुने
रक्तवस्त्र-माल्य देय जोबड़ाये घृते ❋ दश-हाजार ब्राह्मण बसेछे चारिभिते
अग्निर दुर्जय शब्द मेघेर गर्ज्जन ❋ विंशति-योजन शिखा उठिल गगन
तप्त-काञ्चनेर मत विपरीत शिखा ❋ मूर्त्तिमान हये अग्नि आसि दिल देखा
साक्षाते आसिया अग्नि हैल अधिष्ठान ❋ यवधान्य दुग्ध दधि मधु कैल पान
जे वर चाहिल इन्द्रजित्, पाइल सुखे ❋ मनेर आनन्दे कहे सैन्यगणे डेके २०६

इन्द्रजितेर द्वितीय बार युद्धे गमन

रथेर साजन वीर कैल दुइ-हाते ❋ लाफ दिया उठे गिया संग्रामेर रथे
चण्ड-मुण्ड छत्रदण्ड धरियाछे शिरे ❋ पूर्व्वद्वारे उपनीत मार-मार करे
पूर्व्वद्वार आगुलिया छिल नील-सेना ❋ भंग दिया पलाय वानर अगणना
उठे पड़े पलाय पाइया सबे डर ❋ मेघनाद हासे बसि रथेर उपर
वानरेर भंग देखि नीलवीर रोखे ❋ लाफ दिया गेल मेघनादेर सम्मुखे

लाये जाने लगे। राक्षस काले रंग के बकरे भी ढो ढो कर लाने लगे। यज्ञशाला में तृण के पत्ते बिछा दिये गये और मंत्र पढ़ कर यज्ञकुंड में आग जलाई गई। पैने अस्त्रों से करोड़ों बकरे काटे गये और यज्ञ में होम किये गये। पर्याप्त मात्रा में आतप-तंडुल लाकर घृत से मिश्रित कर आग में डाला जाने लगा। रक्तवस्त्र और माला घी में चुपड़ कर डाला जाने लगा। चारों ओर दश हजार ब्राह्मण बैठे। अग्नि का शब्द मेघ-गर्जन सा सुन पड़ने लगा और उसकी शिखा गगन में बीस योजन तक उठने लगी। तप्त-काँचन जैसी विपरीत शिखा दिखाई पड़ी और अग्नि ने साकार रूप धर कर दर्शन किया। अग्नि साक्षात् उपस्थित होकर अधिष्ठित हुए और जौ, धान, दूध, दही और मधु का पान करने लगे। इन्द्रजीत ने जो वर माँगा वह अनायास मिला। उसने यह समाचार सारी सेना को बुलाकर आनन्द से सुनाया॥ २०६॥

इन्द्रजीत का द्वितीय बार युद्ध-गमन

वीर मेघनाद ने दोनों हाथों से रथ को सुसज्जित किया और छलाँग मार कर युद्ध-रथ पर बैठ गया। सिर पर चंड-मुंड छत्र थामे हुए थे। मार-मार शब्द करते हुए वह पूर्वी द्वार पर जा धमका। नील की सेना पूर्वी द्वार को संभाले हुए थी। वहाँ से अनगिनत वानर डर के मारे भागने लग गये। यह देखकर मेघनाद रथ पर बैठा हँसने लगा। वानरों की भगदड़ देखकर नीलवीर क्रोधित हुआ और कूदकर मेघनाद के सम्मुख जाकर खड़ा हो गया। नील-वीर ने कहा, अरे मेघनाद, अब तू जीवित लौट जाने की अभिलाषा त्याग दे।

अच्चम् उडैयार्क्कु अरणिल्लै आङ्गिल्लै
पॊच्चप् पुडैयार्क्कु नन्गु ।। ४ ।।

कापुरुषों[१] की रक्षा करने में दृढ़ दुर्गों[२] का क्या अर्थ?
सुधिहीनों के सद्गुण भी उसके हित में होते हैं व्यर्थ ।। ४ ।।

भीरु और कापुरुषों के लिए जैसे दुर्ग व्यर्थ हैं [उनकी क़िलों में रह कर भी रक्षा नहीं हो पाती], वैसे ही भुलक्कड़ और असावधान मनुष्यों का कोई कल्याण नहीं कर सकता ।। ४ ।।

मुन्नुऱक् कावादु इऴुक्कियान् तन्बिऴै
पिन्नू ऱिरङ्गि विडुम् ।। ५ ।।

भावी[३] विपदा जान-समझ कर भी उपाय का जिसे न होश;
विपदा आने पर, कर मलते[४] पछताते ऐसे मदहोश[५] ।। ५ ।।

आने वाली विपत्तियों को समय रहते देख कर भी, समय आने के पहले उनका उपाय करना जो भूल जाता है, वह अपनी ही भूल से नाना दुःखों में ग्रस्त होता और पछताता है ।। ५ ।।

इऴुक्कामै यार्माट्टुम् ऎन्ऱुम् वऴुक्कामै
वायिन् अदुवॊप्पदु इल् ।। ६ ।।

सावधान, तत्पर सदैव, विस्मृति का जिसमें कभी न लेश,
सदा सफल है, जग में इससे बढ़कर सद्गुण अन्य न शेष ।। ६ ।।

कभी भूलना नहीं, सदैव जागरूक रहना, ऐसे [सदा सावधान व्यक्ति] के लिए सदैव अतुलनीय लाभ ही लाभ है ।। ६ ।।

अरियवॆन् ऱाहाद विल्लैपॊच् चावाक्
करुवियार् पोट्ऱिच् चॆयिन् ।। ७ ।।

सदा सतर्क, सदा चौकन्ने, कर्मठ[६] जो मेधावी[७] लोग,
कुछ दुःसाध्य न, उनके जीवन में दुर्लभ है निष्फल-योग ।। ७ ।।

जो व्यक्ति जागरूक और सदैव सतर्क (सावधान) हैं, जो सारे साधनों पर विना भूले ध्यान रखते हैं, उनके लिए कठिन से कठिन काम भी सहज है ।। ७ ।।

---

१ कायरों २ मज़बूत से मज़बूत क़िले ३ आनेवाली ४ हाथ मलते ५ नशे में चूर ६ काम पर सदा सवार रहनेवाले ७ स्मृतिशक्ति का धनी ।

पुहऴ्न्दवै पोट्रिच् चेयल्वेण्डुम् शेय्यादु
इहऴ्न्दार्क्कु एऴुमैयुम् इल् ।। ८ ।।

कभी न भूलो, श्रेष्ठ जनों के सन्मारग पर चलो सदैव;
यदि उनकी परवाह न की, तो सात जन्म सिर पर दुर्दैव[1] ।। ८ ।।

गुणी और बुद्धिमान् जनों ने जो मार्ग दरसाये हैं उनको कभी न भूलकर उन्हीं पर सदैव चलना चाहिए। उनका तिरस्कार करनेवाले व्यक्तियों को सात जन्म भी सुख नसीब न होगा ।। ८ ।।

इहऴ्च्चियिऱ् कॆट्टारै युळ्ळुह तान्दम्
महिऴ्च्चियिऩ् मैन्दुरुम् पोऴ्दु ।। ९ ।।

सुख-वैभव में कभी न फूलो; कभी न भूलो उनकी याद,
तुमसे पहले नष्ट कर चुका जिन्हें इसी विधि हर्ष-प्रमाद ।। ९ ।।

तुम जब कभी अपनी उन्नति में विभोर होते हो, तब अवश्य उनका ध्यान कर लो जो तुमसे पूर्व असावधानी और प्रमाद में पड़कर नष्ट हो चुके हैं ।। ९ ।।

उळ्ळियदु ऎय्दल् ऎळिदुमऩ् मट्रुम्दाऩ्
उळ्ळियदु उळ्ळप् पॆऱिऩ् ।। १० ।।

मन्सूबे[2] बाँधना, सदा फिर मन्सूबों पर रखना ध्यान,
नहीं अलभ्य धरा[3] पर कुछ भी, यही सफलता का सोपान[4] ।। १० ।।

प्रत्येक योजना और उद्देश्य की सफलता तभी निश्चित है, जब अपने लक्ष्य और योजना पर सदैव दृष्टि रहे [कभी उसके प्रति असावधान न हो] ।। १० ।।

अदिहारम् (अध्याय) ५५
शेङ्गोऩ्मै (शासन-धर्म)

ओर्न्दुकण् णोटादु इऱैबुरिन्दु यार्माट्टुम्
तेर्न्दुशेय् वह्दे मुऱै ।। १ ।।

सदा न्याय पर नज़र, समझता नहीं किसी को पक्ष-विपक्ष।
शासक वही, जुर्म-मुजरिम[5] को जाँचे, करे न्याय निष्पक्ष ।। १ ।।

१ दुर्भाग्य, विनाश २ मनोरथ, योजना ३ पृथ्वी ४ सीढ़ी ५ अपराध-अपराधी।

विना पक्षपात, न्याय की तराज़ू को संतुलित रखते हुए, पात्रों के प्रति विवेकपूर्ण जाँच करके शासन करना—यही राजदण्ड का धर्म है ॥ १ ॥

वान्नोक्कि वाऴुम् उलहॆल्लाम् मन्नवन्
कोन्नोक्कि वाऴुम् कुडि ॥ २ ॥

जल वर्षा के लिए, जिस तरह, लोक ताकता है आकास ।
प्रजा धर्ममय शासन की अपने राजा से रखती आस ॥ २ ॥

सारा लोक, वर्षा की लालसा से आकाश की ओर ताकता है। उसी प्रकार सारी प्रजा शासक से सदैव धर्ममय शासन की अपेक्षा रखती है ॥ २ ॥

अन्दणर् नूऱ्कुम् अऱत्तिऱ्कुम् आदियाय्
निन्ऱदु मन्नवन् कोल् ॥ ३ ॥

धर्म, ज्ञान, ऋषियों की वाणी—इनका तभी स्वार्थ है मूल्य ।
जब शासक इनको अपनाये, करे आचरण इनके तुल्य ॥ ३ ॥

सकल धर्म, और ऋषियों की सारी स्मृतियाँ, और ज्ञान, शासक के धर्ममय शासन पर ही तो निर्भर हैं ! (यदि शासक निरंकुश और स्वेच्छाचारी है तो धर्मशास्त्र के नियम किस काम आयेंगे।) ॥ ३ ॥

कुडिदऴीइक् कोलोच्चुम् मानिल मन्नन्
अडिदऴीइ निऱ्हुम् उलहु ॥ ४ ॥

जिस राजा के राजदण्ड की धर्म-नेह पर है बुनियाद ।
प्रजा भक्ति से सदा चमती, लेती उसका चरण-प्रसाद ॥ ४ ॥

जिसका राजदण्ड अपनी समस्त प्रजा के लिए समान रूप से धर्ममय और वात्सल्यपूर्ण है, उस शासक के चरणों को सारा लोक पूजता है ॥ ४ ॥

इयल्बुळिक् कोलोच्चुम् मन्नवन् नाट्ट
पॆयलुम् विळैयुळुम् तॊक्कु ॥ ५ ॥

जिसके राजदण्ड से बहती नियम-न्याय की पावन धार ।
वर्षा उचित[१], धान्य-धन की, उसकी धरती पर सदा बहार ॥ ५ ॥

धर्मशास्त्र और न्याय के आधार पर जिसका राजदण्ड दृढ़ है, उस शासक के राज्य में समुचित वर्षा और धन-धान्य से परिपूर्ण फ़सल का सौभाग्य छाया रहेगा ॥ ५ ॥

---

१ न कम, न ज़्यादा ।

वेलन्रु वॆन्रि तरुवदु मन्नवन्
कोलदूउम् कोडा दॆनिन् ॥ ६ ॥

शस्त्र मात्र से भला नरेशों को, कब सम्भव है जयमाल।
न्याय-धर्म-युत राजदण्ड से पाता विजय सदा नरपाल ॥ ६ ॥

अस्त्र-शस्त्रों से विजयश्री नहीं प्राप्त होती। शासक का धर्म और न्याय पर दृढ़ राजदण्ड ही उसकी सफलता और विजय का प्रमुख आधार है ॥ ६ ॥

इऱैकाक्कुम् वैयहम् ऎल्लाम् अवनै
मुऱैकाक्कुम् मुट्टाच् चॆयिन् ॥ ७ ॥

सकल प्रजा का रक्षक नृप है, उनके हित का रखता ध्यान।
न्यायपरायण[1] नृप का रक्षक, धर्म-न्याय है स्वयं महान् ॥ ७ ॥

राजा, लोक की सुरक्षा करता है। और धर्म एवं न्याय से युक्त उसका शासन, उस नृपति की सुरक्षा करता है ॥ ७ ॥

ऎण्बदत्ताल् ओरा मुऱैशॆय्या मन्नवन्
तण्बदत्ताल् तानॆ कॆडुम् ॥ ८ ॥

दर्शन दुर्लभ, दरस हुआ भी, तो नृप से यदि मिला न न्याय।
उस नृप का विनाश कर देता, उस नृशंस[2] का ही अन्याय ॥ ८ ॥

न्याय की गुहार की जहाँ सरलता से सुनवाई नहीं है, अथवा प्रार्थी की फ़रियाद पर पूरी तरह विचार नहीं करता; अथवा धर्म के स्थापित धुरों के अनुसार उचित न्याय नहीं करता, वह शासक अपने हाथों अपना पराभव और विनाश बुलाता है ॥ ८ ॥

कुडिबुरङ्ग् गात्तोम्बिक् कुट्रम् कडिदल्
वडुवन्रु वेन्दन् तॊऴिल् ॥ ९ ॥

दमन शत्रु का, अपराधी को दण्ड, भला इसमें क्या दोष?
राजधर्म है, न्यायी नृप इसके पालन में है निर्दोष ॥ ९ ॥

अपनी प्रजा की रक्षा करने में शत्रु का कठोरता से दमन करना, और अपराधी पर दया न करके उसको समुचित दण्ड देना—यह शासक का कर्तव्यधर्म है; यह उसके प्रति लाञ्छन और दोष की बात नहीं ॥ ९ ॥

कॊलैयिर् कॊडियारै वेन्दॊरुत्तल् पैङ्गूऴ्
कळैकट् टदनॊडु नेर् ॥ १० ॥

---

१ न्याय ही पर आचरण करनेवाला २ क्रूर, अत्याचारी।

हत्यारे को प्राणदण्ड या अधमों से कठोर व्यवहार।
खेत निराने[1] सदृश, प्रजा के हित में नृप का यह आचार ॥ १० ॥

हत्या और जघन्य अपराधों के लिए प्राणदण्ड देना [और इस प्रकार समाज को निष्कण्टक बनाना] वैसे ही ज़रूरी है, जैसे खेती की पैदावार की समृद्धि के लिए [कुस-काँस आदि व्यर्थ घासों को उखाड़ फेंकना अथवा] निराई करना ॥ १० ॥

अदिहारम् (अध्याय) ५६
कॊडुङ्गोन्मै (निरंकुश-शासन)

कॊलैमेऱ् कॊण्डारिऱ् कॊडिदे अलैमेऱ्कॊण्डु
अल्लवै शॆय्दॊऴुहुम् वेन्दु ॥ १ ॥

अधम लुटेरों हत्यारों का पातक है जरूर घनघोर।
अन्यायी अत्याचारी नृप लेकिन उनसे अधिक कठोर ॥ १ ॥

हत्यारों के गरोह की अपेक्षा, अन्यायी अत्याचारी शासक कहीं अधिक निर्दयी और क्रूर है ॥ १ ॥

वेलॊडु निन्ऱान् इडुवॆन् ऱदुबोलुम्
कोलॊडु निन्ऱान् इरवु ॥ २ ॥

'माँग'[2] लुटेरे की न 'माँग' है, है वह भाले का आतंक।
क्रूर नृपति को भेंट प्रजा करती जब होती विवश[3] सशंक[4] ॥ २ ॥

ज़ालिम शासक का अपनी प्रजा से धन और सुवर्ण की याचना करना वैसा ही है, जैसे पिस्तौल की नोक पर लुटेरे डाकू धन सौंप देने की मांग करते हैं। [वह दोनों 'याचना' नहीं हैं। दोनों स्थितियों में धन भय के कारण सौंप दिया जाता है। बल्कि राजा को भय से अर्पित किया हुआ धन 'भेंट' कहलाता है, यह और अन्याय है ॥ २ ॥

नाडॊऱुम् नाडि मुऱैशॆय्या मन्नवन्
नाडॊऱुम् नाडु कॆडुम् ॥ ३ ॥

नित अधर्म में लीन, न नृप ने यदि सुधार की, की परवाह।
दिन-दिन उसके शासन को [उसको] बस समझो हुआ तबाह[5] ॥ ३ ॥

---

१ चुन कर उखाड़ फेंकना २ लुटेरा कहता है 'सब कुछ हमें दे दो' ३ लाचार
४ भयभीत ५ बरबाद।

जो शासक नित्य अधर्मों और अपराधों को करता और उस अनीति में सुधार नहीं करता, वह दिन व दिन स्वयं [को और] अपने शासन को विनाश के गर्त में धकेलता है ।। ३ ।।

कूऴुम् कुडियुम् ऑरुङ्गिऴक्कुम् कोल्कोडिच्
चूऴादु शॅय्युम् अरशु ।। ४ ।।

राजदण्ड के दुरुपयोग से न्याय-धर्म का यदि अपमान ।
राज-सम्पदा-प्रजा सहित ऐसे नृप का जल्दी अवसान[1] ।। ४ ।।

जो राजा धर्म और न्याय से पराङ्मुख होकर राजदण्ड का दुरुपयोग करता है, उसकी प्रजा, राज्य, सम्पदा, सब उसके हाथ से शीघ्र निकल जाता है ।। ४ ।।

अल्लऱ्पट्टु आट्ऱादु अऴुदहण् णीरन्ऱे
शॅल्वत्तैत् तेय्क्कुम् पडै? ।। ५ ।।

जिस प्रकार लोहे की आरी कर देती लोहे को चूर्ण ।
त्यों पीड़ित[2] की आहों से होता विनष्ट नृप का सम्पूर्ण ।। ५ ।।

असहनीय उत्पीड़न से उत्पन्न निरीहों की आहें, उनके आँसू, उस पीड़क शासक की सत्ता को भस्म कर देने के लिए धौंकनी का काम करते हैं ['मुए चाम की श्वास सों लौह भस्म ह्वै जाय'] ।। ५ ।।

मन्ऩर्क्कु मन्ऩुदल् शॅङ्गोन्मै अह्दिन्ऱेल्
मन्ऩावाम् मन्ऩर्क् कॊळि ।। ६ ।।

राजदण्ड की धर्मपताका से राजा का अटल प्रताप ।
राजदण्ड के दुरुपयोग से चमक नसाती[3] उसकी आप ।। ६ ।।

शासक की कीर्ति और विक्रम की पताका उसी समय तक लहराती है जिस समय तक वह धर्ममय राजदण्ड धारण किये है । राजदण्ड का दुरुपयोग होते ही शासक की सारी आभा समाप्त हो जाती है । [वह धीरे-धीरे विनाश को प्राप्त हो जाता है] ।। ६ ।।

तुळियिन्मै ञालत्तिऱ् ऱॆट्ऱट्ऱे वेन्दन्
अळियिन्मै वाऴुम् उयिर्क्कु ।। ७ ।।

विन वर्षा के प्यासी धरती जैसे हो जाती वीरान ।
धर्म-दया से हीन नृपति की प्रजा खोखली[4] उसी समान ।। ७ ।।

---

१ समाप्ति २ (राजा द्वारा) सताये गये ३ नष्ट हो जाती है ४ दीन, सब कुछ मिट जाता है ।

वर्षा न होने से जैसे धरती सूख कर विना फ़सल की हो जाती है, उसी प्रकार धर्महीन निरंकुश शासक की प्रजा भी निर्जीव हो जाती है ॥ ७ ॥

इन्मैयिन् इन्नादु उडैमै मुरैशॆय्या
मन्नवन् कोऱ्कीऴ्प् पडिन् ॥ ८ ॥

अन्यायी नृप के अधीन सम्पन्नों को भी दुःख महान् ।
न्यायी शासन में विपन्न धनहीनों को भी सुख-सम्मान ॥ ८ ॥

अन्यायी राजा के अधीन प्रजा का सम्पन्न होना, विपन्न-निर्धन होने की अपेक्षा अधिक दुखदायी है ॥ ८ ॥

मुऱैकोडि मन्नवन् शॆय्यिन् उऱैकोडि
ऒल्लादु वानम् पॆयल् ॥ ९ ॥

नृप, दुर्नीति-बीज को बोकर राज-प्रजा करता वीरान ।
दुःशासन से ऋतू बदलतीं, जलद[1] न करते हैं जलदान ॥ ९ ॥

यदि शासक अधर्म और अन्याय की खेती करता है तो उसके राज्य में ऋतुएँ बदल जाती हैं, [उसके वैभव-रूपी खेतों में] मेघ वर्षा नहीं करते [अर्थात् जो कुछ उसके पास सम्पत्ति है सब सूख अर्थात् नष्ट हो जाती है।] ॥ ९ ॥

आबयन् कुन्ऱुम् अऱुदॊऴिलोर् नूल्मऱप्पर्
कावलन् कावान् ऎनिन् ॥ १० ॥

प्रजा अरक्षित जिस शासन में, गायें वहाँ दुग्ध से हीन ।
पुण्य छीन[2], यागादि कर्मषट् से द्विज होते वहाँ विहीन ॥ १० ॥

यदि संरक्षक नरेश अपनी प्रजा की [सुख-शांति-समृद्धि की] सुरक्षा करने से विमुख है, तो उसके राज्य में [सूखा पड़ जाने से] गायें दूध देना बन्द कर देती हैं, वैदिक जन ऋचाएँ भूल जाते हैं। [पढ़ना-पढ़ाना, यज्ञ करना-यज्ञ कराना, दान देना-दान लेना—ये षट्कर्म लुप्त हो जाते हैं—राजा-प्रजा सब विपन्न हो जाते हैं।] ॥ १० ॥

अदिहारम् (अध्याय) ५७

वॆरुवन्द शॆय्यामै (कोमल दण्ड-व्यवस्था)

तक्काङ्गु नाडित् तलैच्चॆल्ला वण्णत्ताल्
ऒत्ताङ्गु ऒऱुप्पदु वेन्दु ॥ १ ॥

१ मेघ २ क्षीण, नष्टप्राय।

उचित दण्ड हो, ताड़न हो, भय से उपजे सुधार का भाव।
समुचित सज़ा, किन्तु दोषी के प्रति मन में हो कोमल भाव ॥ १ ॥

वही सुयोग्य शासक है जो अपराध की पूरी जाँच करके अपराधी और अपराध के अनुरूप दण्ड दे। उस दण्ड से न अपराधी को असहनीय उत्पीड़न हो, न वह इतना हलका हो कि अपराधी दुबारा वह अपराध करने का साहस करे ॥ १ ॥

कडिदोच्चि मॆल्ल ऎरिह नॆडिदाक्कम्
नीङ्गामै वेण्डु पवर् ॥ २ ॥

सदा रहे सुख-शान्ति, जिन्हें प्रिय; रक्खें मन में दण्ड-विवेक।
मन में दया, प्रकट में दोषी पर कठोरता का अतिरेक[१] ॥ २ ॥

अपनी और अपने राज्य की सदैव समृद्धि चाहनेवाले शासक को उचित है कि अपराधी को ऐसा दण्ड दे, जो भयावह तो इतना हो कि अपराधी सहमा रहे, किन्तु वह दण्ड ऐसा कठोर भी न हो कि अपराधी उसको झेल ही न सके ॥ २ ॥

वॆरुवन्द शॆय्दॊऴुहुम् वॆङ्गोल नायिऩ्
ऒरुवन्दम् ऒल्लैक् कॆडुम् ॥ ३ ॥

जिसकी रय्यत[२] ज़ुल्म और बेरहमी से रहती है त्रस्त[३]।
देर न लगती ऐसे शासक के होने में निश्चय ध्वस्त[४] ॥ ३ ॥

शासक यदि प्रजा पर निर्दयता से आतंक और उत्पीड़न ढहाता है, तो वह निश्चय ही शीघ्र विनाश को प्राप्त होता है ॥ ३ ॥

इऱैहडियऩ् ऎऩ्ऱुरैक्कुम् इऩ्ऩाच्चॊल् वेन्दऩ्
उऱैहडुकि ऒल्लैक् कॆडुम् ॥ ४ ॥

जहाँ प्रजा की यह पुकार—'है शासक निठुर हमारा क्रूर'।
उसका ह्रास[५] सुनिश्चित समझो, उसका नाश नहीं कुछ दूर ॥ ४ ॥

"हमारा प्रतिपालक क्रूर और नृशंस है", जिसकी प्रजा की यह आवाज़ है, उस राजा का अन्त समय समीप जानो; वह शीघ्र-विनाश के मुख पर है ॥ ४ ॥

अरुञ्जॆव्वि इऩ्ऩा मुहत्ताऩ् पॆरुञ्जॆल्वम्
पेऎय्कण् डऩ्ऩदु उडैत्तु ॥ ५ ॥

---

१ आधिक्य २ प्रजा ३ पीड़ित ४ विनष्ट ५ क्रमशः गिराव।

चूँकि किसी मम्लुकत[1] और किसी शहर का रईस इस नफ़ासत और शान व शुकोह से नहीं रहता था जिस तरह नव्वाब शुजाउद्दौलः रहते थे और इसके साथ ही यह नजर आता था कि कहीं के लोग इस बेजिगरी से हर काम में और हर मौक़ा व महल पर दौलत सर्फ़ करने को नहीं तैयार हो जाते थे, इसलिए हर क़िस्म के और हर जगह के आला दस्तकारों, सन्नाओं[2] और तालिब-इल्मों ने वतनों को ख़ैरबाद कहकर फ़ैज़ाबाद ही को अपना मस्कन बना लिया और यहाँ हर ज़माने में ढाके, बंगाले, गुजरात, मालवा, हैदराबाद, शाहजहाँबाद, लाहौर, पेशावर, काबुल, कश्मीर और मुलतान वग़ैरः के तालिब-इल्मों का एक बड़ा भारी गरोह मौजूद रहता, जो उलमा की दरसगाहों में तालीम पाते और उस चश्मए इल्म से जो फ़ैज़ाबाद में जारी था, सैराब हो-होकर अपने घरों को वापस जाते। नव्वाब वज़ीर और दस-बारह बरस जी जाते तो घाघरा किनारे एक नया शाहजहाँबाद आबाद हो जाता और दुनिया एक नई ज़िन्दा देहली की सूरत देख लेती।

यह नव्वाब शुजाउद्दौलः के सिर्फ़ नौ साल के क़ियाम का नतीजा था जिसने फ़ैज़ाबाद को ऐसा बना दिया। और इन नौ साल में भी सिर्फ़ बरसात के चार महीने वह शहर में रौनक़-अफ़रोज़ रहते। बाक़ी ज़माना अपनी क़लम-रौ[3] के दौरे और सैर व शिकार में सर्फ़ होता था। शुजाउद्दौलः का तब्ई-मैलान[4] महःजबीं[5] औरतों और रक़्स[6] व सुरोद[7] की तरफ़ था, जिसकी वजह से बाज़ारी औरतों और नाचने वाले तायफ़ों की शहर में इस क़दर कस्रत हो गई थी कि कोई गली कूचः इनसे ख़ाली न था और नव्वाब के इनाम व इकराम से वह इस क़दर ख़ुशहाल और दौलतमंद थीं कि अक्सर रंडियाँ डेरादार थीं। जिनके साथ दो-दो, तीन-तीन, आलीशान ख़ेमे रहा करते और नव्वाब साहब जब अज़्लाअ़ का दौरा करते और सफ़र में होते तो नव्वाबी ख़ेमों के साथ-साथ इनके ख़ेमे भी शाहाना-शुकोह से छकड़ों पर लद-लदकर, रवाना होते और इनके गिर्द दस-दस, बारह-बारह तिलंगों का पहरा रहता; और जब हुक्म-राँ की यह वज़अ़ थी तो तमाम उमरा और सरदारों ने भी बेतकल्लुफ़ यही वज़अ़ इख़्तियार कर ली और सफ़र में सब के साथ रंडियाँ रहने लगीं। अगरचिः इससे बद अख़्लाक़ी और बेशर्मी को तरक़्क़ी हो गई लेकिन इसमें शक नहीं कि उन शाहिदाने बाज़ारी की कस्रत और उमरा की शौक़ीनी से शहर की रौनक़ बदरजहा ज़ियादः बढ़ गई थी और फ़ैज़ाबाद दुल्हन बन गया था।

सन् १७७३ ई० में शुजाउद्दौलः ने मग़रिब का सफ़र किया। इस सफ़र में शाही कैम्प की रौनक़ और चहल-पहल बयान से बाहर थी। मालूम होता था कि नव्वाबी अलमे-इक़बाल के साथ-साथ एक बड़ा भारी शहर सफ़र कर रहा है। लखनऊ

---

१ राज्य २ शिल्पियों, कारीगरों ३ सल्तनत, राज्य ४ स्वाभाविक प्रवृत्ति, झुकाव ५ चन्द्रमुखी ६ नाच ७ गाना।

होते हुए इटावा पहुँचे, जिस पर मरहठे क़ाबिज़ थे। एक ही हमले में उसे उनसे छीन कर अपने क़ब्ज़े में किया और अहमद ख़ाँ बंगश की क़लम-रौ में दाख़िल होकर कोड़ियागंज और कासगंज में ख़ेमाज़न हुए। यहाँ से इन्होंने हाफ़िज़ रहमत ख़ाँ फ़रमाँ-रवा बरेली को लिखा "गुज़श्तः साल मैंने एक करोड़ रुपये महाजी सिंधिया मरहठे को भेजे थे, जिसने आपका वह तमाम इलाक़ा जो दरमियाने दोआब है, आप से छीन लिया था। वह रक़म अदा करके मैंने आपका वह इलाक़ा उसके क़ब्ज़े से छुड़ाया और आपके हवाले कर दिया, लिहाज़ा अब पचास लाख की रक़म जो आपकी तरफ़ से मैंने अदा की थी, फ़ौरन अदा कीजिए"।

हाफ़िज़ रहमत ख़ाँ ने अपने तमाम अफ़ग़ान सरदारों और भाई-बन्दों को जमा करके कहा—"शुजाउद्दौलः लड़ाई के लिए बहाना ढूँढ़ रहे हैं, मुनासिब यह है कि मतलूबा रक़म अदा कर दी जाये। बीस लाख मैं अपने पास से देता हूँ और माबक़ी तीस लाख तुम जमा कर दो"।

ना-आक़िबत-अन्देश[1] पठान सरदारों ने जवाब दिया—"शुजाउद्दौलः के आदमी देखने ही के हैं, वह भला हमसे क्या मुक़ाबिला करेंगे? बाक़ी रही अंग्रेज़ी फ़ौज जो उनके साथ है, तो उनकी तोपों पर जिस वक़्त हम तलवारें सूत-सूतकर जा पड़ेंगे सब के हवास जाते रहेंगे। देने-लेने की कुछ ज़रूरत नहीं"। रहमत ख़ाँ ने यह सुनकर कहा—"तुम्हें इख़्तियार है, मगर मैं अभी से कहे रखता हूँ कि अगर लड़ाई का रंग बदला तो मैं मैदान से ज़िन्दा न आऊँगा और इसका जो अन्जाम होगा वह तुम्हीं को भुगतना पड़ेगा"।

बहर तक़्दीर शुजाउद्दौलः को अपनी ख़्वाहिश के मुआफ़िक़ जवाब न मिला, फ़ौज लेकर चढ़ गये। लड़ाई हुई और लड़ाई का अंजाम वही हुआ जिसे तक़्दीर ने हाफ़िज़ रहमत ख़ाँ की ज़बान से पहले ही सुनवा दिया था। हाफ़िज़ रहमत ख़ाँ शहीद हुए और उनकी हुकूमत का ख़ात्मा हो गया। मगर यह फ़तह शुजाउद्दौलः बहादुर को भी सज़ावार[2] न हुई। १३ सफ़र सन् ११८८ हिजरी (सन् १७७४ ई०) को लड़ाई हुई थी, ११ शाबान को शुजाउद्दौलः बरेली से कूच करके लखनऊ आये। माहे-मुबारके रमज़ान लखनऊ में बसर किया। ७ शव्वाल को लखनऊ से कूच करके १४ को फ़ैज़ाबाद में दाख़िल हुए और फ़तह को ९ महीने १० ही दिन हुए थे और घर में पूरे डेढ़ महीने भी आराम करने का मौक़ा नहीं मिला था कि २३ ज़ीक़ाद सन् ११८८ हिजरी (सन् १७७४ ई०) को रहगिराए-आलमे जाविदाँ हुए और अफ़सोस! इनकी वफ़ात[3] ही के साथ फ़ैज़ाबाद की तरक़्क़ी का दौर भी ख़त्म हो गया।

---

१ अदूरदर्शी २ मुनासिब ३ मृत्यु।

उस वक़्त हुकूमतें अवध में सबसे बड़ा असर नव्वाब शुजाउद्दौलः बहादुर की बीवी बहूबेगम साहिबः का था जो निहायत ही दौलतमंद भी समझी जाती थीं। उनकी मंज़ूरी से नव्वाब आसिफ़उद्दौलः मसनद-नशीनें हुकूमत हुए। मगर इनकी इख़्लाक़ी हालत निहायत ख़राब थी और मुसाहिबों को मुनासिब मालूम हुआ कि माँ-बेटों को अलग रखें। चन्द रोज़ तक सैर व शिकार में मस्रूफ़ रहने के बाद नव्वाब आसिफ़उद्दौलः बहादुर ने लखनऊ में क़ियाम इख़्तियार कर लिया और यहीं बैठे-बैठे माँ को सताया करते और बार-बार उनसे रुपया तलब करते।

बहूबेगम साहिबः के मौजूद रहने से फ़ैज़ाबाद को उनकी ज़िन्दगी तक थोड़ी बहुत रौनक़ हासिल रही। अगरचिः उनकी ज़िन्दगी में भी नव्वाब आसफ़उद्दौलः की नालायक़ियों ने बेगम साहिबः के इत्मीनान में और इसकी वजह से फ़ैज़ाबाद के अमन व अमान में ख़लल डाला, मगर उस मुहतरम ख़ातून[1] की ज़िन्दगी तक वह झगड़े और हंगामे भी एक गोनः[2]-वायसें रौनक़ हो जाया करते थे। उनकी वफ़ात पर फ़ैज़ाबाद की तारीख़ ख़त्म हो गई और लखनऊ का दौर शुरू हुआ जिसका हाल हम आइन्दः लिखेंगे।

ज़िक्रे लखनऊ

ठीक किसी को नहीं मालूम कि लखनऊ की आबादी की बुनियाद कब पड़ी? इसका बानी कौन था? और वजह तस्मियः[3] क्या है? लेकिन मुख़्तलिफ़ ख़ानदानों की क़ौमी रिवायतों और क़यासात से काम लेकर जो कुछ बताया जा सकता है, यह है :—

कहते हैं राजा रामचन्द्रजी लंका को फ़तह करके और अपने बनवास का ज़माना पूरा करके जब सरीरे जहाँपनाही[4] पर जल्वःअफ़रोज़ हुए तो यह सर ज़मीन उन्होंने जागीर के तौर पर अपने हम-सफ़र व अपने हमदर्द भाई लक्ष्मनजी को अता कर दी। चुनांचिः इन्हीं के क़ियाम या वुरूद[5] से यहाँ दरिया किनारे एक ऊँचे टेकरे पर एक बस्ती आबाद हो गई, जिसका नाम उस वक़्त से लक्ष्मनपूर क़रार पाया और वह टेकरा लक्ष्मनटीला मशहूर हुआ। उस टीले में एक गहरा ग़ार या कुवाँ था जिसकी किसी को थाह न मिलती थी और लोगों में मशहूर था कि वह शेषनाग ● तक चला

१ प्रतिष्ठित महिला २ कुछ ३ नामकरण ४ राजसिंहासन ५ पहुँचना।

● हिन्दू देवमाला में शेषनाग उस हज़ार सर वाले साँप का नाम है जो धरती (ज़मीन) को अपने फन पर उठाये हुए है और क़ुदरत व अज़्मते-इलाही का एक वाजिब-उल्-इहतिराम मज़्हिरः है।

गया है। इस ख़याल ने जज़बातें अक़ीदत को हरकत दी और हिन्दू लोग ख़ुश एतिक़ादी से जा-जाकर इसमें फूल-पानी डालने लगे।

यह भी कहा जाता है कि महाराजा युधिष्ठर के पोते राजा जन्मेजय ने यह इलाक़ा मरताज़ बुज़ुर्गों, ऋषियों और मुनियों को जागीर में दे दिया था, जिन्होंने यहाँ चप्पे-चप्पे पर अपने आश्रम बनाए और हरि के ध्यान में मसरूफ़ हो गये। एक मुद्दत के बाद इनको कमज़ोर देखकर दो नई क़ौमें हिमालिया की तराई से आकर इस मुल्क पर क़ाबिज़ हो गईं जो बाहम मिलती-जुलती और एक ही नस्ल की दो शाखें मालूम होती थीं। एक 'भर' और दूसरी 'पाँसी' §

इन्हीं लोगों से सय्यद सालार मसऊद ग़ाज़ी से सन् ४५९ मुहम्मदी (सन् १०३०ई०) में मुक़ाबिला हुआ और ग़ालिबन् इन्हीं पर बख़्तियार ख़िलजी ने सन् ६३१ हि० मुहम्मदी (सन् १२०२ ई०) में चढ़ाई की थी। लिहाज़ा इस सरज़मीन पर जो मुसलमान ख़ानदान पहले-पहल आकर आबाद हुए, वह इन्हीं दोनों हमला-आवरों, ख़ुसूसन् सय्यद सालार मसऊद ग़ाज़ी के साथ आने वालों में से थे।

'भर' और पाँसियों के अलावा ब्राह्मण और कायस्थ भी यहाँ पहले से मौजूद थे। इन सब लोगों ने मिलकर यहाँ एक छोटा सा शहर बसा लिया और अमन व अमान से रहने लगे। लेकिन यह नहीं कहा जा सकता कि इस बस्ती का नाम लक्ष्मनपूर से बदलकर लखनऊ कब हो गया। इस आख़िरी मुरव्वज: नाम का पता, शहनशाह अक्बर से पहले नहीं चलता। लेकिन इससे इनकार नहीं किया जा सकता कि हिन्दू-मुसलमानों की काफ़ी आबादी पहले से मौजूद थी, जिसका सुबूत उस वाक़िए से हो सकता है जो श्योखें लखनऊ की ख़ानदानी रिवायतों में बहुत पहले से मौजूद है कि सन् ९६९ मुहम्मदी (सन् १५४० ई) में जब हुमायूँ बादशाह को शेरशाह के मुक़ाबिल जौनपूर में शिकस्त हुई तो वह मैदान छोड़कर सुल्तानपूर, लखनऊ, पीलीभीत, होता हुआ भागा था। लखनऊ में उसने सिर्फ़ चार घंटे दम लिया था और गो कि शिकस्त खाकर आया था, और कोई क़ुव्वत और हुकूमत न रखता था, मगर लखनऊ के लोगों ने महज़ इन्सानी हमदर्दी और महमान-नवाज़ी के ख़याल से उन चन्द घण्टों ही में दस हज़ार रुपया और पचास घोड़े उसकी नज़र किये थे। इतने थोड़े ज़माने में उस सामान के फ़राहम हो जाने से क़ियास किया जा सकता है कि उन दिनों यहाँ मुतअद्दिदव:[१] आबादी मौजूद थी और उन दिनों का लखनऊ आजकल के अक्सर क़स्बात से ज़ियाद: बारौनक़ और ख़ुशहाल था।

उसी क़दीम ज़माने के आने वालों में शाह मीना का ख़ानदान भी है जिनका

§ यह शब्द 'पासी' प्रचलित है।

१ अधिक संख्या।

मज़ारे-पुर अनवार आज तक मिरज़ा-इनाम है और ग़ालिबन् उसी अहद के आनेवालों में शाह पीर मुहम्मद भी थे, जिन्होंने ख़ास लक्ष्मनटीले पर सुकूनत इख़्तियार की और वहीं पैवन्दे-ज़मीं हुए। उनके क़ियाम की वजह से वह पुराना टेकरा लक्ष्मन-टीले से शाह पीर मुहम्मद का टीला हो गया और मुरूरे अय्याम से वह गहरा ग़ार भी पट गया। उस पर बाद के ज़माने में शहनशाह औरंगज़ेब ने, जो ब-नफ़्सेनफ़ीस यहाँ आया था, एक उम्दः मज़बूत ख़ूबसूरत और शानदार मस्जिद बनाकर खड़ी कर दी, जो आज तक आलमगीर की तरफ़ से सदायें 'अल्लाहु अक्बर' बलन्द कर रही है।

सन् १०१९ मुहम्मदी (सन् १५९० ई०) में शहनशाह अक्बर ने जब सारे हिन्दुस्तान को बारह सूबों में तक़सीम किया तो सूबए अवध के सूबेदार या वाली का मुस्तक़र बादियुन्नज़र[१] में लखनऊ ही क़रार पाया था। उन दिनों इत्तिफ़ाक़ से शेख़ अब्दुर्रहीम नाम ज़िला बिजनौर के एक ख़स्ताहाल व परेशान-रोज़गार बुज़ुर्ग ब-तलाशे-मआश[२] देहली पहुँचे। वहाँ उमरा दरबार में रुसूख़[३] पैदा करके बारगाहे शहनशाही में बारयाब हुए। आख़िर मनसब दाराने शाही में शामिल होकर लखनऊ में जागीर पाई और चन्द रोज़ बाद बड़े तुज़ुक व इहतिशाम[४] व कर्र व फ़र्र[५] से अपनी जागीर में आकर मुक़ीम हुए। यहाँ ख़ास लक्ष्मनटीले या शाह पीर मुहम्मद के टीले पर मुक़ीम होकर इन्होंने अपना पँचमहला बनवाया। शेख़न दरवाज़ा तामीर कराया और लखनऊ ही में पैवन्दे-ज़मीन हुए। उनका मक़बरा नादानमहल के नाम से आज तक मशहूर है, जिसकी इमारत को अभी चन्द रोज़ हुए गवर्नमेण्ट आफ़-इण्डिया ने पसंद करके अपनी ज़ेरे हिमायत ले लिया है।

उसी ज़माने में यहाँ शेख़ अब्दुर्रहीम ने लक्ष्मनटीले के पास एक दूसरी बलन्दी पर एक छोटा क़िला तामीर कराया जो क़ुर्ब व जवार की गढ़ियों से ज़ियादः मज़बूत था और गिर्द-व-नवाह[६] के लोगों पर उसका बड़ा असर पड़ता था। या तो इसलिए कि शेख़ अब्दुर्रहीम का दरबारशाही से अलमे[७] माही-मरातब अता हुआ था या इसलिए कि उस क़िले के एक मकान में छब्बीस महराबें थीं और हर महराब पर मैमार ने दो दो मछलियाँ बनाकर बावन मछलियाँ बना दी थीं। उस क़िले का नाम "मच्छी-भवन" मशहूर हो गया। 'भवन' का लफ़्ज़ या तो क़िले के मायनों में है या "बावन" से बिगड़ कर बन गया है। जिस मैमार ने इस क़िले को तामीर किया, वह लखना नाम का एक अहीर था और कहते हैं कि इसी के नाम से शहर का नाम लखनऊ हो गया और बाज़ का ख़याल है कि लक्ष्मनपुरी बिगड़ कर लखनऊ

---

१ स्थायी तौर पर पहली नजर २ रोजी की खोज में ३ मेलजोल ४ शान-शौकत ५ वैभव व शोभा ६ आस पास के स्थान ७ सेना के आगे रहनेवाला झंडाबरदार।

बन गया। इनमें से जो बात हो, मगर इस आबादी ने यह नाम शेख़ अब्दुर्रहीम के आने के बाद पाया। §

चन्द रोज़ बाद शेख़ अब्दुर्रहीम के ख़ानदान वालों यानी शेख़ज़ादों के अलावा यहाँ पठानों का एक गिरोह आ गया जो जुनूब की तरफ़ बसे और रामनगर के पठान मशहूर हुए। उन्होंने अपनी ज़मीदारी की हद उस मुक़ाम तक क़रार दी थी जहाँ अब गोल दरवाज़ा वाक़ै है। क्योंकि वहाँ से दरिया की तरफ़ बढ़िए तो शेख़ज़ादों की ज़मीन शुरू होती थी। उन पठानों के बाद श्योख़ का एक नया गरोह आकर मशरिक़ की तरफ़ बस गया जो श्योख़े-निबहरा कहलाते हैं। उन लोगों की ज़मीन वहाँ पर थी जहाँ अब रेज़ीडेन्सी के खंडहर हैं।

यह तीनों गरोह अपने-अपने इलाक़ों पर मुतसर्रफ़ और अपने हलक़ों के हाकिम थे; लेकिन शेख़ज़ादों का असर सब पर ग़ालिब था और क़ुर्ब व जवार पर उनका दबाव पड़ता था। जिसका क़वी सबब यह था, कि यह लोग दरबारे देहली में रुसूख रखते थे। उनमें से कई शख़्स पूरे मुल्क अवध के सूबेदार मुक़र्रर हो गये थे और उनके क़िला—'मच्छी भवन' की मज़बूती की इस क़दर शुहरत थी की अवाम की ज़बान पर था "जिसका मच्छी-भवन उसका लखनऊ"।

अक्बर ही के ज़माने में लखनऊ तरक़्क़ी करने लगा था और इसकी आबादी बढ़ती और फैलती जाती थी। यह सही है कि सूबेदार अवध उन्हीं शेख़ज़ादों में से मुन्तख़ब हुए। लेकिन आम मामूल यह था कि इस ख़िदमत पर मुअज़्ज़िज़ीन देहली मुक़र्रर होते, जो सालों साल अपने घर बैठे रहते। फ़क़त तहसील वसूल के ज़माने में एक दौरा-सा करते और उनके नायब यहाँ रहा करते। लिहाज़ा उनसे शहर की तरक़्क़ी की कोई उम्मीद न की जा सकती थी। हाँ, यहाँ के दो एक शेख़ज़ादे जो सूबेदार मुक़र्रर हो गये तो उनके तक़र्रुर से अलबत्ता लखनऊ को फ़ायदा पहुँचा।

लेकिन मालूम होता है कि अक्बर को लखनऊ की तरफ़ ख़ास तवज्जुः थी। चुनाँचिः इसने यहाँ के ब्राह्मणों को 'बाजपेयी' चढ़ावे के लिए एक लाख रुपये मरहमत फ़रमाये थे और इसी वक़्त से लखनऊ के बाजपेयी ब्राह्मण मशहूर हुए। इसी से पता चलता है कि लखनऊ के क़दीम तरीन हिन्दू मुहल्ले जो अक्बर के वक़्त में मौजूद थे, बाजपेयीटोला, सोंधीटोला, बंजारीटोला और अहीरीटोला हैं और यह सब चौक ही के अतराफ़ में हैं।

---

§ 'लक्ष्मणटीला' और 'लखनऊ', ये दोनो नाम शेख़ के आने से पहले से मौजूद और ख्याति पाये हुए थे। यह 'गुज़श्तः लखनऊ' में अगले और पिछले पैरों से ज़ाहिर है। शहंशाह अक्बर ने जब सल्तनत को सूबों में बाँटा, तो अवध का लखनऊ केन्द्र था।

—सम्पादक
'वाणीसरोवर'

मिर्ज़ा सलीम ने जो तख़्त पर बैठकर नूरुद्दीन जहाँगीर के लक़ब से मशहूर हुए, बाप की ज़िन्दगी और अपने ऐयाम में वली-अहदी में मिर्ज़ामंडी की बुनियाद डाली, जो मच्छी-भवन से मग़रिब की तरफ़ वाक़ै है। अक्बर के आख़िर अहद में यहाँ के सूबेदार जवाहर ख़ाँ थे। वह तो देहली में रहते थे मगर इनके नायब क़ाज़ी बिलगिरामी ने चौक के जुनूब में इससे मिले हुए दाहिनी तरफ़ महमूदनगर और बाईं तरफ़ शाहगंज आबाद किये और उनके और चौक के दरमियान में बादशाह के नाम से अक्बरी दरवाज़ा तामीर कराया।

अहदे अक्बरी में जब कि यह इमारतें बन रही थीं और यह मुहल्ले आबाद हो रहे थे, लखनऊ एक अच्छी तिजारतगाह बन गया था, और तरक़्क़ी के इस दरजे को पहुँचा हुआ था कि एक फ़्रान्सीसी ताजिर ने जो घोड़ों की तिजारत करता था, यहाँ क़ियाम करके नफ़ा हासिल करने की कोशिश की और दरबारे शहनशाही से लखनऊ के क़ियाम के लिए सनद मस्तामनी† हासिल करके यहाँ अपना अस्तबल क़ायम किया, और पहले ही साल में इस क़दर फला-फूला कि चौक के मुत्तसिल[1] चार आलीशान मकान तामीर कर लिए। साल ख़त्म होने पर जब उसने पुरानी मस्तामनी की तजदीद चाही तो उसे ज़ियाद: क़ियाम की इजाज़त न मिली; और इस पर भी इसने ज़बरदस्ती ठहरने का इरादा किया तो हस्बुल्हुक्म शहनशाही हुक्कामे शहर ने उसके मकानात ज़ब्त करके नज़ूल सरकार कर लिए और उसे यहाँ से निकाल दिया। वह चारों मकान मुद्दत तक सरकार के क़ब्ज़े में रहे, यहाँ तक कि शहनशाह औरंगज़ेब आलमगीर के अहद में जब मुल्ला निज़ामुद्दीन सहालवी ने अपने क़स्बे के फ़सादों से आजिज़ आकर लखनऊ में सुकूनत इख़्तियार करने का क़स्द किया, तो अतय्ये: सरकार[2] के तौर पर वह चारों मकान उन्हें दे दिये गये और इन्होंने अपने पूरे ख़ानदान के साथ आकर उन मकानों में सुकूनत इख़्तियार की जो अपने गिर्द व पेश के बहुत से मकानात के साथ आज तक "फ़िरंगी-महल" कहलाते हैं। मुल्ला साहब के क़दूम[3] की बरकत से लखनऊ इल्म व फ़ज़्ल का मरकज़ और तलबए उलूम का मरजअ़ व मावा बन गया और इस इल्मी मर्‌जइय्यत को इस क़दर तरक़्क़ी हुई कि मुल्ला निज़ामुद्दीन का मुरत्तब किया हुआ निसाबे-तालीम, जो

---

† मस्तामन के मानी तालिबे अमन हैं। योरुप वालों को चूँकि मुसलमानों और हिन्दुओं में अपने लिए ख़तरा नज़र आया करता था, इसलिए जहाँ क़ियाम करना चाहते वहाँ के लिए दरबारे देहली से मस्तामनी की सनद हासिल कर लिया करते ताकि हुक्काम व अम्माल और नेज़ रिआया इन्हें न सताये। इस सनद से चूँकि सल्तनत पर ज़िम्मेदारियाँ आयद हो जाती थीं, इसलिए एक साल से ज़ियाद: की सनद कम दी जाती थी।

---

१ साथ में मिला २ सरकार से प्रदान तोहफ़ा ३ चरणों।

सिलसिले निज़ामिया कहलाता है, मुद्दतें दराज़ से हिन्दोस्तान ही का नहीं सारे एशिया का निसाबे-तालीम है और इल्मी कमालात के साथ उसमें वलीयाना बरकतें भी मुज़मर-तसव्वर की जाती हैं और इससे ब-ख़ूबी अन्दाज़ा किया जा सकता है कि उस ज़माने में कहाँ-कहाँ और कितनी-कितनी दूर के तलबए उलूम[1] लखनऊ में जमा रहते होंगे।

यूरोपियन सैयाह[2] लीकट जो सन् १०६० मुहम्मदी (सन् १६४१ ई०) यानी शाहजहाँ की सल्तनत के अवायल[3] में हिन्दोस्तान की सैर कर रहा था, लखनऊ की निस्बत लिखता है कि "यह अज़ीमुश्शान मंडी है"। अहदे शाहजहानी में यहाँ के सूबेदार सुल्तान अली शाह क़ुली ख़ाँ थे। उनके दो बेटे थे; मिर्ज़ा फ़ाज़िल और मिर्ज़ा मन्सूर। इन्हीं दोनों के नाम से उन्होंने महमूदनगर से जनूब की तरफ़ आगे बढ़कर दो नए मुहल्ले फ़ाज़िलनगर और मन्सूरनगर आबाद किये।

उस ज़माने में यहाँ अशरफ़ अली ख़ाँ नाम के एक रिसालदार थे। उन्होंने इसी सिलसिले में अशरफ़ाबाद बसाया और उनके भाई मुशर्रफ़ अली ख़ाँ ने नाले के दूसरी तरफ़ अपना घर बनाकर मुशर्रफ़ाबाद नाम एक और मुहल्ला क़ायम किया जिसका नाम मरूरें अय्याम से अब नौबस्ता हो गया है। उन्हीं दिनों पीर ख़ाँ नाम एक और फ़ौजी अफ़सर थे, जिन्होंने इन सब मुहल्लों से मग़रिब की तरफ़ दूर जाकर अपनी गढ़ी बनाई, जो मुक़ाम (कुजा) आज तक पीर ख़ाँ की गढ़ी कहलाती है।

शहनशाह औरंगज़ेब आलमगीर ने किसी ज़रूरत से अयोध्या का सफ़र किया था। वापसी के वक़्त लखनऊ में ठहरता हुआ देहली गया। उस मौक़े पर उसने शाह पीर मुहम्मद के टीले वाली मस्जिद तामीर कराई जो ख़ास लक्ष्मन टीले पर होने की वजह से ऐसी बलन्दी पर वाक़िअ् है, जिससे ज़ियादः मुनासिब जगह मस्जिद के लिए लखनऊ में नहीं हो सकती, और ग़ालिबन् इसी मौक़े पर इसने फ़िरंगी-महल के मकानात अल्लामएज़माँ मुल्ला निज़ामुद्दीन की नज़्र किये होंगे।

मुहम्मद शाह रँगीले के ज़माने में लखनऊ का सूबेदार गिर्धा नाँगा नाम एक बहादुर हिन्दू रिसालदार था। उसका चचा छबीलेराम दरबारे देहली की तरफ़ से इलाहाबाद की हुकूमत पर मामूर[4] था। छबीलेराम के मरने पर गिर्धा नाँगा ने सरकशी इख़्तियार की और इरादा किया कि चचा की जगह ज़बरदस्ती इलाहाबाद का हाकिम हो जाये। मगर फिर ख़ुद ही कुछ सोचकर उसने इज़हारे-इताअत व फ़रमाँबरदारी किया और दरबार से उसे अवध की सूबेदारी का ख़िलअत अता किया गया। इसने यहाँ की सुकूनत इख़्तियार की और इसकी बीवी ने जो रानी कहलाती थी रानीकटरा आबाद किया। मगर यहाँ का हाकिम और सूबेदार चाहे कोई हो, शेख़ज़ादों का इस क़दर ज़ोर था कि किसी वाली[5] को चाहे कैसा ही ज़बरदस्त हो

१ ज्ञानार्थी, विद्यार्थी २ यात्री ३ आरम्भ ४ नियुक्त ५ शासक।

२$\overset{४}{१}$१ जो रहम नहीं करता उस पर रहम नहीं किया जाता

हज़्रत अबू हुरैरः (र०) से रिवायत है कि नबी सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने हसन बिन अ़ली (र०) को प्यार किया। आपके पास अक़रअ़ (र०) बिन हाबिस खड़े थे। उन्होंने कहा या रसूलल्लाह! हमारे दस लड़के हैं और हम किसी को प्यार नहीं करते। आपने फ़रमाया जो किसी पर रहम नहीं करता उस पर रहम नहीं किया जाता। [बुख़ारी-मुस्लिम]

२$\overset{६}{१}$२ बच्चों को प्यार

हज़्रत आयशः (र०) से रिवायत है कि अ़रब के कुछ लोग नबी सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के पास आये और कहा, आप क्या अपने बच्चों को प्यार करते हैं। आपने फ़रमाया हाँ। उन्होंने कहा ख़ुदा की क़सम हम नहीं प्यार करते। आपने फ़रमाया, जब ख़ुदा तआ़ला तुम लोगों के दिलों से अपनी रहमत को खींच ले तो मैं क्या कर सकता हूँ। [बुख़ारी-मुस्लिम]

२$\overset{६}{१}$३ रहम व मिहरबानी

हज़्रत जरीर (र०) बिन अब्दुल्लाह से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया जो लोगों पर रहम नहीं करता अल्लाह तआ़ला उस पर रहम नहीं फ़रमाता। [बुख़ारी-मुस्लिम]

२$\overset{७}{१}$४ कमज़ोरों और बीमारों के ख़याल से हल्की नमाज़

हज़्रत अबू हुरैरः (र०) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया जब लोगों के साथ नमाज़ पढ़ो तो नमाज़ हल्की कर दो। इसलिए कि उनमें कमज़ोर भी हैं, बीमार भी हैं और बूढ़े भी हैं। और जब अकेले पढ़ो तो जितनी चाहे लम्बी कर दो। [बुख़ारी-मुस्लिम]

और एक रिवायत में आया है कि ज़रूरत मन्द भी तुम्हारे पीछे होते हैं।

२$\overset{८}{१}$८ आँहज़्रत (स०) की मुसलमानों के साथ रिआ़यत

हज़्रत आयशः (र०) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम बाज़ ऐसे अमल जिनको आप बहुत पसन्द फ़रमाते थे सिर्फ़ इसलिए छोड़ देते थे कि अगर मुसलमान इसको करने लगेंगे तो उन पर फ़र्ज़ कर दिया जायेगा। [बुख़ारी-मुस्लिम]

हज़्रत आयशः (र०) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने लोगों को पै दर पै रोज़ः रखने से मना फ़रमाया तो उन्होंने कहा, या रसूलल्लाह आप भी तो पै दर पै रोज़े रखते हैं। आपने फ़रमाया मैं तुम्हारी तरह नहीं हूँ। मैं ऐसी हालत पर रात गुज़ारता हूँ कि मेरा रब मुझे खिलाता पिलाता है। [बुख़ारी-मुस्लिम]

९/२१६ छोटे बच्चे की माँ की रिआयत

हज़्रत अबू क़तादह (र०) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि मैं नमाज़ के लिए खड़ा होता हूँ और नमाज़ लाँबी करने का इरादा करता हूँ इतने में मैं किसी बच्चे का रोना सुनता हूँ तो इस बात को नापसन्द करते हुए नमाज़ को मुख़्तसर कर देता हूँ कि उसकी माँ को तकलीफ़ होगी। [बुख़ारी-मुस्लिम]

१०/२१७ अल्लाह की अमान[1]

हज़्रत जुन्दुब (र०) बिन अब्दुल्लाह से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया, जिसने सुबह की नमाज़ पढ़ी वह अल्लाह की अमान में[1] हो गया। पस देखो अल्लाह तुमसे अपनी अमान के मुतअल्लिक़ मुतालबा[2] न करे। और जिससे उसने अपनी अमान के मुतअल्लिक़ मुतालबा कर लिया❀ तो उसको पा लेगा। फिर उसको औन्धे मुँह जहन्नम की आग में गिरा देगा। [मुस्लिम]

११/२१८ मुसलमान का मुसलमान पर हक़

हज़्रत इब्नि उमर (र०) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि मुसलमान भाई भाई हैं। न उस पर ज़ुल्म करे न उसको बे यार व मददगार छोड़े। और जो किसी की हाजत पूरी करेगा तो अल्लाह उसकी हाजत पूरी करेगा। जो किसी की तकलीफ़ को दूर करेगा अल्लाह तआला उसकी तकलीफ़ क़ियामत के दिन दूर करेगा। जो किसी की सत्रपोशी[3] करेगा अल्लाह तआला क़ियामत के दिन उसकी सत्रपोशी करेगा। [बुख़ारी-मुस्लिम]

१२/२१९ मुसलमान की तहक़ीर[4]

हज़्रत अबू हुरैरः (र०) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु

❀ यानी जिसने सुबह की नमाज़ पढ़ने वाले मुसलमान को कोई तकलीफ़ दी तो उसके ख़िलाफ़ अल्लाह ख़ुद मुद्दई होगा।

---

१ शरण, सुरक्षा २ (अपने हक़ की) माँग ३ ऐबों को ढकना ४ अपमान।

अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि मुसलमान भाई भाई हैं। न उनकी ख़ियानत[1] करे, न उनसे झूठ बोले, न उनको रुस्वा करे। हर मुसलमान पर मुसलमान का ख़ून, उसका माल और उसकी इज़्ज़त हराम है। आपने फ़रमाया तक़्वा यहाँ है (यानी दिल में है।)§ और इन्सान के लिए इतनी ही बुराई काफ़ी है कि वह अपने मुसलमान भाई को हक़ीर समझे। [तिर्मिज़ी]

२२० मुसलमान के हुक़ूक़

हज़्रत अबू हुरैरः (र०) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया एक दूसरे से हसद न करो। और आपस में झगड़ा न करो। एक दूसरे से ग़ुस्सा न करो। और न क़तअ़ रह्मी करो। और सौदा लेके मोल तोल हो जाने पर दूसरा अपना सौदा न पेश करे†। और अल्लाह के बन्दे भाई भाई हो जाओ। मुसलमान मुसलमान का भाई है। न उस पर ज़ुल्म करे न हक़ीर समझे न ज़लील करे। और तक़्वा[2] यहाँ है। आपने अपने सीने की तरफ़ तीन मर्तबा इशारा किया और इन्सान के लिए इतनी ही बुराई काफ़ी है कि वह अपने मुसलमान भाई को हक़ीर समझे। मुसलमान पर मुसलमान का ख़ून, उसका माल, उसकी इज़्ज़त हराम है। [मुस्लिम]

२२१ मोमिन की तारीफ़

हज़्रत अनस (र०) से रिवायत है कि नबी सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि कोई मोमिन नहीं हो सकता जब तक कि वही अपने भाई के लिए न चाहे जो अपने लिए चाहता है। [बुख़ारी-मुस्लिम]

२२२ ज़ालिम की मदद क्या है

हज़्रत अनस (र०) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि अपने मुसलमान भाई की मदद करो। वह ज़ालिम हो या मज़लूम। एक आदमी ने कहा या रसूलल्लाह मज़लूम

§ यानी ख़ौफ़ ख़ुदा का अस्ल मुक़ाम इन्सान का दिल है। रियाकारी[3] और मुनाफ़िक़ाना ज़ाहिरदारी से कुछ नहीं होता।

† एक मुसलमान ताजिर से सौदा हो गया। दूसरे ताजिर ने क़सदन क़ीमत कम कर दी और कहा मैं इतने में देता हूँ। पहले का नुक़सान हो गया। यह नहीं चाहिए।

१ दूसरे का माल हड़प लेना २ संयम ३ पाखण्ड।

हो तो उसकी मदद करूँ और ज़ालिम की मदद किस तरह करूँ। आपने फ़रमाया, उसको ज़ुल्म से रोको और मना करो यह उसकी मदद है।

[बुख़ारी]

१९/२२३ मुसलमान के पाँच हक़ हैं

हज़्रत अबू हुरैर: (र०) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया, मुसलमान के मुसलमान पर पाँच हक़ हैं। (१) सलाम का जवाब देना। (२) मरीज़ की इयादत करना[1] (३) जनाज़े के साथ होना (४) दावत क़ुबूल करना (५) छींक पर यरहमुकल्लाह[2] कहना। [बुख़ारी-मुस्लिम]

मुस्लिम की एक रिवायत में है कि मुसलमान पर मुसलमान के छः हक़ हैं। (१) जब मुलाक़ात हो तो सलाम करे। (२) दावत दी जाये तो क़ुबूल करे। (३) जब नसीहत चाहे तो ख़ैरख़्वाही करे। (४) जब छींक आये तो यरहमुकल्लाह कहे। (५) बीमार की इयादत करे। (६) जनाज़े के साथ हो।

हज़्रत बरा बिन आज़िब (र०) से रिवायत है कि हमको रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने सात चीज़ों का हुक्म दिया है। और सात चीज़ों से मना फ़रमाया है। हुक्म यह हैं कि (१) मरीज़ की इयादत करो। (२) जनाज़े के साथ हो (३) छींक पर यरहमुकल्लाह कहो (४) क़सम खाने वाले की क़सम पूरी करो। (५) मज़लूम की मदद करो। (६) दावत को क़ुबूल करो। (७) और सलाम को फैलाओ। सोने की अँगूठियों से या सोने की अँगूठी पहनने से, चाँदी के बर्तन में पानी पीने से, सुर्ख़ कपड़ों से, रेशम के कपड़ों से और इस्तबराक़[3] और दीबा[4] से मना फ़रमाया है। [बुख़ारी-मुस्लिम]

मुसलमानों के अुयूब[5] की पर्द:पोशी[6]

आयात

अिन्नल्लज़ीन युहिब्बून अन् तशीअल्फ़ाहिशतु फ़िल्लज़ीन आमनू लहुम् अ़ज़ाबुन् अलीमुन् ला फ़िद्दुन्या वल्आख़िरति त ...

१ रोगी को सान्त्वना देना २ अल्लाह तुम्हारे ऊपर रहम करे ३ रेशमी वस्त्र
४ कढ़ा हुआ एक विशेष रेशमी कपड़ा ५ ऐबों ६ पर्दः डालना, ढँकना।

बेशक जो लोग चाहते हैं कि ईमानवालों में बेहयाई और बदअख़लाक़ी फैले उनके लिए दुनिया और आख़िरत में दर्दनाक अ़ज़ाब है।

[सू० नूर, रु० २ आ० १६]

अहादीस

२२७[1] दुनिया में पर्दःपोशी से आख़िरत में पर्दःपोशी

हज़्रत अबू हुरैरः (र०) से रिवायत है कि जो अल्लाह का बन्दः किसी अल्लाह के बन्दे की सत्रपोशी करेगा अल्लाह उसकी क़ियामत में पर्दःपोशी करेगा। [मुस्लिम]

२२८[2] गुनाह का एलान

हज़्रत अबू हुरैरः (र०) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया, मेरी उम्मत के सब लोग मुआ़फ़ कर दिये जायेंगे। सिवाये* अलानिया गुनाह करने वालों के और अलानिया गुनाह करना यह है कि आदमी रात को कोई गुनाह करे और वह छुपा ढका हो फिर सुबह ख़ुद ही उसका एलान कर दे और कहे कि मैंने रात को इस तरह किया। अल्लाह ने तो उसको छुपाया था। उसने ख़ुद ही अपना पर्दःफ़ाश किया। [बुख़ारी-मुस्लिम]

२२६[3] लौण्डी की सज़ा

हज़्रत अबू हुरैरः (र०) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया जब लौण्डी बदकारी करे और उसके उस फ़ेल की तहक़ीक हो जाये तो उसको हद लगाई जाये। और डाँट फटकार न की जाये। फिर अगर दोबारा उससे यह फ़ेल सरज़द हो तो उसकी हद लगाई जाये, और ज़ज्र[1] व तौबीख़[2] न की जाये। अगर तीसरीबार फिर यही अमल करे तो उसको बेंच डाले। ख़्वाह बाल की रस्सी के मुआवज़ः[3] में। [बुख़ारी-मुस्लिम]

२३०[4] शराब पीने की सज़ा

हज़्रत अबू हुरैरः (र०) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में एक आदमी लाया गया जिसने शराब पी थी।

* इसलिए कि इससे ख़ुदा के मुआ़मले में जुरअत का इज़्हार होता है। और लोगों को शह होती है।

१ डाँट-डपट २ झिड़कना ३ बदले में।

आपने फ़रमाया, इसको मारो पीटो। हज़्रत अबू हुरैरः (र०) कहते हैं कि फिर कोई तो हाथ से मार रहा था कोई जूतों से, कोई कपड़ों से, जब वह वापस चला तो एक शख़्स ने कहा कि अल्लाह तुझे रुस्वा करे। आपने फ़रमाया, यह मत कहो। शैतान की इसके मुक़ाबले में मदद न करो♦।
[बुख़ारी]

मुसलमानों की हजातरवाई[1]

आयात

…वफ़्अलुल्ख़ैर लअ़ल्लकुम् तुफ़्लिहून ज।

भलाई करो, शायद कि तुम फ़लाह[2] पाओ।

[सू० हज, रु० १० आ० ७७]

अहादीस

२३८ मुसलमानों की मदद की फ़ज़ीलत[3] और नफ़ा[4]

हज़्रत इब्नि उमर (र०) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया, मुसलमान भाई भाई हैं। न उन पर ज़ुल्म करे और न बे यार व मददगार छोड़े। और जो अपने भाई की हाजत पूरी करेगा अल्लाह उसकी हाजत पूरी करेगा। और जो किसी मुसलमान की तकलीफ़ को दूर करेगा अल्लाह तआ़ला क़ियामत के दिन उसकी तकलीफ़ों में से एक तकलीफ़ को दूर फ़रमायेगा। और जो किसी मुसलमान की सत्रपोशी करेगा अल्लाह तआ़ला क़ियामत के दिन उसकी सत्रपोशी फ़रमायेगा। [बुख़ारी-मुस्लिम]

हज़्रत अबू हुरैरः (र०) से रिवायत है कि नबी (स०) ने फ़रमाया जो किसी मोमिन की दुनयावी मुसीबतों में से एक मुसीबत को दूर करेगा अल्लाह तआ़ला उसकी आख़िरत की मुसीबतों में एक मुसीबत को दूर करेगा। और जो किसी मुश्किल वाले की मुश्किल आसान करेगा

♦ यानी सज़ा तो यह भुगत चुका अब इसके लिए हिदायत व इस्लाह की दुआ़ करो।

१ कामना-पूर्ति २ कृतार्थता, सफलता ३ श्रेष्ठता ४ लाभ।

अल्लाह् तआ़ला उसकी मुश्किल दुनिया और आख़िरत में आसान करेगा और जो किसी मुसलमान की सत्रपोशी करेगा अल्लाह् तआ़ला दुनिया और आख़िरत में उसकी सत्रपोशी फ़र्मायेगा। और जो अपने भाई की मदद में होगा अल्लाह उसकी मदद में होगा। और जो अ़िल्म की तलाश में रास्ता तै करेगा अल्लाह् उसके लिए जन्नत का रास्ता आसान फ़रमायेगा। और जो लोग अल्लाह् के घरों में से किसी घर यानी मस्जिद में जमा होंगे और अल्लाह् की किताब पढ़ेंगे और आपस में सुनायेंगे तो उनके दिलों पर तस्कीन[1] उतरेगी। और रहमत उनको ढाँप लेगी। और फ़िरिश्ते उनको घेर लेंगें और अल्लाह् तआ़ला अपने पास वालों में उनका ज़िक्र फ़रमायेगा। और जो अपने अ़मल में सुस्ती करेगा तो उसको उसका नसब[2] नहीं बढ़ा सकता†। [मुस्लिम]

सिफ़ारिश

आयात

मँय्यशफ़ऽ शफ़ाअ़तन् ह़सनतंय्यकुल्लहु नसीबुम्मिन्हा ... ।

जिसने किसी के लिए अच्छी सिफ़ारिश की तो उसको उसका अज्र मिलेगा। [सू० निसाअि रु० ११ आ० ८५]

अह़ादीस

२२१ सिफ़ारिश की तर्ग़ीब

हज़्रत अबू मूसा अशअ़री (र०) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के पास जब कोई हाजतमन्द[3] आता तो आप अपने हमनशीनों[4] से फ़रमाते कि सिफ़ारिश करो। इसका अज्र मिलेगा। और फ़ैसला अल्लाह तआ़ला अपने नबी की ज़बान पर जैसा चाहे करेगा§। [बुख़ारी व मुस्लिम]

† यानी अ़मल[5] में कोताही की तलाफ़ी नसब[6] से नहीं हो सकती और नसब अ़मल का क़ायममुक़ाम[7] नहीं हो सकता।

§ यानी तुम सिफ़ारिश के सवाब से क्यों महरूम[8] रहो।

१ चैन, संतोष २ कुलीनता ३ ज़रूरतमंदों ४ साथ बैठने वालों ५ आचरण ६ कुलीनता ७ स्थानापन्न, पूरक ८ वञ्चित।

२३० सिफ़ारिश का क़ुबूल करना ज़रूरी नहीं

हज़्रत इब्नि अब्बास (र०) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने* बरीरः (र०) से फ़रमाया, अपने शौहर की तरफ़ पलट जाओ। उन्होंने कहा या रसूलल्लाह! क्या हमको हुक्म देते हैं? आप ने फ़रमाया, नहीं, मैं तो सिफ़ारिश करता† हूँ। बोलीं मुझको इसकी हाजत नहीं§। [बुख़ारी]

लोगों के दरमियान मुसालहत[1]

आयात

ला ख़ैर फ़ी कसीरिम्मिन्नज्वाहुम् अिल्ला मन् अमर बिसदक़तिन् औ मअ़रूफ़िन् औ अिस्लाहिम्-बैनन्नासि … ।

इनकी बहुत सी सरगोशियों[2] में भलाई नहीं मगर जो सदक़ा का हुक्म दे या भलाई का और लोगों के दर्मियान इस्लाह[1] का।

[सू० निसाअि रु० १७ आ० ११४]

…वस्सुल्हु ख़ैरुन् …

और सुलह बेहतर है। [सू० निसाअि रु० ११ आ० १२८]

…फ़त्तक़ुल्लाह व अस्लिहू ज़ात बैनिकुम् …

अल्लाह से डरो और आपस में सुलह क़ायम करो।

[सू० अन्फ़ालि रु० १ आ० १]

अिन्नमल्-मुअ्मिनून अिख़्वतुन् फ़अस्लिहू बैन अख़वैकुम्… ।

---

* हज़्रत बरीरः (र०) को हज़्रत आयशा (र०) ने आज़ाद किया। हज़्रत बरीरः (र०) के शौहर गुलामी की हालत में थे। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने बरीरः (र०) को निकाह बाक़ी रखने और फ़स्ख़ करने[3] का इख़्तियार दिया था। पस वह अपने शौहर से अलग हो गयी थीं।

† हुज़ूर ने सिफ़ारिश इस वजह से की थी कि हज़्रत बरीरः (र०) के शौहर बरीरः (र०) के ग़म में रोते फिरते थे तो हुज़ूर को तरस आता था।

§ मालूम हुआ हुक्म टाला नहीं जा सकता। सिफ़ारिश के बारे में इख़्तियार है।

---

१ समझौता, सुलह २ कानाफूसियों ३ तोड़ देने।

फिर गुरु-गौरव का विनाश करके (अर्थात् गुरुजनों के प्रति असम्मान-प्रदर्शनपूर्वक) खुले आम गमन किया। गुरुजनों ने भी राम के आगमन का संवाद पाया था तथा वे स्वयं भी उद्विग्न हुए थे। इसलिए स्त्रियों को वे वारण (मना) नहीं कर सके। और जितनी स्त्रियाँ अपने वेश-विन्यास में लगी थीं, उनमें से किसी-किसी ने कस्तूरी को कज्जल के मिस आखों में लगाया। (९)

बक्षस्थळे केउँ बाळा किंकिणीकि लम्बाइला
चापसरिकि खञ्जिला मध्यदेशरे।
बेशकारी के काहार सिन्दूर देला पयर
चिता ललाटरे लेखे लाक्षारसरे।
बिबन्ध करि के चिकुर।
बेगे कंकतिकारे शामळे चामर। १०।

सरलार्थ—किसी बाला ने भ्रमवशतः करधनी को वक्षस्थल पर धारण किया। चापसरी (कण्ठाभरणविशेष) को कमर पर पहना। किसी स्त्री की वेशकारिणी ने अलता के भ्रम में सिन्दूर को पैर में लगाया और अलता को लेकर ललाट पर बिन्दी लगाई। कोई स्त्री केशों को खोले शीघ्रता से चँवर को बाल समझकर कंघी से उसे (चँवर को) सँवार रही है। (१०)

किंकिणी—करधनी; चापसरी—कण्ठाभरण विशेष, चीलमीलिका; लाक्षारस—लाख का रस, अलता; बिबन्ध करि—मुक्त, मुकुलित, खोलकर; चिकुर—केश, बाल; कंकतिका—कंघी; शामळे—सँवारती हैं; चामर—चँवर। (१०)

बसिथिला पतिकोळ के घेनि पतित मेळ
गति करि[1] युबा देखा गति से करि[2]।
विपरीत काहा साईं मागुँ देखिबा आशायी
रीति दुइ पुंसे भाषे पुष्पे संचरि।
बळा खञ्जु के मानी भाषि।
बल्लभे भुलाइ केबे नुहइ दोषी। ११।

सरलार्थ—कोई रमणी अपने पति की गोद में बैठी हुई थी। उस मिलन को तुच्छ समझकर—युवक रामचन्द्र जी के दर्शन से गति (मुक्ति) मिलेगी—यह सोचती हुई पति को त्यागकर रामचन्द्रजी के दर्शन के लिए जाने लगी। किसी का पति पत्नी से विपरीत रति माँग रहा था। उधर पत्नी रामचन्द्रजी के दर्शन के लिए आशायी हो रही थी। इन दोनों में से किसके प्रति वह पहले ध्यान दे? अन्त में रामचन्द्रजी का दर्शन-लोभ

प्रबल पड़ा। इसलिए अपने पुरुष से उसने बहाना किया कि मैं रजोवती हुई हूँ। किसी का पति रमणी के पैर में पायजेब पहना रहा था। उस समय रमणी ने रूठकर अपने पति से कहा, "मैं दोषी तो नहीं हूँ, मुझे क्यों बेड़ी लगा रहे हो ?" (स्त्रियाँ साधारणतया अलंकार-प्रिय हैं। परन्तु उस स्त्री की रामदर्शन के लिए आशा इतनी प्रबल हो उठी थी कि उसने पायजेब को एक बेड़ी की तरह समझा और इस तरह अपने पति को भुलाकर रामदर्शन के लिए) वह स्त्री भागने को उतावली हुई। (११)

पतित—तुच्छ; मेळ—मिलन, गति करि[१]—गमन किया, गति करि[२]—मुक्ति समझकर (श्लेष); भाषि—कहा, बोली; बल्लभे—पति को (से) (११)।

बयसी ए गीत गाइ के रामा वीणा बजाइ
थोइअछि भाबि चाहिँ कुच रोमाळी।
बाजित किंकिणी स्वर मणित धाउँ प्रचार
आम्भठारे देला भाळि गमिला आळी।
बिसोर से रागरे राग।
बोलुथिले रामकेरी 'र' 'ळ' संयोग।१२।

सरलार्थ--कोई तरुणी युवती गीत गा रही थी। उसकी सखी उस गीत का अनुसरण करती हुई बीणा बजा रही थी। राम-लक्ष्मण आये हैं—यह संवाद सुनकर वीणा फेंककर वह युवती दौड़ पड़ी। उसके दौड़ने से उसकी कमर की करधनी बज उठी। तो युवती वास्तव परिस्थिति के प्रति सजग हो उठी। उसने अपने कुच को वीणा तथा रोमावली को बीणा के तार तथा अपनी करधनी की ध्वनि को वीणा का स्वर समझकर सोचा, "सखी मेरे शरीर में वीणा रखकर भाग गई क्या ?" यह सोचती हुई वह जाने लगी। रामदर्शन के लिए जो अनुराग उत्पन्न हुआ, उस अनुराग से गायिका अपने गीत का राग भूल गई। वह 'रामकेरी' राग गा रही थी। चित्त-विभ्रम के कारण 'रामकेरी' राग रामकेळि हो गया; अर्थात् अन्तिम 'र' अक्षर 'ळ' हो गया। (१२)

बान्धव बान्धवी रञ्जि परस्परे भुञ्जाभुञ्जि
पान तुच्छा कर दिआदेइ होइले।
बाहु बाहु आलिंगन लतिका तरु समान
तरुण तरुणी थिले तेजि धाइँले।
बामा केहि हरिद्रा घेने।
बिच्छित्ति देखाइ गला न पोछि स्नाने।१३।

सरलार्थ--कोई नायक-नायिका अनुराग सहित एक दूसरे को पान खिला रहे थे। वे राम-दर्शन की आशा से उद्विग्न होकर एक दूसरे के प्रति खाली हाथ पसारने लगे। कोई तरुण-तरुणी वृक्ष-लता के समान एक दूसरे को बाहुओं से आलिंगन कर रहे थे। वे उसे त्याग कर राम के दर्शन के लिए दौड़े। कोई स्त्री अपने शरीर पर हलदी लगा रही थी। स्नान समाप्त करके, परन्तु शरीर को बिना पोंछे, अंग-छटा दिखाती राम के दर्शन के लिए वह दौड़ने लगी। (१३)

विच्छित्ति—रूप-लावण्य, अंगछटा। (१३)

बधू पात्र सामन्तङ्क श्रवणे अति उत्सुक
जगती[1] गतिकि देखि सखीए भाषे।
बड़भी[1] लभिल नाहिँ बड़-भी[2] लभिब चाहिँ
जगती[2]-गति-दाताङ्कु अनङ्ग वशे।
बाटि श्रमी हेबुँ उशीर।
बाधिब सरिब बेनि शिशिर कर। १४।

सरलार्थ—राज-मन्त्रियों और सामन्तों की स्त्रियाँ राम के आगमन की वार्त्ता सुनकर उन्हें देखने के लिए उत्सुक हो प्रासाद पर चढ़ीं। यह देखकर किसी सखी ने कहा, "तुम लोगों ने 'बड़ भी' (चन्द्रशाला, प्रसाद) तो प्राप्त नहीं की, बल्कि जगत के गति-मुक्तिदायक राम को देखकर कन्दर्प के वश से बड़-भी (बड़ा भय) प्राप्त करने को ऊपर गयीं। हम लोग उशीर (खस) बाटकर थक जाएंगी। दोनों अर्थों में शिशिरकर (चन्द्रकिरण तथा कर्पूर) में से चन्द्रकिरण तुम लोगों के लिए कष्टकर होगी और कर्पूर जगत से समाप्त हो जाएगा। (अर्थात् राम को देखकर तुम लोग विरह-ज्वाला से सन्तापित होगी। तुम लोगों को ठंडी करने के लिए हम उशीर बाटते-बाटते थक जाएँगी, तुम लोगों पर प्रयोग से कर्पूर का चूरा जगत् से समाप्त हो जाएगा और चन्द्र की किरणें विष तुल्य कष्टदायक होंगी।) (१४)

पात्र—राजमन्त्री, सामन्त—अधीन के राजा; जगती[1]—प्रासाद; बड़भी[1]—चन्द्रशाला, बड़-भी[2]—बड़ा भय (यमक); जगती[2]—जगत (यमक); श्रमी हेबुँ—थक जाएँगी; उशीर—गाँडर, खस; बेनि—दोनों अर्थों में; शिशिरकर—चन्द्रकिरण, कर्पूर (श्लेष)। (१४)

बिग्रह त्वरा आरम्भे सुन्दर दर्शन लोभे
प्रभञ्जन-पथ प्रभञ्जन होइब ।
विश्वस्ते जात एतेक लाभ हृद-संपुटक
मध्यरे से मनोरम-मणि थोइब ।
बोले से तुम्भर नोहिब ।
बञ्चना कलाणि केते काळुँ दइब । १५ ।

सरलार्थ—एक सखी ने झरोखे के पास दौड़ती हुई दूसरी स्त्रियों से कहा, "रामचन्द्रजी का सुन्दर रूप देखने के लिए तुम लोग उतावली हो झरोखे के पास जा रही हो । उन रामचन्द्र रूपी मनोरम मणि को तुम लोग अपने हृदय-संपुटक में रखोगी--इतना ही विश्वास तुम लोगों को प्राप्त होगा, (अर्थात् इसमें कोई सन्देह नहीं कि उनके सौन्दर्य को तुम लोग देखकर मुग्ध होगी और उनकी भावना हमेशा करती रहोगी । परन्तु वास्तव में उनको प्राप्त नहीं कर सकतीं ।) उनकी विरह-चिन्ता में अधीर होते समय पवन तुम लोगों के लिए असह्य होगा । इसलिए ये झरोखे (जिनके पास रामदर्शन के लिए तुम लोग अभी दौड़ी जा रही हो) अपमान से टूट जाएंगे । वे राम तुम लोगों के कभी नहीं हो सकते । विधाता ने तुम लोगों को ऐसे लाभ की आशा से वञ्चित किया है क्योंकि तुम लोग विवाहिता हो" । (१५)

बिग्रह—रूप, शरीर; प्रभञ्जनपथ—गवाक्ष, झरोखा; प्रभञ्जन—विशेष रूप से भग्न; हृद-संपुटक—हृदयरूपी संपुटक, डिब्बा । (१५)

बिबुधाळय जगती स्थिति नारी सुरी-भ्रान्ति
सुमना मनमोहन छबि ग्राहार ।
बिळुँ बाहारिला परि नाग-नागरी चातुरी
मणि-भूषणी मध्यरु ग्रेते बाहार ।
बेभारे त मानवी सर्वे ।
विशुद्ध त्रिपुर लीळा तहिँ सम्भवे । १६ ।

सरलार्थ—मेरु सदृश ऊँचे प्रासादों पर खड़ी नारियाँ स्वर्गपुरस्थिता देवांगनाओं की भ्रान्ति उपजा रही हैं । देवांगनाओं की छबियाँ जैसे देवताओं के मन मुग्ध करती हैं उसी प्रकार प्रासादों पर स्थित नारियों की छबियाँ पण्डितों के मन मुग्ध कर रही हैं । (इससे मिथिलापुर पर स्वर्ग-लोक का आरोप हो गया ।) पुरों से निकलती हुई मणिभूषित स्त्रियाँ नागकन्याओं की भाँति (क्योंकि नागकन्याएँ बिलों से निकलती हैं और उनके सिरों पर मणियाँ होती हैं) प्रतीत हुईं । (इससे मिथिलापुर

पर पाताल का आरोप हुआ।) परन्तु वास्तव में सभी मानवियाँ (मर्त्य की नारियाँ) हैं। (इससे मिथिलापुर का मर्त्यलोक होना सूचित हुआ।) इस प्रकार उस मिथिलापुर में स्वर्ग, मर्त्य तथा पाताल—इन तीन लोकों की लीला सम्भव हुई। (१६)

विबुधाळय—मेरुपर्वत, स्वर्गपुर; जगती—प्रासाद; सुरी—देवांगनाएँ; सुमना—देवता, पण्डित; बेभारे—वास्तव में; तहिँ—वहाँ (मिथिला में); (श्लेष तथा उपमा अलंकार) (१६)

बामा काळे भानुवामा प्रसव सूनु सुषमा
लक्षित हुअन्ता आन आनन प्रभा।
बरन वसन धरे नीळ पीत परस्परे
स्मर मधु आलिंगन बिहिला शोभा।
बिह्वळित दम्भ अनाइ।
वास कला चित्त राम लक्ष्मणे याइ। १७।

सरलार्थ—सूर्यपत्नी संज्ञा ने घोड़ी के रूप में जिन दो पुत्रों को (अश्विनकुमार द्वय को) उत्पन्न किया था, उन्हीं दोनों अश्विनीकुमारों की शोभा राम-लक्ष्मण की शोभा के साथ तुलनीय हो सकती, यदि उनके मुख घोड़ों के समान न होकर दूसरे प्रकार के होते। ये दोनों (राम और लक्ष्मण) क्रमशः पीला तथा नीला वस्त्र पहने हुए हैं, इसलिए कन्दर्प तथा वसन्त के आलिंगन से जो शोभा होती है वही शोभा इन दोनों ने धारण की है। उस शोभा का निरीक्षण करने से धैर्य विचलित हो गया और चित्त जाकर राम-लक्ष्मण में बस गया। (१७)

वामाकाळे—घोटकी का रूप धारण करते समय; भानुवामा—सूर्यपत्नी, संज्ञा (और उनकी तुल्याकृति-विशिष्टा रमणी छाया); सूनु—पुत्र; सुषमा—शोभा; आन—दूसरा; आनन—मुख; स्मर—कन्दर्प, मधु—वसन्त। (१७)

बाड़े ये आउजि रहि चित्र प्रतिमा कि सेहि
निरवलम्बिनी कि इन्धन पितुळा।
बन्धकी स्वभाव लुटि पतिव्रता कले हटि
स्तम्भटि महत सृष्टि तांक रखिला।
बोलन्ति कि काहा शुणन्ति।
विज्ञात नोहे मादकी चेता आकृति। १८।

सरलार्थ—रामचन्द्र के दर्शन से काम-विकार उत्पन्न हो जाने पर भीत पर पीठ लगाई हुई स्त्रियाँ चित्र-पुतलियों तथा बिना किसी अवलम्बन के खड़ी स्त्रियाँ लकड़ी से बनी गुड़ियों की तरह दीख पड़ीं। पतिव्रता स्त्रियों

ने विटपी स्त्रियों के स्वभाव को छीन कर ग्रहण कर लिया, अर्थात् लज्जाहीना असती स्त्रियों की भाँति नाना हाव-भाव दिखाये। परन्तु जड़ता ने उनकी लज्जा बचाई। जड़वत् खड़ी होने के कारण वे कुछ नहीं कर सकीं। (अन्यथा वे दौड़कर रामलक्ष्मण को गले लगा लेतीं।) शराबियों की भाँति पतिव्रता नारियाँ काम-विकार के कारण विह्वल हो उठीं और वे क्या बोल रही हैं या क्या कर रही हैं, यह कुछ भी न जान सकीं। (१८)

बन्धकी—असती, विटपी; मादकी—मद्यप, शराबी। (१८)

वैदेही विमळदेही कमळ केशरे नाहिँ
सही सहितरे थिले मण्डि अट्टाळी।
बिहि लोकने प्रशंसा कळांगे कले लाळसा
गउरे गउरबता नेत्र न ढाळि।
बर देवरे[1] य्रे मनासे।
बरदेवर[2] हेबाकु मानसे घोषे। १९।

सरलार्थ—कमल के केशरों से अधिक सुन्दरी निर्मल-शरीरवाली विदेह-नन्दिनी सीता अपनी सखियों के सहित प्रासाद को मण्डित किए बैठी हुई थीं। (अर्थात् उनके बैठने से प्रासाद सुन्दर दिखाई दे रहा था।) उन्होंने राम तथा लक्ष्मण को देखकर उनकी प्रशंसा की। श्याम शरीर वाले रामचन्द्र के प्रति उन्होंने अभिलाषा की और गोरे अंग वाले लक्ष्मण में गौरव का अनुभव करके उनके प्रति कटाक्षपात नहीं किया। (सीता स्वयं गौरवर्णा होने की वजह से गौरवर्णवाले लक्ष्मण के प्रति आकृष्ट न होकर श्यामल वर्ण वाले रामचन्द्र के प्रति आकृष्ट हुईं। क्योंकि भिन्न-भिन्न वर्णों के समन्वय से शोभा की वृद्धि होती है।) राम तथा लक्ष्मण को क्रमशः वर और देवर के रूप में पाने के लिए वे महादेवजी की मनुहार (खुशामद) करने लगीं। (१९)

कळांगे—काले अंगवाले श्रीरामचन्द्रजी की; लालसा—अभिलाषा; वरदेवरे[1]—श्रेष्ठ देव (महादेव) को; मनासे—मनाती हैं, वरदेवर[2]—स्वामी तथा देवर (यमक); मानसे—मनमें; घोषे—रटती हैं। (१९)

बामलोचन[1] स्फुरिता बाममोचन[2] विधाता
पाञ्चु पुलक पुलक कपोळे दिशि।
बृद्धबयः संगीवार भांगिव ए धनुवर
मनरे एमन्त कर ता जाणि भाषि।
व्यकत एमन्त बचन।
विश्वास निःश्वास हास नासा आनन। २०।

सरलार्थ—(ऐसा विचार करते समय) सीताजी की बायीं आँख फड़कने लगी। तो उन्होंने सोचा कि विधाता ने मेरी प्रतिकूलता को दूर किया। (अर्थात् सारी बाधाओं को हटा दिया।) उस समय उनके गण्डस्थलों (कपोलों) पर पुलक (रोमाञ्च) प्रकट हुआ। वयोज्येष्ठा (बड़ी आयुवाली) सखियों ने उनके नयनों तथा गण्डस्थलों के विकार को देखकर कहा, "हे सीते! यह पुरुष निश्चय ही धनुश्रेष्ठ शिवधनुष को तोड़ेगा। यह ठीक ही जानो।" सखियों द्वारा यह कथा प्रकाशित हो जाने से सीता की नासिका से निःश्वास और मुख से हास्य (अत्यधिक आनन्द के कारण) प्रकाशित हुआ। यह शुभसूचक है, इसलिए सीता ने सखियों की बात पर विश्वास किया। (२०)

वामलोचन[१]—बायीं आँखें; वाममोचन[२]—बाधाओं का दूरीकरण; (यमक); वृद्धवयः सङ्गीवार—बड़ी सखियों का समूह। (२०)

विप्रळाप थाइ भाषे मनमाया ये रभसे
ए य़ोग तोर कर्मरे अछि घेन रे।
व्यलीक ए कि जनक नारीकेळ सदृशक
धनुस्वयम्वर कृत तोषदानरे।
विदग्धाता चित्ते घेनिले।
बयसीगण प्रमाण प्रमाण बोले। २१।

सरलार्थ—सीताजी की ऐसी उत्कण्ठा समझकर मनमाया नाम की सखी व्यग्रता से विरोधोक्ति बोली, "री सखि! इन पुरुष को विवाह करने का योग तुम्हारे कर्म में है, यह मिथ्या नहीं। अर्थात् सम्पूर्ण सत्य है। तुम्हारे पिताजी जनक ऋषि ने तुम्हारे सन्तोष-विधानार्थ तुम्हें उपयुक्त वरपात्र प्रदान करने के लिए यह धनु-स्वयम्बर रचा है। इससे उनका हृदय नारियल के समान (बाहर कठिन, भीतर कोमल) प्रतीत हो रहा है।" चतुर सीता ने यह अपने मनमें ग्रहण किया और सखियाँ यह सुनकर 'सत्य-सत्य' बोलने लगीं। (२१)

विप्रळाप—विरोधोक्ति; रभसे—व्यग्रता से; व्यलीक—असत्य; विदग्धा—चतुरी सीता; ता—उसकी; घेनिले—ग्रहण किया; वयसीगण—सखियाँ; प्रमाण—सत्य। (२१)

बृकोदर वासवर दिगदन्ती मनोहर
बिहरि मखशाळारे प्रवेशवेळे।
बंशिक-राजा मानस मध्यरु धैर्य सारस
अस्परशे दरशने उत्पाटि नेले।
विचित्रकर्मांक आलोके।
बिदेहराज कौशिके पुच्छिले ए के?। २२।

सरलार्थ—यम तथा इन्द्र के वासस्थलों--दक्षिण तथा पूर्व–दो दिशाओं के हाथी अञ्जन व ऐरावत के सदृश मनोहर राम-लक्ष्मण ने यज्ञशाला में प्रवेश करके कुलीन राजाओं के मानस-सरोवरों से धैर्य-पद्म को बिना स्पर्श के, केवल दर्शन मात्र से उखाड़ डाला। (अञ्जन तथा ऐरावत द्वारा मानसरोवर में खिले कमलों की नालें उखाड़ी जाती हैं। उसी तरह राम-लक्ष्मण के केवल दर्शन मात्र से कुलीन राजाओं का धैर्य-लोप हो गया।) अद्भुतकर्मा रामलक्ष्मण को देखकर विदेहराज जनकजी ने विश्वामित्र से पूछा, "ये कौन हैं?" (२२)

बृकोदर—यम; वासवर—इन्द्र के; दिगदन्ती—दिशाओं के हाथी; मखशाळा—यज्ञशाला; वंशिक—कुलीन; धैर्य-सारस—धैर्यरूपी पद्म; बिचित्रकर्मा—अद्भुतकर्मा; आलोके—दर्शन से। (२२)

बळ्गिले मुनि त्वरित दशरथ बेनिसुत
बने ताड़का विनाशि रखि मो य़ाग।
बिन्यस्त करि चरण गौतम नारी तारण
शिव चाप देखिबाकु एबे उद्बेग।
बोइले देखिले देखन्तु।
बाळकुमरे कि हेब एहाङ्क हेतु?।२३।

सरलार्थ--(जनक जी का प्रश्न सुनकर) विश्वामित्र ने कहा, "राजा दशरथ के इन दो पुत्रों ने वन में ताड़का राक्षसी का बध करके मेरे यज्ञ की रक्षा की है। फिर काम्यक वन में अपने चरणों का विन्यास करके गौतम-पत्नी अहल्या को पाषाण-रूप से उद्धार किया है और अब शिवधनु देखने के लिए उद्विग्न होकर आये हुए हैं।" विश्वामित्र की बातें सुनकर जनकजी बोले, "देखेंगे तो देखने दो; परन्तु ये बालक कुमार मात्र ही हैं। इनसे क्या हो सकेगा?" (अर्थात् ये धनुष को कैसे तोड़ सकेंगे?) (२३)

बळिगले—बोले। (२३)

बाळि बळिष्ठरे सार बळ कोटिए सिंहर
भाञ्जिबा थाउ भाजिला शुणि छळित।
बिष्किरे गण्डभेरण्डे गजकु घेनिण उड़े
डाळे बसे, भारतीरे भग्न बिहित।
बोले पर्शुराम पूजिले।
ब्यभिचार क्षत्रिधर्म विप्र बोइले।२४।

त्यानें करावें विजयावर्तन। संतति संपत्ति परिपूर्ण। सदा नांदती त्याचे गृहीं। २८६ येथोनि श्रीरामचरित्रकथा गहन। श्रोतीं परिसावी सावधान। तेणें ब्रह्मानंद ठसावोन। कैवल्यपद पाविजे। २८७ ब्रह्मानंदा श्रीरघुवीरा। विषकंठ-हृदया परात्परा। वेदवंद्या श्रीधरवरा। दीनोद्धारा जगद्गुरो। २८८ स्वस्ति श्रीरामविजय ग्रंथ सुंदर। संमत वाल्मीकनाटकाधार। श्रवण करोत पंडित चतुर। तृतीयाध्याय गोड हा। २८९

॥ श्री रामचन्द्रार्पणमस्तु ॥

जिसके कोई पुत्र-सन्तान नहीं है, वह इस रामविजय ग्रन्थ का आवर्तन (पुनः पुनः पठन) करे, जिससे उसके घर में नित्य सन्तति और सम्पत्ति परिपूर्ण रूप में बनी रहेगी। २८६

यहाँ से (आगे) श्रीरामचरित्र की कथा गहन (हो जाती) है। श्रोता सावधान हो (उसे) सुनें। इससे वे ब्रह्मानन्द को प्राप्त करके कैवल्य पद प्राप्त करेंगे। २८७ हे ब्रह्मानन्द, हे श्रीरघुवर, श्रीशिवजी के हृदय में स्थित परमश्रेष्ठ और वेदों द्वारा वन्दनीय भगवान्, श्रीधर के लिए वरदान के दाता, दीनों के उद्धार-कर्ता, जगद्गुरु ! यह श्रीरामविजय नामक सुन्दर ग्रन्थ है, जो वाल्मीकि के नाटक पर आधारित है। उसका यह मधुर तीसरा अध्याय पण्डित चतुर जन श्रवण करें। २८८-२८९

अध्याय—४

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥ चतुर श्रोते करिती प्रश्न। तृतीयाध्यायीं हनुमंत-जनन। सांगितलें तुवां संपूर्ण। कथा अद्भुत नवलचि। १ आणिके पुराणीं साचार। हनुमंतजन्म-कथाप्रकार। वेगळाचि असे विचार। पृथक्-पृथक् कथियेला। २ तरी पुराणांतरीं विपरीत। कथा पडावया काय निमित्त। याचें प्रत्युत्तर यथार्थ। सांग समस्तां कळावया। ३ ऐसें श्रोतयांचें वाग्जाळ। परिसोनियां कवि कुशळ। शब्द बोले अति रसाळ। परिसा सकळ श्रोते हो। ४ अनादिसिद्ध अवतारमाळा। जगदीशें गुंफिल्या अवलीळा। जैसें तरंगापूर्वी जळा। व्यापोनियां असणें कीं। ५ जैसी रहाटघटमाळिका। तेवीं हें अवतारचरित्र देखा। कीं भगणें मित्र-मृगांका। प्रदक्षिणा करणें मेरूची। ६ कीं जपमाळेचे मणी। तेचि येती परतोनी। तैसे अवतार ब्रह्मांडभुवनीं। फिरती माळेसारिखे। ७ तरी

श्री गणेशायनमः। (श्रोता कवि श्रीधर से कहते हैं–) 'तीसरे अध्याय में तुमने हनुमान के जन्म की सम्पूर्ण कथा कही, जो अद्भुत (और) नये प्रकार की अर्थात् श्रवणीय है। वस्तुतः अन्य पुराणों में हनुमान के जन्म की कथा भिन्न प्रकार की है—उनमें इस सम्बन्ध में बात भिन्न-भिन्न (प्रकार से) कही हुई है।' (यह कहकर) चतुर श्रोता (कवि रूपी वक्ता से) प्रश्न करते हैं—'विभिन्न पुराणों में (परस्पर) विपरीत कथाओं के चल पड़ने (निर्मित होकर प्रचलित होने) का क्या कारण है? इसे सबके जानने के लिए इस प्रश्न का यथार्थ (उचित) उत्तर कहो।' १-३

श्रोताओं का ऐसा शब्द-पाण्डित्य सुनकर कुशल कवि ने जो अतिशय रसात्मक शब्द कहे, सब श्रोताओ, उन्हें सुनो। ४

जगदीश्वर भगवान् ने आदिकाल से (सिद्ध) अवतारों की मालाएँ स्वाभाविक रूप में गूँथी हैं।—अर्थात्, जैसे उत्पन्न होने से पहले लहरें पानी में ही व्याप्त रहती हैं, वैसे ही प्रत्यक्ष प्रकट होने से पहले अवतार भगवान् में ही समाहित रहते हैं। ५ जैसे रहँट के घटों (घड़ों) की माला होती है (रहँट के चलते रहने पर वे घट उसी-उसी क्रम से बार-बार दिखायी देते हैं), देखो वैसे ही ये अवतार चरित्र हैं। (प्रत्येक कल्प में अवतार उसी क्रम से होते रहते हैं।) अथवा, नक्षत्र (तारे), सूर्य, चन्द्र मेरु की प्रदक्षिणा करते हैं; अथवा, जप की माला (सुमिरनी) के जो मनके होते

कल्पपरत्वें अवतार। जे जे वेळे जें जें चरित्र। तैसेंचि बोलिला सत्यवतीकुमर। कथा साचार तितुक्याही। ८ एके अवतारीं वर्तलें एक। तों दुसरे अवतारीं विशेष कौतुक। तरी तितुकेंही सत्य देख। विपरीतार्थ न मानिजे। ९ रणामाजी एकांग वीर। तैसा जाणिजे कवीश्वर। बहुत श्रोतयांचे भार। परम चतुर सागर जे। १० सभानायक प्रवीण अत्यंत। करीं संदेहधनुष्य घेत। प्रश्नावर शर सोडित। आशंकासमय लक्षोनियां। ११ मग कवीनें धैर्यठाण मांडून। चढविलें स्फूर्तीचें शरासन। शास्त्रसंमताचे बाण। सोडी अभंग अनिवार। १२ सत्त्व ओढी काढूनि सत्वर। क्षमावेशें सोडी शर। परम कौशल्यें साचार। प्रश्नबाण छेदित। १३ श्रोत्या-वक्त्यांचें संधान। तटस्थ पाहती

हैं, वे ही क्रम से लौट आते हैं, वैसे ही (भगवान् के ये) अवतार ब्रह्माण्ड रूपी भवन में माला (के मनकों) की भाँति फिरते-चलते हैं। ६-७ इसलिए कल्प-कल्प के अनुसार अवतार हुए और उन्होंने जिस-जिस समय जो-जो चरित्र-(लीला)-कार्य किये, वैसे ही सत्यवती के पुत्र व्यास जी ने कहा (और) वस्तुतः उतनी ही कथाएँ (उपलब्ध) हैं। ८ (भगवान् ने) किसी अवतार (काल) में एक कार्य, तो दूसरे किसी अवतार (काल) में कोई दूसरी विशेष लीला की। फिर भी उसमें उतना ही सत्य देखो (मानो)—उसमें विपरीत अर्थ (उसे मिथ्या) न मानो। ९ रण में कोई एकाकी वीर होता है। कवीश्वर को वैसा ही (एकाकी) समझो। (युद्ध में एकाकी वीर पर विपक्ष के अनेक योद्धाओं का बोझ आ पड़ता है, वैसे ही) इस एकाकी कवि (रूपी वीर) पर उन अनेक श्रोताओं (रूपी योद्धाओं के प्रश्नों) का भार आता है, जो अतिशय बड़े चातुर्य के सागर ही हैं। १० सभा के नायक अत्यन्त प्रवीण हैं। वे आपत्ति उठाने के लिए योग्य अवसर को देखकर हाथ में सन्देह रूपी धनुष लेकर प्रश्नों के शब्दों रूपी बाण चलाते हैं। ११ फिर कवि (रूपी योद्धा) धैर्य रूपी आसन जमाकर बुद्धि की प्रेरणा रूपी धनुष को सज्ज करके शास्त्र-सम्मत वचनों के अभंग (अभेद्य) एवं अनिवार्य बाण चलाता है। १२ वह शीघ्र ही (विपक्षी के कथन के) सत्त्वांश को खींच निकालकर व्यवहार्य (उचित) आवेश के साथ (उत्तर रूपी) बाण चलाता है और सचमुच अति कौशल के साथ प्रश्न रूपी बाण को काट डालता है। १३ पण्डित लोग श्रोता-वक्ता का यह (प्रश्नोत्तर रूपी) शर-सन्धान तटस्थ (स्तब्ध) होकर देखते हैं और 'धन्य ! धन्य !' कहते हुए तर्जनी (अंगूठे के पासवाली अँगुली)

विचक्षण । धन्य धन्य रे म्हणोन । तर्जनी मस्तक डोलविती ।१४
आवेशा चढले दोघेजण । सप्रेम करिती नामस्मरण । तो
घनघोष ऐकून । आशंका-श्वापदें दूर पळती । १५ वक्त्याचे
वाग्बाण अत्यंत । अर्थगौरवमुख लखलखीत । पद्यरचना पक्ष-
मंडित । सुरंग मिरवित साहित्य । १६ ऐसे शर सुटतां
अपार । भेदलें श्रोत्यांचें अंतर । डोलविलें तेणें शिर ।
सुखोर्मीचेनि भरें पैं । १७ वैरभाव नसतां किंचित । हें आनंदाचें
युद्ध होत । क्षीरब्धीच्या लहरी मिळत । जैसा एकमेकांसी । १८
निष्कपट श्रोता पुसत । निरभिमान वक्ता बोलत । शब्दकौशल्य
युद्ध सत्य । जाणती पंडित विवेकी । १९ देवभक्तांचा अनुवाद ।
तेथें काय आहे वैरसंबंध । कीं गुरुशिष्यांचा संवाद । आनंदयुक्त
शब्दांचा । २० असोत ह्या बहुत युक्ती । चातुर्यसिंधुमंथन-
पद्धती । वर्म जाणिजे पंडितीं । चातुर्यरीती कळा ज्या । २१

और मस्तक को हिलाते हैं। (उनकी महानता प्रशंसापूर्वक स्वीकार करते हैं।) १४ (श्रोता और वक्ता) दोनों आवेश को प्राप्त हो गये हैं। वे प्रेमपूर्वक (भगवान् का) नाम स्मरण करते हैं। वह घनघोष सुनकर आक्षेप अथवा सन्देह रूपी श्वापद दूर भाग जाते हैं। १५ वक्ता के वचन रूपी बाण का अर्थ-गौरव रूपी मुख अत्यन्त चमकदार है। वह पद्य-रचना के परों से सुशोभित है। उसका साहित्य सुन्दर रंग से युक्त हो ठाठ से विचरण करता है। १६ ऐसे अनगिनत बाण छूटने से श्रोताओं का अन्तःकरण भेद लिया गया है। इससे सुख रूपी लहरों से भरकर उसने मस्तक हिलाया। १७ शत्रुता के किंचित् (भी) नहीं होने पर यह तो आनन्द भाव से युक्त युद्ध होता है। जैसे क्षीर समुद्र की लहरें मिल जाती हैं, वैसे ही वक्ता-श्रोता के आनन्द की लहरें (परस्पर) मिल जाती हैं। १८ कपट-भाव से रहित श्रोता प्रश्न करते हैं और अभिमान-रहित वक्ता (उत्तर में) बोलता है। उनका शब्द-कौशल सचमुच युद्ध है—ऐसा विवेकवान् पण्डित जन जानते हैं। १९ यह तो भगवान् के भक्तों द्वारा पुनः पुनः किया कथन-प्रतिकथन है। इसमें वैर भावना का क्या सम्बन्ध है? अथवा यह तो गुरु-शिष्यों का आनन्द भाव से युक्त प्रस्तुत किये शब्दों में संवाद है। २० रहने दो यह बहुत कौशल पूर्ण बातें—दलीलें! रहने दो चातुर्य रूपी समुद्र के मन्थन की पद्धतियाँ—अर्थात् बातें करने का चातुर्य पूर्ण ढंग। चातुर्य (से बातें करने) की जो पद्धतियाँ—कलाएँ हैं, पण्डित जन समझ लें। २१ कवि की रचना-गठन-

कवीची घडामोडी बहुत। युक्तिसागरींचीं रत्नें काढित। एक गव्हांचे प्रकार बहुत। करी जैसी सुगरिणी। २२ एके मृत्तिकेचे घट अपार। एका तंतूचे पट विचित्र। एक हेम बहुत अलंकार। हाटक-घडणार करी जैसा। २३ एके काष्ठीं शिल्पकार। युक्ति दाखवी अपार। तैसा जो कवि चतुर। शब्दसाहित्य विवरी पैं। २४ असो हें चातुर्य करणें। बोलावें लागलें श्रोतयांकारणें। पुढें रघुनाथकथा परिसणें। श्रीधर चतुरां विनवीतसे। २५ मागील कथानुसंधान। तृतीयाध्यायीं निरूपण। सांगितलें हनुमंतजन्म-कथन। मूळग्रंथ-आधारें। २६ सिंहावलोकनें तत्त्वतां। श्रोतीं परिसिजे मागील कथा। तिघी राण्या जाहल्या गर्भस्था। कौसल्या सुमित्रा कैकयी। २७ जैसा शुद्धबीजेचा मृगांक। दिवसेंदिवस कळा अधिक। कीं पळोपळीं चढे अर्क। उदयाद्रीहूनि पश्चिमे। २८ कीं करितां संतसमागम। दिवसेंदिवस

पद्धति बहुत (अद्‌भुत) होती है। गेहूँ तो एक ही प्रकार का होता है, परन्तु सुगृहिणी जैसे उसके अनेक प्रकार (के खाद्य पदार्थ) बनाती है, वैसे ही कवि कौशल पूर्ण बातों के समुद्र में से तरह-तरह के (विचार रूपी) रत्न निकाल लेता है। २२ एक (ही प्रकार की) मिट्टी के असंख्य (प्रकार के) घट बनाते हैं। एक (ही प्रकार के) तन्तु के विचित्र (विभिन्न) वस्त्र बनाये जाते हैं। सोना तो एक (प्रकार का) होता है, परन्तु सुनार उससे बहुत (प्रकार के) अलंकार बनाता है। एक (प्रकार के) काठ में शिल्पी असीम कौशल दिखाता है। वैसे ही जो कवि चतुर होता है, वह शब्दों में अनेक प्रकार से साहित्य की व्याख्या करता है। २४ चातुर्य की अर्थात् युक्ति-प्रयुक्ति-पूर्ण बातें करना बहुत हो गया। यह तो श्रोताओं के निमित्त कहना है। अब आगे, कवि श्रीधर चतुर श्रोताओं से रघुनाथ राम की कथा का श्रवण करने की विनती कर रहा है। २५ पिछली कथा (के विषय) में यह बात है—तीसरे अध्याय में मूल ग्रन्थ के आधार से हनुमान-जन्म की कथा कही। २६

श्रोता सिंहावलोकन के रूप में तत्त्वतः पिछली कथा सुनें। कौसल्या, सुमित्रा और कैकेयी तीनों रानियाँ गर्भवती हो गयीं। २७ जिस प्रकार शुद्ध द्वितीया का चन्द्रमा दिन-ब-दिन अधिकाधिक कला को प्राप्त करता जाता है, अथवा (पूर्व दिशा में स्थित) उदयाचल से सूर्य प्रति पल पश्चिम की ओर चढ़ता जाता है; अथवा सन्तों की संगति करने से दिन-ब-दिन प्रेम (भक्ति-) भाव बढ़ता जाता है, अथवा उदारता के कारण त्वरित

वाढे प्रेम । कीं औदार्येंकरूनि परम । कीर्ति वाढे सत्वर । २९
तैसे राणियांचे गर्भ वाढती । तों वसिष्ठ बोले दशरथाप्रती ।
राया धर्मशास्त्रीं ऐसी रीती । डोहळे स्त्रियांसी पुसावे । ३०
ऐसें बोलतां ब्रह्मऋषी । हर्ष वाटला रायासी । नमोनि वसिष्ठ-
चरणसी । राजेंद्र तेव्हां चालिला । ३१ जैसा शचीचिया
मंदिरांत । वृत्रासुरशत्रु प्रवेशत । तैसाचि अजपाळसुत ।
कैकयींसदनीं प्रवेशे । ३२ पिंडप्राशनाचे काळीं । कैकयी होती
रुसली । म्हणोनि राजेंद्र ते वेळीं । तिचे सदनीं प्रवेशला । ३३
दूती जाणविती स्वामिनीतें । डोहळे पुसावया तुम्हांतें । नृपति
स्वयें येतसे येथें । सुमुंहूर्त पाहोनियां । ३४ सुंदरपणाचा
अभिमान । त्याहीवरी कैकयी गर्भिण । जैसी अल्पविद्या गर्व
पूर्ण । तैसें येथें जाहलें । ३५ जैसी गारुडियांची विद्या किंचित ।
परी ब्रीदें बांधिती बहुत । कीं निर्नासिक वाहत । रूपाभिमान
विशेष पैं । ३६ बिंदुमात्र विष वृश्चिका । परी पुच्छाग्र सदा
वरुतें देखा । किंचित ज्ञान होतां महामूर्खा । मग तो न गणी

सत्कीर्ति बहुत बढ़ती है, उसी प्रकार रानियों के गर्भ (दिन-ब-दिन) विकसित होते जाते। तब वसिष्ठ ऋषि दशरथ से बोले—'राजा, स्त्रियों से (उनके) दोहद पूछे जाएँ—धर्मशास्त्र में ऐसी रीति (बतायी) है। २८-३० ब्रह्मर्षि के ऐसा बोलने पर राजा को हर्ष अनुभव हुआ। तब वसिष्ठ के चरणों का नमन कर राजेन्द्र चल पड़े। ३१ जिस प्रकार (वृत्रासुर का शत्रु) इन्द्र शची के मन्दिर में प्रवेश करता है, वैसे ही (अजराजा के पुत्र) दशरथ ने कैकेयी के मन्दिर में प्रवेश किया। ३२ (प्रसाद का) पिण्ड खाने के अवसर पर कैकेयी रूठी थी इसलिए राजश्रेष्ठ दशरथ ने उस समय (सबसे पहले) उसके गृह में प्रवेश किया। ३३ (कैकेयी की) दूतियों ने (अपनी) स्वामिनी को यह विदित कराया कि सुमुहूर्त देखकर राजा स्वयं दोहद पूछने के लिए यहाँ पधार रहे हैं। ३४ (एक तो कैकेयी को) सुन्दरता का अभिमान था, तिस पर वह गर्भवती थी। जैसे किसी ने थोड़ी-सी विद्या पायी हो और उसे बहुत घमण्ड हुआ हो, वैसे ही यहाँ (कैकेयी की) स्थिति हो गयी। ३५ मदारियों को विद्या किंचित् ही (ज्ञात) होती है, परन्तु वे बड़े-बड़े बिरुद बाँध लेते हैं; अथवा नकचिपटा मनुष्य अपनी सुन्दरता का विशेष अभिमान करे, वैसी स्थिति कैकेयी की हो गयी। ३६ बिच्छू के पास केवल बूँद (भर) विष होता है, परन्तु देखो, उसकी पूँछ की नोक हमेशा ऊपर (उठी) रहती है। महामूर्ख

वाचस्पतीतें । ३७ खडाणे धेनूसी दुग्ध किंचित । परी लत्ता-प्रहार दे बहुत । अल्पोदकें घट उचंबळत । अंग भिजत वाहकाचें । ३८ तैसें कैकयीस जाहलें तये वेळीं । प्रीतीनें दशरथ आला जवळी । आपण सेजेवरी निजली । नाहीं धरिली मर्यादा । ३९ स्त्री सेवक अपत्य दासी । श्वान मर्कट कुरुपियासी । मर्यादा तुटतां मग सकळांसी । ते अनिवार जाणिजे । ४० म्हणोनि मर्यादा कांहीं तेथ । कैकयी न धरी देखतां दशरथ । तिसी डोहळे पुसे नृपनाथ । उभा समीप राहोनी । ४१ म्हणे कैकयी बोल वचन । तुज जें आवडे मनांतून । तें मी समस्त पुरवीन । सत्य जाण प्रियकरे । ४२ मग काय बोले ते वेळे । तुम्ही काय पुरवाल डोहळे । माझे मनींचे सोहळे । पूर्णकर्ता दिसेना । ४३ मग बोले अजनन्दन । तुजकारणें वेंचीन प्राण । परी तुझे डोहळे पुरवीन । सत्य जाण सुकुमारे । ४४ मग ती म्हणे जी नृपवरा । डोहळे हेचि माझे

व्यक्ति को अल्प सा ज्ञान होने पर वह फिर बृहस्पति को कुछ गिनता ही नहीं। (कैकेयी की वैसे ही स्थिति है।) ३७ नठेल गाय के दूध तो अल्प-सा होता है, लेकिन वह लातें बहुत जमाती है। अल्प-से पानी से घड़ा छलकता रहता है और उसे उठा ले जाने वाले का शरीर उससे भीगता रहता है। ३८ उस समय कैकेयी की वैसी स्थिति हो गयी। दशरथ प्रेम से (उसके) पास आ गये तो वह स्वयं शय्या पर सो गयी (लेटी हुई रही)। उसने मर्यादा का ध्यान नहीं रखा। ३९ स्त्री, सेवक, सन्तान, दासी, कुत्ता, बन्दर और कुरूप व्यक्ति—इनके प्रति मर्यादा विवेक टूट जाए (नहीं रखा जाए, इनका आवश्यकता से अधिक आदर किया जाए) तो उन्हें दुर्निवार (बने) समझो। ४० इसलिए दशरथ को वहाँ देखने पर भी कैकेयी ने कोई (पति के) मान-सम्मान का विवेक (पूर्वक व्यवहार) नहीं किया। उसके पास खड़े होकर राजा उससे दोहद पूछते हैं। ४१ उन्होंने कहा—'कैकेयी, (कुछ) बात कहो। हे प्रियकरा, यह सत्य समझो कि तुम्हें जो मन से भाए, वह सब मैं ला दूँगा।' ४२ फिर उस समय वह क्या बोलती है? (सुनो) 'तुम मेरे दोहद क्या पूरे करोगे? मेरे मन के उत्सव समारोह (सम्बन्धी आकांक्षाएं) पूर्ण करनेवाला (कोई) दिखायी नहीं देता।' ४३ फिर अजपुत्र दशरथ ने कहा—'तुम्हारे निमित्त (लिए) मैं अपने प्राणों को भी न्योछावर करूँगा, तुम्हारे दोहद पूर्ण (तृप्त) करूँगा ही। हे सुकुमार

अवधारा । कौसल्या सुमित्रेचिया कुमरां । दिगंतरा दवडावें । ४५ पाठवावे दूर कानना । त्यांचा समाचार पुनः कळेना । आमचें वर्तमान त्यांचिया कर्णीं । सहसाही न जावें । ४६ राज्य द्यावें माझिया पुत्रा । हेंचि डोहळे होते राजेंद्रा । तुम्ही म्हणाल अधर्म खरा । तरी तो दोष मजवरी घालिजे । ४७ मळा निंदितील सकळ लोक । तों तों वाटेल परम सुख । समस्त जनां व्हावें दुःख । हेंचि मजला आवडे । ४८ ऐसें कैकयी वदे ते अवसरीं । ऐकतां नृप खोंचला अंतरीं । कीं काळिजीं घातली सुरी । कीं अंगावरी चपळा पडे । ४९ वचन नव्हे तें केवळ । दुःखवल्लीचें श्रेष्ठ फळ । कीं संचरलें हाळाहळ । हृदयीं वाटे दशरथा । ५० वाटे पर्वत कोसळला । कीं काळसर्प जिव्हारीं झोंबला । कीं तप्तशस्त्रघाय पडला । अंगावरी अकस्मात । ५१ कैकयीवचन कलशोद्भव पूर्ण । प्राशिलें आयुष्यसागर-जीवन । राव घाबरा होय जैसा चतुरानन । वेद हरण केले जेव्हां । ५२ परम खेद

स्त्री, इसे सत्य मानो ।' ४४ अनन्तर वह कहती है–'हे राजश्रेष्ठ, सुनो मेरे यही दोहद हैं—कौसल्या और सुमित्रा के पुत्रों को दिगन्तर (बहुत दूर) भेज दें । ४५ उन्हें (इतनी) दूर वन में भेजें (कि) उनका समाचार फिर से ज्ञात न हो जाए । हमारे विषय में भी कोई समाचार साधारणतः उनके कानों तक न जाए । ४६ मेरे पुत्र को राज्य प्रदान करें । हे राजेन्द्र, मुझे यही दोहद हो रहे हैं । तुम कहोगे कि यह सचमुच अधर्म है, फिर भी (इसका) वह दोष मुझपर रखो । ४७ सब लोग मेरी निन्दा करेंगे, वैसे वैसे मेरे लिए परम सुख (मय) प्रतीत होगा । सब लोगों को दुःख (प्राप्त) हो जाए—यही मुझे अच्छा लगता है ।' ४८ उस अवसर पर (जब) कैकेयी ने ऐसा कहा, तो राजा अन्तःकरण में अतिशय दुखी हो गये । अथवा (उन्हें जान पड़ा कि किसी ने उनके) कलेजे में छुरी भोंक दी हो अथवा देह पर बिजली पड़ गयी हो । ४९ यह केवल उक्ति नहीं है, यह तो दुःख रूपी लता में उत्पन्न बड़ा-से-बड़ा फल है । अथवा दशरथ को अनुभव हुआ कि हृदय में हलाहल विष संचरित (व्याप्त) हो गया । ५० उन्हें लगा कि उन पर पर्वत टूट (ढह) पड़ा; अथवा काल-सर्प कलेजे में भिड़ गया; अथवा शरीर पर सहसा गर्म शस्त्र का आघात हो गया । ५१ कैकेयी का यह वचन (मानो) अगस्त्य ऋषि है, जिसने उनकी आयु रूपी सागर के पानी को पूर्णतः पी लिया । राजा वैसे ही घबरा उठे जैसे (असुरों ने) वेदों का हरण किया, तो ब्रह्मा घबराये थे ।५२

पाचे बुलिलन्त नृपतिर बिद्यमान * सुमित्राक दिबे आज्ञा करा किछुमान
हासिला नृपति कौशल्यार बाणी शुनि * सुमित्राको दिबे आज्ञा दिला महामानी ६४५
पाचे आसि बशिष्ठे दिलन्त शुभक्षण * शुद्ध हुया करिबन्त पायस भक्षण
चारि अंशे बिष्णु आसि हैब अवतार * भुंजिब पायस करि मंगल आचार ४६
बशिष्ठर बचन शुनिया तिनिजने * आचरि मंगल शुद्ध हुया शुभक्षणे
पायस भुंजिबे बसिलन्त भिन्ने भिन्नि * राज आज्ञा पाइला आगे दुइ सतिनी ४७
पाचे सुमित्राक प्रति आदेश करिल * आगे दुइ भाग दुइ महादेक दिल
कौशल्या कैकेयी पाचे दुइ पटेश्वरी * आपोनार भाग दुयो दुइ भाग करि ४८
सुमित्राक दुइ भाग दिला रंग मने * निबन्धन बाक्य बुलिलन्त दुई जने
शुनिबि सुमित्रा तइ आमार उत्तर * आपुनि निदिल तोक भाग नृपबर ४९
आमिसे स्नेहत भाग दिलो तोक जान * एतेकेसे बोलो आमि बचन बन्धन
यार भागहन्ते तोर यिटो पुत्र हय * आमार पुत्रर हैब सहाय निश्चय ५०
शुनि सुमित्रार भैल हरिष मनत * बोलन्त बिनय भावे दुयारो आगत
शुना दुयो जन बोलो स्वरूप बचन * होवे येवे मोर दुइ पुत्र उतपन ५१
हैबेक सेवक तोरा दुइरो तनयर * शुनिया कौतुक बर भैला दुइहान्तर
अनन्तरे तिनि जने पखालिला पाव * धौत वस्त्र पिंधि भैला पवित्र स्वभाव ५२
आपोनार भाग सबे लैया रंगमने * पायस भोजन करिलन्त तिनि जने
पाचे पुष्पशय्यात शुतिला तिनि सती * शुभलग्ने अन्तःपुरे गैलन्त नृपति ५३
अनुक्रमे प्रवेशिला तिनिरो शय्यात * पुत्रकाम बिभागे करिल रेतःपात
निद्रा अचेतने तिनि देवीये आछन्त * स्वपनत तिनियो देखिल भगवन्त ५४

सुनकर कौशल्या को बड़ी दया आ गई। सुन्दरी कौशल्या ने कैकेयी से कहा, सुमित्रा को बिना दिये मैं कैसे खा सकती हूँ ॥ ६४४ ॥ इसके पश्चात् राजा के सम्मुख जाकर वह बोली, सुमित्रा को थोड़ा सा देने की आज्ञा मिल जाय। कौशल्या की बात सुनकर महाराजा हँस पड़े। और महामानी राजा दशरथ ने सुमित्रा को भी देने की आज्ञा दे दी ॥ ६४५ ॥ इसके पश्चात् वशिष्ठ ने आकर शुभघड़ी बताई। (कहा) शुद्ध होकर खीर खाना। विष्णु चार अंशों में आकर अवतार लेंगे। मंगल आचरण करने के उपरान्त पायस खाना ॥ ४६ ॥ वशिष्ठ का वचन सुनकर तीनों रानियाँ मंगल आचरण कर शुभघड़ी पर शुद्ध हो गयीं। पायस खाने के लिए वे अलग अलग बैठ गईं। पहले दो सौतों को राजा की आज्ञा मिली ॥ ४७ ॥ पहले दो भाग दोनों महादेवियों को मिले। पीछे सुमित्रा को आज्ञा मिली। इसके अनन्तर दोनों पट-रानियाँ कौशल्या और कैकेयी ने अपने अपने हिस्से को भी दो भागों में बाँटा ॥ ४८ ॥ दोनों ने सुमित्रा को प्रसन्न मन होकर खीर के दो भाग दिये और निबन्धन-वाक्य कहे। सुनो सुमित्रा, मेरी बात सुनो। राजा ने स्वयं तुम्हें कोई भाग नहीं दिया ॥ ४९ ॥ यह जान लो कि मैंने स्नेहवश तुमको हिस्सा दिया इसलिए वचन दो कि तुम वचन-बद्ध रहोगी। जिसके भाग से तुम्हारा जो पुत्र होगा वह मेरे पुत्र का सहायक निश्चय बन जाये ॥ ५० ॥ सुनकर सुमित्रा के मन में हर्ष उत्पन्न हुआ। उसने दोनों से विनयपूर्वक कहा। तुम दोनों मेरा स्पष्ट वचन सुनो। जब मेरे दो पुत्र उत्पन्न होंगे— ॥ ५१ ॥ तो वे तुम्हारे दोनों बेटों के सेवक बन जाएँगे। यह सुनकर दोनों को बड़ा ही आश्चर्य हुआ। इसके बाद तीनों ने पैर धोए और धुले हुए कपड़े पहनकर पवित्र हो गईं ॥ ५२ ॥ अपना-अपना हिस्सा लेकर सभी प्रसन्न मन बैठ गईं और तीनों ने पायस खाया। इसके बाद तीनों सती फूलों की सेज पर लेट गईं इसके

शंख चक्र गदा पद्म चारि अस्त्र धरि * स्वप्ने तिनि महादेक देखा दिला हरि
गरुड़र दुइ पाखा ज्वले सुवर्णर * ताहान स्कन्धत बसि आछे दामोदर ५५
महा मेघखंड येन मेरुर उपरे * दिशपाश प्रकाशि शरीर ज्योति करे
पीतबस्त्र ज्वले आति श्याम शरीरत * स्थिर विद्युतिका येन प्रकाशे मेघत ५६
गले बनमाला मणि कौस्तुभ कंठत * रत्न उड़ियानि ज्वले कटि प्रदेशत
पूर्ण शशधर रुचि प्रसन्नबदन * प्रफुल्ल पंकज जिनि शोभय नयन ५७
श्याम शरीरत शोभे रत्न अलंकार * निर्म्मल गगने येन तारा जातिष्कार
गरुड़र स्कन्धे ज्वले पाद्यपद्म दुइ * शरतर निर्म्मल पंकजो सम नुइ ५८
कटाक्ष हासित येन अमृत बरिषे * तिनि महादइ आछन्त हरिषे
हैब अवतार हेन देखाइ स्वप्नत * करिलन्त स्नान हरि सागर जलत ५९
तिनिरो आगते पाचे भैला अन्तर्द्धान * स्वप्नत हरिक देखिया विद्यमान
स्नान दान करिलन्त उठि प्रभातत * कहिला स्वरूप कथा राजार आगत ६०
विपरीत स्वपन देखिला तिनि जने * हैबा हरि पुत्र राजा जानिलन्त मने
पाचे नारायण आसि चारि मूर्त्ति धरि * तिनि महादैर गर्भे प्रवेशिला हरि ६१
धरिलन्त गर्भ एकेबारे तिनिजन * सूर्य्यर सदृश गर्भ करय प्रसन्न
गर्भर प्रकाशे प्रकाशय तिनि नारी * चक्षुक ताड़य रूपे चाहिते नपारि ६२
ईश्वर कृष्णर तेज बाढ़य गर्भत * गर्भभावे तिनि हुया आछे अशकत
तेजोमय गर्भ आति देखिते उज्ज्वल * विष्णुपुत्र हैबन्त राजार कौतूहल ६३

बाद शुभघड़ी पर राजा ने अन्तःपुर में प्रवेश किया ।। ५३ ।। क्रम से उन्होंने तीनों के बिस्तर में प्रवेश किया और पुत्र कामना से गर्भाधान किया । तीनों देवियाँ जब नींद में बेसुध थीं तो तीनों ने भगवान् का स्वप्न देखा ।। ५४ ।। शंख चक्र गदा और पद्म—इन चारों अस्त्रों को धारण कर हरि ने सपने में तीनों महादेवियों को दर्शन दिया । गरुड़ के दोनों सोने के डैने चमक रहे हैं उसी के कन्धे पर दामोदर बैठे हैं ।। ५५ ।। मानों मेरु पर्वत पर विशाल मेघ का खंड हो, सभी दिशाओं को प्रकाशित कर इस प्रकार उनका शरीर ज्योतित है । अत्यन्त श्याम शरीर पर पीला वस्त्र चमक रहा है, ज्यों बादलों में बिजली चमकती है ।। ५६ ।। गले में वनमाला और कंठ में कौस्तुभ मणि है । कमर में रत्न-जड़ित चदरा (कमरबन्द) शोभा दे रहा है । पूर्ण-चन्द्र सा प्रसन्न मुखड़ा है और नयन खिले हुए कमल के समान हैं ।। ५७ ।। साँवले शरीर पर रत्न-जटित-अलंकार इस प्रकार शोभायमान हैं जिस प्रकार निर्मल आकाश में तारे शोभा पाते हैं । गरुड़ के कंधे पर दोनों चरण-कमल यों शोभा पा रहे हैं मानों शरद ऋतु के निर्मल पंकज हों ।। ५८ ।। उनकी मंद मुस्कान से मानों अमृत बरसने लगा । तीनों महारानियाँ परम प्रसन्न हो गईं । सपने में में यह दिखाकर कि वे अवतार लेंगे, हरि सागर के जल में स्नान करने लगे ।। ५९ ।। इसके पश्चात् वे तीनों के सम्मुख से अदृश्य हो गये । स्वप्न में साक्षात् हरि को देखकर वे सबेरे उठीं तथा स्नान करने के बाद दान दिया । और राजा के पास जाकर सारी बात बता दी ।। ६० ।। तीनों ने एक असंगत स्वप्न देखा । राजा ने मन ही मन जान लिया कि नारायण चार मूर्त्तियों को धारण कर तीनों महादेवियों के गर्भ में प्रवेश कर गये हैं और हरि ही पुत्र बनेंगे ।। ६१ ।। एक साथ तीनों रानियों ने गर्भ धारण किया, सूर्य के समान गर्भ उनको प्रसन्न करने लगे । गर्भ के प्रकाश से तीनों रानियाँ प्रकाशमयी होने लगीं । उनका रूप आँखों को चकाचौंध में डाल देता था, उसका देखना संभव नहीं था ।। ६२ ।। इस प्रकार गर्भ में विष्णु का तेज बढ़ने

जेतिक्षणे यिबा वस्तु खोजय खाइबाक * हरिषे नृपति तेतिक्षणे देय ताक
पंचम मासत चाया दिन शुभक्षण * घृत मधु पंचामृत कराइला भोजन ६३
नाना द्रव्ये उत्सव करिया नानामत * करिलन्त पुंसवन अष्टम मासत
करन्त गर्भक ब्रह्मा यत देवगण * हुया अवतार हरि बधिबा रावण ६५
मुनिसबे आचरिला मंगल अपार * उपजिबा हरि हैब जगत उद्धार
नछारन्त राजा तिनि महादैव पाश * अनन्तरे गर्भ हैल पूर्ण दशमास ६६
शुभग्रह नक्षत्र मिलल शुभक्षण * कौशल्या देबीर पुत्र भैला उतपन
जगतरे सुमंगल भैलन्त उदय * शीतल दीपिति दशोदिश प्रकाशय ६७
त्रिजगत लोकर कुशल हेतु हरि * उपजिला कौशल्यात नररूप धरि
देवगणे स्तुति नति करे आकाशत * जय जय नृत्य गीत करे नानामत ६८
येतिक्षणे कौशल्यात पुत्र उपजिल * अन्तःपुर माजे महा कौतुक मिलिल
जय जय कोलाहल करे हुलस्थूल * नाना नृत्य गीत बाद्य शवद तुमुल६६९
सुगन्ध शीतल जले शिशुक धोवाइल * दुग्ध दिया सुकोमल शय्यात शुवाइल
अनन्तरे दूते नृपतित जान दिल * शुना प्रभु कौशल्यात पुत्र उपजिल६७०
शुनि नृपतिर हरिषर नाहि पार * दूतक दिलन्त राजा वस्त्र अलंकार
सवस्त्रे नृपति पाचे करिलन्त स्नान * बहु बिध रत्न राजा करिलन्त दान६७१

लगा। गर्भ के भीतर वे शक्तिशून्य होकर स्थित हैं। यह तेजपूर्ण गर्भ देखने में अति उज्वल है। राजा के मन में बड़ा कौतूहल है कि विष्णु पुत्र के रूप में उत्पन्न होंगे ॥ ६३ ॥ जिस समय भी जिस वस्तु को खाने के लिए (रानियाँ) इच्छा करती थीं, उसी समय हर्ष से नृपति उन्हें वही वस्तु देते थे। पाँचवें महीने में मुहूर्त आदि देख भाल कर घृत मधु आदि पंचामृत का भोजन कराया गया ॥ ६४ ॥ विभिन्न द्रव्यों के द्वारा विभिन्न ढंग से उत्सव कर आठवें महीने में पुंसवन संस्कार किया गया। ब्रह्मा आदि जितने देवता हैं उन्होंने गर्भ को सुफल किया कि रावण का वध करने के लिए हरि का अवतार हो रहा है ॥ ६५ ॥ सारे मुनियों ने यह जानकर मंगल आचरण किया, कि हरि जन्म लेंगे और संसार का उद्धार होगा। राजा तीनों महारानियों के निकट से हटते ही नहीं। इसके बाद गर्भ पूरे दस महीने का हो गया ॥ ६६ ॥ शुभघड़ी में शुभ ग्रह नक्षत्रों का योग हुआ तो कौशल्या देवी के पुत्र उत्पन्न हुआ। जगत् में सुमंगल का उदय हुआ और शीतल ज्योति से चारों दिशाएँ जगमगा उठीं ॥ ६७ ॥ तीनों लोकों के लोगों के कुशल के हेतु हरि ने नया रूप धारण कर कौशल्या से जन्म लिया। देवगण आकाश में स्तुति एवं नमन करने लगे और जय जयकार सहित तरह तरह से नृत्य गीत करने लगे ॥ ६८ ॥ जिस समय कौशल्या के पुत्र उत्पन्न हुआ, उस समय अन्तःपुर में आनन्द का स्रोत बह चला। जय जय का कोलाहल मच गया और चारों ओर दौड़धूप होने लगी, विभिन्न नृत्य-गीत-वाद्य से तुमुल शब्द होने लगा ॥ ६६९ ॥

सुगन्धित शीतल जल से बच्चे को धोया गया। दूध देकर उसको नर्म बिस्तर पर लिटा दिया गया। इसके बाद दूत ने जाकर राजा को यह सूचना दी हे प्रभु सुनो, कौशल्या से पुत्र ने जन्म लिया ॥ ६७० ॥ सुनकर राजा के हर्ष की सीमा न रही। दूत को राजा ने वस्त्र और आभूषण दिये। फिर वस्त्र पहनकर राजा ने स्नान किया। फिर राजा ने कितने ही धन-रत्न दान में दे दिये ॥ ६७१ ॥ जितने भंडार निकट उपलब्ध हुए उन सभी को पुत्र के कल्याण के हेतु बाँट दिया। इसके

यतेक भांडार माने समीपते पाइल * पुत्रर कल्याण हेतु समस्ते बिलाइल
तात पाचे कैकेयीर पुत्र उपजिल * शुनि नृपतिर महा हरिष मिलिल ७२
आत अनन्तरे शुभक्षण समयत * सुमित्रार पुत्र दुइ भैलन्त बेकत
सर्ब्ब सुलक्षण दुई यवंजा कुमार * शुनि नृपतिर नाहि आनन्दर पार ७३
उपजिल चारि पुत्र वंशर उद्धार * हरिषे बिलाइला राजा प्रधान भांडार
भूमिते बेकत येवे भैला दामोदर * खसिल माथार मणि राजा रावणर ७४
देखिया पुछिला माल्यवन्तत रावणे * खसिल माथार मोर मणि कि कारणे
माल्यवन्त बोले शुना कारण इहार * याहार हातत मृत्यु हैबेक तोमार ७५
सेहिजन पृथिवीत भैल उतपन * शुनिया कुपिल माल्यवन्तक रावण
गरिहार छले तांक अनेक निन्दिल * पुनरपि तुलि मणि माथात पिंधिल ७६
येतिक्षणे अवतार भैला नारायण * तेखनर हन्ते शुभ देखे देवगण
नानाबिध अशुभ देखय लंकेश्वर * शुनियोक कथामृत आत अनन्तर ७७
दशरथ घरे हरि भैला अवतार * देखिया उत्सुक बर भैल देवतार
दुन्दुभि शवद आति करे निरन्तरे * बरषिला पुष्प दशरथर उपरे ७८
शुभक्षण चाइ दशरथ नृपवर * क्रमे देखिलन्त मुख चारिओ पुत्रर
पूर्णिमार चन्द्र येन ज्वलन्ते आछय * देखि नृपतिर भैला आनन्द हृदय ७९
महानिधि लाभ जेन भैल दरिद्रर * लोभी पाइला येन पूर्णघट अमृतर
बद्ध आसि जीव जेन भैलन्त मुकुत * सेहिमते राजार आनन्द अदभुत ८०
तपहन्ते आसिल कौशिक मुनिवर * बेद पढ़ि आशीर्वाद करिला विस्तर
नृपतिर उपजिल चारि पुत्रबर * अयोध्यात मिलि गैला आनन्द बिस्तर ८१

पश्चात् कैकेयी के पुत्र उत्पन्न हुआ, यह सुनकर नृपति को बड़ा आनन्द हुआ ।। ६७२ ।। इसके अनन्तर किसी शुभघड़ी में सुमित्रा के भी दो पुत्र उत्पन्न हुए यह मालूम हुआ। सारे सुलक्षणों से युक्त दो जुड़वे पुत्र उत्पन्न हुए, सुनकर राजा के आनन्द की सीमा न रही ।। ७३ ।। वंश का उद्धार करने के लिए चार पुत्रों ने जन्म लिया। राजा ने परम हर्ष से अपना मुख्य भंडार लुटा दिया। जिस समय भूमि पर दामोदर का आविर्भाव हुआ, उसी समय राजा रावण के सिर का माणिक गिर पड़ा ।। ७४ ।। रावण ने यह देखकर माल्यवन्त से पूछा, मेरे सिर से यह माणिक किस कारण गिर पड़ा। माल्यवन्त ने कहा, इसका कारण सुनो। जिसके हाथों तुम्हारी मृत्यु होगी— ।। ७५ ।। —वही व्यक्ति पृथ्वी पर उत्पन्न हो गया। यह सुनकर रावण माल्यवन्त पर कुपित हो गया। अपमानित करने के निमित्त उसने उसकी बड़ी निन्दा की। फिर माणिक उठाकर उसने सिर में पहन लिया ।। ७६ ।। जिस क्षण से नारायण ने अवतार ले लिया उसी क्षण से देवता शुभ देखने लगे। लंका के अधिपति (रावण) तरह-तरह की अशुभ बातें देखने लगा। इसके बाद का कथामृत सुनो ।। ७७ ।। दशरथ के घर में हरि ने अवतार लिया है, यह देखकर देवता बड़े प्रसन्न हुए। वे निरन्तर दुन्दुभि का शब्द करने लगे और दशरथ पर पुष्प बरसाने लगे ।। ७८ ।। नृपश्रेष्ठ दशरथ ने शुभ क्षण की प्रतीक्षा की, फिर चारों पुत्रों के मुख का दर्शन किया। मानों पूर्णमासी का चन्द्र जगमगा रहा हो। देखकर नृपति का मन आनन्द से भर गया ।। ७९ ।। दरिद्र को मानो महान् निधि मिल गई हो, लालची को मानों अमृत का पूरा घड़ा मिल गया हो, मानो बँधे हुए प्राणी को मुक्ति मिल गई हो, इस प्रकार राजा को अद्भुत आनन्द का अनुभव हुआ ।। ८० ।। तपस्या के उपरान्त मुनिवर कौशिक आए। उन्होंने वेदपाठ कर पर्याप्त आशीर्वाद

नृत्य गीत बाद्यभांड नाना कौतूहल * आचरिला पूजा बहुबिध सुमंगल
पृथिवीर राजागणे करि बहु यत्न * दशरथ राजाक योगाइल बहु रत्न ८२
चारि मूर्त्ति धरि भैला ईश्वर बिदित * मिलिल उत्सब सातोद्वीपा पृथिवीत
देवर कौतुक बर मिलिल स्वर्गत * परम आनन्द भैल नगर लोकत ८३
त्रैलोक्यत भैल महा हरिष प्रचुर * नाशिब दुर्ज्जन महन्तर दुख दूर
चारि अंशे चतुर्भुज देव नारायण * उपजिला शुनि आसिलन्त मुनिगण ८४
ऊच्चैःस्वरे शुद्ध बेदमंत्र उच्चारिला * चारिओ शिशुक सबे आशीर्ब्बाद दिला
ऋषि समस्तक रंगे अर्च्चिया नृपति * चारिओ पुत्रक राजा कराइल गणति ८५
जगतरंजन गुण देखि अनुपाम * कौशल्यार पुत्रर थैलन्त राम नाम
कैकेयीक राजार अधिक स्नेहभर * थैलन्त भरत नाम ताहान पुत्रर ८६
सुमित्रार पुत्र दुइ सर्ब्ब सुलक्षण * देखि नाम थैलन्त लक्ष्मण शत्रुधन
ऋषिगणे बोलन्त शुनिओ दशरथ * तयु पुत्रे पूरिब सबार मनोरथ ८७
एक नारायण चारि अंशे मूर्त्ति धरि * भैल चारि पुत्र आक जाना निष्ठ करि
आपुनि भैलन्त पुत्र जगत आधार * कमने बर्णाइबो राजा भाग्यक तोमार ८८
रामरूपे अवतार भैलन्त ईश्वर * लभिला सन्तति राजा सूर्य्यवंशोद्धार
सन्तक पालिबा राम पुरुष प्रधान * दुर्ज्जन जनक मारि करिबा निर्य्याण ८९
बले बीर्यें धैर्यें गुणे रूपे निरूपम * रावणे सहिते राक्षसर हैबे यम
नुहिबेक सुपुरुष रामर समान * अनुरूपे जगतरे साधिबा कल्याण ९०

किया। नृपति के चार पुत्र उत्पन्न हुए। अयोध्या में सभी को पर्याप्त आनन्द प्राप्त हुआ ॥ ८१ ॥ नृत्य-गीत, गाजा-बाजा और तरह-तरह की चुहलबाजी चलती रही। मंगलकामना में तरह-तरह की पूजाएँ की गईं। पृथ्वी के अन्य राजाओं ने काफी यत्न से राजा दशरथ को अनेक रत्न लाकर दिये ॥ ८२ ॥ भगवान् विष्णु चार मूर्त्तियों को धारण कर आविर्भूत हुए हैं, यह जानकर सप्तद्वीप पृथ्वी पर उत्सव होने लगा। स्वर्ग में देवताओं को बड़ा आनन्द प्राप्त हुआ। नगर के लोगों को भी बड़ा उल्लास हुआ ॥ ८३ ॥ तीनों लोकों में हर्ष का पारावार न रहा। दुर्जनों का नाश होगा और सज्जनों का दुख दूर होगा। देव नारायण चतुर्भुज ने चार अंशों में जन्म लिया है, यह सुनकर मुनिगण चले आए ॥ ८४ ॥ ऊच्च स्वर में उन्होंने शुद्ध वेदमंत्र का पाठ किया, चारों बच्चों को सभी ने आशीर्वाद दिया। नृपति ने सारे ऋषियों की मन लगाकर अर्चना की। चारों पुत्रों की राशि-गणना भी उन्हीं से करवा ली ॥ ८५ ॥ संसार को प्रसन्न करने वाले अनूप गुण इनमें देखकर कौशल्या के पुत्र का नाम राम रखा गया। कैकेयी से राजा को अधिक स्नेह था, उसके पुत्र का नाम भरत रखा गया ॥ ८६ ॥ सुमित्रा के दो पुत्र सारे सुलक्षणों से युक्त थे, उनके नाम लक्ष्मण और शत्रुघ्न रखे गये। ऋषियों ने कहा, दशरथ सुनो, तुम्हारे पुत्रों द्वारा सभी की मनोकामना पूर्ण होगी ॥ ८७ ॥ एक नारायण चार अंशों में मूर्त्त होकर चार पुत्र बन गये, यह निश्चित् रूप से जान लो। तुम्हारा पुत्र स्वयं संसार का आधार बन गया। हे राजा, तुम्हारे भाग्य का क्या वर्णन करूँ ॥ ८८ ॥ राम के रूप में ईश्वर ने अवतार लिया है। राजा को सन्तति मिल गई, सुर्यवंश का उद्धार हो गया। पुरुषोत्तम राम सन्तों का पालन करेंगे और दुष्टों को मारकर उनका विनाश कर देंगे ॥ ८९ ॥ बल, वीर्य, धैर्य, गुण और रूप में यह बेजोड़ होंगे और रावण के वध करने में यह राक्षसों का यम बन जाँयगे। राम के समान कोई दूसरा इतना सुदर्शन नहीं होगा। इसी प्रकार वे संसार का भी कल्याण करते

निज गुणे यशे जगतक रंजिवन्त * रामर महिमा कहि कोने पाइबे अन्त
समस्त लोकरे आन्त हैब अनुराग * किनो तुमि सुपुत्र लभिला महाभाग ९१
एहिमते गणित करिला ऋषिगण * शुनि दशरथर सन्तुष्ट भैला मन
ईश्वरक पुत्र पाया भैल कौतूहल * मुनि सकलक पूजिलन्त महाबल ९२
परमान्न पंचामृते कराइला भोजन * तुषिलन्त दिया पुष्प अगरु चन्दन
पिन्धाइला सबाको दिब्य बस्त्र अलंकार * दिला रत्न अंजलि सुवर्ण एको भार ९३
कृतांजलि सबाको करिला नमस्कार * सबाको नृपति अर्च्चिलन्त बारे बार
हस्ती घोरा रथ दोला दासी दास देश * सुवर्ण झारि खुड़ि भाजन अशेष ९४
मनत बांछिया राजा पुत्रर कल्याण * नपारि कहिबे यत करिलन्त दान
नट भाट तेली माली दुखी भिक्षुजन * अन्नपाने महादाने सन्तोषिला मन ९५
आछिलेक खाटनिया नृपति यतेक * दिला बस्त्र अलंकार प्रसाद अनेक
देव पितृ मुनिगण यतेक जगत * सबाको तुषिल राजा पुत्र उत्सवत ९६
राज-सतकार पाया मुनि निरन्तर * राजाक प्रशंसा करि चलि गैला घर
समाजत लोक आछिलेक यतमान * महा मनरंगे चलि गैल स्थाने स्थान६९७
पाचे दशरथ संकलिया यत काज * परिपूर्ण मनोरथ भैला महाराज
नखंडे तृपिति आति देखि पुत्रमुख * जीवर सन्तोष येन पाया मोक्षसुख६९८
ईश्वर अंशर तेज महा प्रज्वलित * चन्द्रमार कला येन बाढ़े निते नित
चारि भाइर माजे ज्येष्ठ भैलन्त श्रीराम * परम उज्ज्वल तनु दुर्ब्बादलश्याम६९९

रहेंगे ।। ९० ।। अपने गुण और यश के द्वारा वे संसार को आनन्दित करेंगे । राम की महिमा का किसी को अन्त नहीं मिलेगा । सभी लोगों को इनसे प्रेम हो जायगा । हे महाभाग, तुमको, कितना अच्छा सुपुत्र प्राप्त हुआ है ।। ९१ ।। ऋषियों ने जब इस प्रकार से उनकी राशि-गणना की, तो दशरथ का मन अत्यन्त सन्तुष्ट हुआ । ईश्वर को पुत्र के रूप में पाकर उनके मन में बड़ा कौतूहल उत्पन्न हुआ । महाबली दशरथ ने सारे मुनियों की पूजा की ।। ९२ ।। परमान्न और पंचामृत से उनको भोजन कराया । पुष्प, अगरु और चन्दन देकर उनको तुष्ट किया । सभी को सुन्दर वस्त्र और आभूषण पहनाये । अँजुरी भर कर रत्न और एक भार सुवर्ण भी दिया ।। ९३ ।। नृपति ने सभी को हाथ जोड़ कर नमस्कार किया । और सभी की बार-बार अर्चना की । हाथी घोड़ा रथ डोली दास दासी, सोने की बने झारी, कुल्हड़ कितने ही संख्या में— ।। ९४ ।। —राजा ने पुत्र के कल्याण की मन में इच्छा कर मनमाना दान दिया । कितना दान किया यह नहीं कहा जा सकता । नट, भाट, तेली, माली, दुखी, भिखमंगों को भोजन, पेय तथा दान द्वारा सन्तुष्ट किया ।। ९५ ।। जितने भी अधीनस्थ राजा थे उनको प्रसाद (उपहार) स्वरूप पर्याप्त वस्त्र तथा अलंकार आदि दिये । देवता, पुरखों और मुनियों के सहित राजा ने पुत्र उत्सव में सभी को सन्तुष्ट किया ।। ९६ ।। इस प्रकार निरन्तर राजा का सत्कार प्राप्त कर सारे मुनि राजा की प्रशंसा कर अपने-अपने घर चले गये । समाज में जितने भी लोग थे, सभी प्रसन्न-मन होकर अपने-अपने स्थान चले गये ।। ६९७ ।। इसके बाद राजा दशरथ सारे कार्यों का सम्पादन कर पूर्ण-मनोरथ हुए । पुत्र का मुखड़ा देखकर उनका मन भरता ही नहीं था, मानो मोक्षसुख प्राप्त कर जीव को सन्तोष मिल रहा हो ।। ६९८ ।। विष्णु के अंश का तेज अति आभापूर्ण है । चन्द्रमा की कला के समान प्रतिदिन वह बढ़ता ही जाता था । चारों भाइयों में राम सबसे ज्येष्ठ थे । उनका शरीर नये दूब के साँवलेपन की आभा लिये हुए है ।। ६९९ ।। दोनों नयन मानों कमलयुक्त

पद्मगर्भ अरुण नयनयुग ज्वले * सुप्रसन्न बदन चन्द्रतो करि बले
शोभन कपोल कर्ण स्कन्ध सुवलित * शिर छत्राकृति केश नील आकुंचित ७००
धनुर समान भ्रुवयुग करे कान्ति * नासा तिलफुल मनोहर दन्तपान्ति
सुन्दर स्कन्धर कम्बुकंठ मनोनीत * भुज भुजंगम सम समान बलित ७०१
सुदीर्घ आंगुलि कर किशलय सम * नख मणि प्रकाशे देखिते मनोरम
वक्षस्थल सुन्दर देखिते मनोहर * त्रिबलि बलित नाभिपद्म सरोबर ७०२
बहल जघन कटि सिंह सप्रमाण * उरु करीकर जानु जघन सुठान
पद्मकोष जिनि ज्वले चरण युगल * चम्पक कलिका सम आंगुलि उज्ज्वल ७०३
नख मणिचय येन ज्वले चन्द्रगण * जाक देखि स्तम्भि रहे भकतर मन
आलता गुलिले येन देखि पदतल * अत्यन्त लावण्य आतिशय सुकोमल ४
रेखारूपे चरणत प्रकाशे कमल * महापुरुषर चिह्न ज्वले इसकल
सर्ब्बांग सुन्दर रूप परम मधुर * देखन्ते लोकर पाप ताप हबे दूर ५
परम श्रीमन्त सन्त शीतल शरीर * सागर गंभीर धीर गुणर मन्दिर
अमृत समान बाणी मधुर आलाप * सर्ब्बजनरंजन नाहिके कोप ताप ६
कैकेयीर तनय भरत शुभानय * परम सुन्दर सर्ब्ब गुणर आलय
सुमित्रार तनय लक्ष्मण शत्रुघन * दुयो सर्ब्ब सुन्दर शीतल सुशोभन ७
दुयो सुकुमार दुयोजन शुभाशय * सर्ब्ब गुणान्वित दुयो भाइ शुभानय
कौशल्या कैकेयी परमान बाटि दिल * दुयो भाग परमान सुमित्रा भुंजिल ८

सूर्य के समान प्रकाशित हो रहे हैं। प्रसन्न मुखड़ा मानो चन्द्रमा हो। गाल, कान और कन्धे सुडौल हैं। सिर पर छत्र के आकार के नीले घुँघराले बाल हैं ।। ७०० ।। दोनों भौंहें धनुष के समान शोभायमान हैं। नाक तिलफूल के समान है और दाँतों की पाँत मनोहर है। सुन्दर कंधों के ऊपर शंख जैसा मनमोहक कंठ है। दोनों बाँहें सर्प के समान एक ही प्रकार से पुष्ट हैं ।। ७०१ ।। उँगलियाँ लम्बी-लम्बी और हाथ नव-पत्र के समान हैं। नाखून से माणिक्य की आभा निकलती है जो कि देखने में मनोरम है। वक्षस्थल देखने में बड़ा ही सुन्दर और मनोहर हैं। त्रिबली अंकित पेट रूपी सरोवर में नाभि पद्म के समान है ।। ७०२ ।। पुष्ट कूल्हों के ऊपर कमर उनको सिंह सिद्ध करती है। जाँघ हाथी के सूँड़ के समान सुडौल है। दोनों चरण कमल-कोष जैसे झलकते हैं और चम्पे की नाईं उँगलियाँ दीप्तिमान है ।। ७०३ ।। नाखून की मणियाँ मानों चन्द्रमाओं की तरह प्रदीप्त हैं, जिनको देखकर भक्तों का मन स्तम्भित रह जाता है। पदतल देखने से लगता कि आलता से रंगे हुए हैं। उनमें बड़ी ही लुनाई है और बहुत ही कोमल हैं ।। ७०४ ।। चरणों में रेखा के रूप में कमल अंकित हैं। महापुरुष होने के ये सारे लक्षण शोभा पाते हैं। उनके सारे अंग सुन्दर हैं और रूप बड़ा ही मधुर है जिसको देखते ही लोगों के सारे पाप-ताप दूर हो जाते हैं ।। ५ ।। वे बड़े ही श्रीमन्त हैं, सन्त हैं और उनका शरीर शीतल है। वे समुद्र के समान धीर और गम्भीर हैं, गुणों के मन्दिर हैं। उनकी वाणी अमृत के समान मधुर है। वे सभी लोगों को आनन्द देते हैं और उनमें कोई क्रोध या संताप नहीं है ।। ६ ।। कैकेयी का बेटा भरत सच्चरित्र है, देखने में रूपवान और सभी गुणों का आलय है। सुमित्रा के दो पुत्र लक्ष्मण और शत्रुघ्न हैं। दोनों ही सर्वांग-सुन्दर, शीतल स्वभाव (ठंडे मिजाज) के और सुदर्शन हैं ।। ७ ।। दोनों ही सुकुमार हैं और दोनों ही सच्चरित्र हैं। कौशल्या और कैकेयी ने अपने-अपने पायस से हिस्सा दे दिया था, उन दोनों हिस्सों को सुमित्रा ने खाया था ।। ८ ।। उन दोनों भागों के

सेइ दुयो भागे भैल दुइ सहोदर * कौशल्यार भागे भैल लक्ष्मण कुमार
कैकेयीर भागत भैलन्त शत्रुघन * एतेको दुइको भक्ति करे दुयो जन ९
रामत भकति सदा करन्त लक्ष्मणे * भरत शत्रुघन थाकन्त मिलने
भरत लक्ष्मण शत्रुघन महासन्त * ज्येष्ठ रामत सदा भकति करन्त १०
अन्यो अन्ये चारि भाइ परम मिलन * एके विष्णु अंशे आसि भैल चारि जन
नमो नमो राम रघुकुलर तिलक * सज्जनरंजन दुष्टजन विनाशक ११
यार नामे पूरे जगतर मनकाम * पलाओक पातक डाकि बोला राम राम १२

छवि

परम पुरुष हरि लीला नरतनु धरि राम रूपे हुया अवतार ।
बाढ़ि यान्त प्रतिनित समस्तरे रंजि चित्त आचरन्त क्षत्र व्यवहार ।।
पितृ-मातृ चरणत सेवात सतते रत देव द्विज गुरुर चरणे ।
करन्त भकति नित सदाय धर्म्मत चित दंभ अहंकार नाहि मने ।। १३
परम आचारी सन्त आतिशय नीतिमन्त पढ़िलन्त शास्त्र निरन्तर ।
अत्यन्त करुणाशील नानागुण अभ्यासिल अस्त्रे शस्त्रे भैला धनुर्द्धर ।।
दानधर्म राजधर्म कुलर यतेक कर्म्म जानिला चारिओ महाशय ।
गुरुक करिया मान साम दंड भेद दान जानिलन्त आरो यत नय ।। १४

कारण ही दो सहोदरों ने जन्म लिया । कौशल्या के हिस्से से कुमार लक्ष्मण और कैकेयी के हिस्से से शत्रुघ्न उत्पन्न हुए । इसी कारण दोनों राम और भरत क्रमशः इन दोनों की भक्ति करने लगे ।। ९ ।। लक्ष्मण सदा राम की भक्ति करते और शत्रुघ्न सदा भरत के साथ जुड़े रहते थे । भरत, लक्ष्मण और शत्रुघ्न बड़े ही सच्चरित्र थे । वे सदा ज्येष्ठ राम का आदर करते थे ।। १० ।। चारों भाइयों का आपस में बड़ा मेल था । एक ही विष्णु ने चार अंशों में जन्म लिया था । हे रघुकुलतिलक राम, तुमको नमन है, तुम सज्जनों के हितकारी और दुर्जनों के विनाशक हो ।। ११ ।। जिसके नाम लेने पर संसार की सारी मनोकामनाएँ पूरी हो जाती हैं और पातक दूर भाग जाता है, उस राम का नाम लो ।। ७१२ ।।

छवि

परम पुरुष ईश्वर नया शरीर धारण कर राम के रूप में लीला करने अवतीर्ण हुए । प्रतिदिन वह बढ़ते जाते और सारे लोगों का चित्त प्रसन्न करते । क्षात्र धर्म का आचरण करते । माता-पिता के चरणों में तथा देव, द्विज और गुरु के चरणों की सेवा में सदा तत्पर रहते थे । वे सदा धर्म में तल्लीन, नित्यप्रति भक्ति में लवलीन रहते थे, उनके मन में दम्भ या अहंकार रंचमात्र नहीं था ।। १३ ।। उनका आचरण सन्तों जैसा था, वे पूर्णरूप से नीतिज्ञ थे, उन्होंने निरन्तर शास्त्रों का अध्ययन किया । परम करुणामय ने विभिन्न गुणों का अभ्यास किया और अस्त्र-शस्त्रों की शिक्षा पाकर *धनुर्धर बन गये । दानधर्म, राजधर्म, वंश के सभी करणीय कर्म आदि चारों राजकुमारों ने जान लिए । गुरु का पूर्ण सम्मान करते हुए उन्होंने साम, दाम, दंड, भेद की नीति जान ली और भी न जाने क्या-क्या जान लिया ।। १४ ।। चारों भाइयों में राम सभी गुणों में अतुलनीय हैं, राम के समान दूसरा कोई नहीं ।*

त्रिया त्रण सगर्भा थई, घणुं हरख पाम्या राय,
पेलो पिंड समडी लेई गई, तेनो थयो कवण उपाय? । २२ ।
एक हतो वानर केसरी, तेनी अंजनी नामे नार,
ते पोतानो आश्रम बांधी, रहेतां वन मोझार । २३ ।
कंई प्रजा नव थई तेहने, त्यारे विचार्युं छे त्यांहे,
तप करवा बेठी अंजनी, ऋषिमुख परवत मांहे । २४ ।
घणुं कष्ट करती कामिनी, ते आराधे त्रिपुरार,
वर्ष सात सहस्र सुधी, तप कर्युं ते ठार । २५ ।
शिव प्रसन्न थईने बोलिया, तुं माग्यने वरदान,
अंजनी कहे मुंने पुत्र आपो, तेजस्वी बळवान । २६ ।
शंकर कहे—धन्य अंजनी, तुज पुत्र थाशे नेट,
रुद्र जे अगियारमा, ते प्रगटशे तुज पेट । २७ ।
आ मंत्र जप वायु तणो, बे कर पसारी एह,
प्रसाद आपे पवन तुजने, भक्ष करजे तेह । २८ ।
शिवजी गया एवुं कही करी मंत्र दान प्रकाश,
ते समे समडी पिंड लेईने, ऊडी छे आकाश । २९ ।

तीनों स्त्रियाँ गर्भवती हो गयीं, तो राजा बहुत हर्ष-विभोर हो गये। (अब सुनो,) वह (जो) पिण्ड चील ले गयी, उसकी क्या स्थिति हुई? । २२ । कोई एक केसरी नामक वानर था। उसके अंजनी नामक स्त्री थी। वे (दोनों) वन में अपना आश्रम बनाकर रहते थे। २३ । उनके कोई सन्तान नहीं उत्पन्न हुई; तब वहाँ उन्होंने विचार किया और अंजनी ऋष्यमुख पर्वत पर तपस्या करने के लिए बैठ गयी। २४ । वह स्त्री बहुत कष्ट (सहन) करती। वह त्रिपुरारि शिवजी की अराधना किया करती। उस स्थान पर उसने सात हज़ार वर्ष तक तप किया। २५ । (अन्त में) प्रसन्न होकर शिवजी बोले— 'तुम वरदान माँगो'। अंजनी ने कहा— 'मुझे तेजस्वी, बलवान् पुत्र दो'। २६ । (इस पर) शिवजी ने कहा— 'अंजनी, तुम धन्य हो। तुम्हारे अवश्य पुत्र (उत्पन्न) होगा। जो ग्यारहवाँ रुद्र है, वह तुम्हारे पेट (गर्भ) से प्रकट होगा। २७ । दोनों हाथों को फैलाये हुए तुम वायु (देव) के इस मंत्र का जप करो। पवन (देव) तुम्हें प्रसाद देंगे, उसे तुम खा लो'। २८ । ऐसा कहते हुए प्रसिद्ध मंत्र देकर शिवजी चले गये। इस समय (वही) चील (कैकेयी के हाथ में से प्रसाद का पिण्ड लिये हुए) आकाश में उड़ गयी है। २९ ।

त्यारे वायु वायो अति घणो, आज्ञा शिवनी अभंग,
पंखिणी तव व्याकुळ थई, अति झपट लागी अंग। ३०।
चर चंचुमांथी पडचो तत्क्षण, कर्युं कारज सार,
वायुए लावी मूकियो, अंजनी कर मोझार। ३१।
प्रसाद पडियो कर विषे, ते जोई हरखी एह,
शिवमंत्र भणीने अंजनीए भक्ष कीधो तेह। ३२।
ते समडी पूर्वे अपसरा, बह्मलोक रहेती जाण,
सुवर्चसा देवांगना, नामे हती निरवाण। ३३।
एक समे ब्रह्मानी सभानां, नृत्य करती नार,
चंचळताए सर्व सामुं, जोती काम-विकार। ३४।
स्वर मान चूकी मानुनी विधिए तेने दीधो शाप,
तुं चंचळ दृष्टे जुए माटे, समडी थाजे आप। ३५।
अनुग्रह पूछचो प्रमदाए, त्यारे प्रजापति कहे वाण,
थोडा दिवसमां राय दशरथ, यज्ञ करशे जाण। ३६।
प्रसाद वह्नि आपशे, राणीओने तेणी वार,
केकै तणा कर विषेथी, चर लेजे तुं निरधार। ३७।

तब (अचानक) पवन अतिशय ज़ोर से बहा। शिवजी की आज्ञा तो अभंग (अटल) है। तब (वह चील) पक्षिणी व्याकुल हो गयी। उसके अंग में बहुत झपट आ गयी। ३०। तत्क्षण उसकी चोंच में से वह चरु (प्रसाद का पिण्ड) गिर गया और उसने सुन्दर (इच्छित) काम कर दिया। वायु ने उसे अंजनी के हाथ में ला डाला। ३१। हाथ में प्रसाद पड़ा, यह देखकर वह आनन्दित हो गयी। शिवजी का दिया हुआ मंत्र पढ़कर अंजनी ने उसे खा लिया। ३२। यह जान लो कि वह चील (पक्षिणी) पूर्वकाल में अप्सरा थी, जो ब्रह्मलोक में रहती थी। सचमुच वह सुवर्चसा नामक देवांगना थी। ३३। एक समय वह नारी ब्रह्माजी की (राज–) सभा में नृत्य कर रही थी। सबके सामने काम-विकार के कारण वह चंचलता से देखती रह गयी। स्वर-मात्रा में उसने गलती की। ऐसा मानकर विधाता ने उसे शाप दिया— 'चंचल नज़र से देखने के कारण तुम स्वयं चील हो जाओगी'। ३४-३५। (तदनन्तर) उस स्त्री ने अनुग्रह पूछा, तो ब्रह्माजी ने यह वचन कहा— 'यह समझ लो कि थोड़े दिन में दशरथ राजा यज्ञ करेंगे। ३६। उस समय स्वयं अग्निदेव रानियों को प्रसाद देंगे। तुम कैकेयी के हाथ में से चरु अवश्य (उठा) लो। ३७।

ते पिंड भक्ष करीश नहि तुं, ऊडजे आकाश,
चर-स्पर्शथी पामीश पाछी, सत्य-लोक-निवास । ३८ ।
ते समडी केरी चंचुमांथी, पिंड पडियो त्यांहे,
निजरूप धरीने अप्सरा गई, बह्मलोक ज मांहे । ३९ ।
चर भक्ष कीधो अंजनी, ते सगर्भा थई तेणी वार,
दिन दिन वृद्धि थाय छे, अंजनी तेज अपार । ४० ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

अपार तेज अंजनी केरुं दिन दिन वृद्धि थाय रे,
श्रोताजन सहु सांभळो, कहुं हनुमंत जन्मकथाय रे । ४१ ।

तुम उस प्रसाद-पिण्ड को न खाना। तुम (वैसे ही) आकाश में उड़ ही जाओ। बाद में उस प्रसाद के स्पर्श से तुम सत्य (ब्रह्म)–लोक में निवास को प्राप्त होगी। ३८। उस चील की चोंच में से वहाँ पिण्ड गिर पड़ा, तो अपने (पूर्व) रूप को (पुनश्च) ग्रहण करके वह अप्सरा ब्रह्मलोक में (लौट) गयी। ३९। अंजनी ने चरु को भक्षण किया, तो उस समय वह गर्भवती हो गयी। (उससे) अंजनी की असीम (अद्‌भुत) कान्ति दिन-ब--दिन बढ़ती जाती है। ४०।

अंजनी का असीम तेज प्रतिदिन बढ़ता जाता है। श्रोताजनो! तुम सब सुनो, मैं हनुमान के जन्म की कथा कहता हूँ। ४१।

* * *

अध्याय–१३ (हनुमान का जन्म)

राग सामेरी

हवे श्रोताजन सहु सांभळो भावे, हनमंत जनम-कथाय,
पूरा मास हवा अंजनीने, प्रसव समे त्यांहां थाय। १।
सुगम समिर दिशाओ दीपे ने, फूल्यो फागण मास,
वनमांथी ऋषि-पत्नीओ आवीने, बेठी अंजनी पास, । २ ।

अध्याय १३ (हनुमान का जन्म)

श्रोताजनो, अब (तुम) सब प्रेमपूर्वक हनुमान के जन्म की कथा सुनो। अंजनी को पूरे महीने हो गये, तो उसकी प्रसूति का समय आ गया। १। (उस समय) पवन सुगम अर्थात् अनुकूल हुआ ; दिशाएँ

पुत्रनो जन्म थयो तेणी वेळा, वानरकेरो वेष,
उदयाचळ उपर जेम ऊगे, कांति अंग दिनेश । ३ ।
विद्युत जेवां कुंडळ जळके, मणि जडित्र शिर टोपी,
वज्र कछोटो कोपीन कंचन, कटीए मुंजी ओपी । ४ ।
महावीर रणधीरने शोभे, यज्ञयोपवीतज सार,
मुख पुच्छाग्र प्रवाळां जेवुं, रक्तवरण सुकुमार । ५ ।
एवो पुत्र ज प्रगटयो देखी, हरख्या सरवे कोय,
क्षुधातुर थयो ते बाळक, चारे दिशाए जोय । ६ ।
त्यारे प्रातःकाळे सूरज ऊग्यो, रक्तवरण छे तेह,
कपिए जाण्युं पाकुं फळ छे, भक्ष करुं हुं एह । ७ ।
पछे रोमावळी फुतकार करीने, गरजना कीधी घोर,
दिग्गज कंप्या सिंधु ऊछळ्या, ध्रूजी धरा पद जोर । ८ ।
सिंहनाद करी तळप ज भारी, ऊछळियो आकाश,
दिनकरने फळ जाणी पोते, चाल्यो करवा ग्रास । ९ ।

उज्ज्वल हुईं। फाल्गुन मास चरम विकास को प्राप्त हुआ। वन में से ऋषियों की स्त्रियाँ आकर अंजनी के पास बैठीं। २। उस समय पुत्र का जन्म हुआ। उसका वेश वानर का था। उदयाचल पर जिस प्रकार की कान्ति से युक्त सूर्य उदित होता है, वैसी उसके अंगों की कान्ति थी। ३। उसके कुण्डल बिजली की भाँति झलकते हैं। मस्तक पर रत्न-जटित टोपी है। कछोटा वज्र का है और लंगोटी सोने की है। कमर में मुंज घास की डोरी शोभायमान है। ४। उस महावीर रणधीर (हनुमान) को सुन्दर यज्ञोपवीत (जनेऊ) सुशोभित हो रहा है। उसका मुख और पूँछ का अग्र भाग प्रवाल (मूँगे) के समान लाल और सुकोमल है। ५। ऐसे पुत्र ही को प्रकट हुए देखकर सब कोई आनन्दित हुए। (तदनन्तर) वह बालक भूख से व्याकुल हुआ। वह चारों दिशाओं में ज्योंही देखता है त्योंही प्रातः काल में सूर्य का उदय हुआ। वह लाल वर्ण का है। उस कपि को जान पड़ा कि वह (सूर्य) कोई पका फल है। (वह सोचता है कि) मैं इसे खाता हूँ (खाऊँगा)। ६-७ तत्पश्चात् रोंगटों को खड़े करते हुए उसने घोर गर्जन किया। उससे दिग्गज काँप उठे। समुद्र उछल गये। उसके पाँव के ज़ोर से पृथ्वी काँप उठी। ८। सिंहनाद करते हुए छलाँग भरकर वह आकाश में तड़क गया। सूर्य को अपना (भक्ष्य) फल समझकर उसका ग्रास करने लिए वह (आगे) चला। ९।

जेम वैकुंठमांहे जाये ऊडचो, विनता सुत बळवंत,
एम सूरजमंडल पासे आव्यो, ऊछळतो हनुमंत। १०।
त्यारे ताप घणो प्रगटचो सूरजनो, दाझवा लाग्यो तन,
पवने जाण्युं पुत्र ज बळशे, वरसाव्यो शीत परजन्य। ११।
सूरजग्रहण हतुं ते दिवसे, राहुए रविने ग्रसियो,
जाण्युं ए फळ खाय छे मारुं, कपिवर वेगे धसियो। १२।
पछे हनुमंते लांगूलनी झापटे, राहुने मार्यो अपार,
(तेनी) पक्ष ज करवा केतु आव्यो, युद्ध करवा तेणी वार। १३।
पछे राहु केतु बेने मार्या, नाठा पामी त्रास,
रुदन करंता आवी ऊभा, सुरपति केरी पास। १४।
(त्यारे) इंद्र ऐरावत बेसी चाल्यो, लीधी घणी सेन्याय,
कपिवर सामो युद्ध करवाने, आव्या सुरपति राय। १५।
दारुण युद्ध थयुं तेणी वेळा, वर्त्यो हाहाकार,
देवनी उपर अंजनीनंदन, मारे बहुविधि मार। १६।
पछी ऐरावतनुं पुच्छ ग्रहीने, कपिवर कोप्यो अपार,
इंद्र सहित पछाडचो पृथ्वी, पाम्यो दुःख तेणी वार। १७।

जिस तरह विनता का बलवान पुत्र (गरुड़) वैकुण्ठ की ओर उड़ते हुए जाता है, उसी तरह हनुमान छलाँग भरता हुआ सूर्यमण्डल के पास आ गया। १०। तब सूर्य का तीव्र ताप प्रकट हो गया, तो उसका शरीर जलने लगा। (हनुमान के पिता) पवन ने समझा कि मेरा पुत्र जल जाएगा; तब उसने शीतल बौछार बरसा दी। ११। उस दिन सूर्य-ग्रहण था; राहु ने सूर्य को निगल लिया। यह (राहु) मेरा फल खा रहा है—ऐसा समझकर कपिवर हनुमान वेगपूर्वक आगे झपटा। १२। फिर हनुमान ने पूँछ से आघात कर राहु को पीट लिया। उस समय उसका साथ देने के लिए केतु आ गया। १३। फिर हनुमान ने राहु और केतु दोनों को मारा। (तो) वे भयभीत होकर भाग गये। रोते-रोते वे सुरपति इन्द्र के पास आकर खड़े हो गये। १४। तब इन्द्र ऐरावत पर विराजमान होकर चल पड़ा। उसने बड़ी सेना साथ में ली। (इस प्रकार) कपिवर हनुमान से युद्ध करने के लिए सुरपति इन्द्र आ गये। १५। उस समय घमासान युद्ध हो गया। हाहाकर मच गया। अंजनी-नन्दन हनुमान देवों पर बहुत प्रकार से आघात करता था। १६। फिर वह कपिवर बहुत क्रुद्ध हो

त्यारे इंद्रे क्रोध करीने मार्युं वज्र कपिने शीश,
ते वज्र प्रहारथी मूर्छा आवी, धरणी ढळ्यो पति कीश। १८।
(त्यारे) वायुए पुत्र खोळामा लइने, करवा मांड्युं रुदन,
तेणे प्राण अपान बे रूंध्या छे, अकळायां त्रण भुवन। १९।
देव सहु अकळाया लाग्या, पवन बंध थयो त्यारे,
शिव ब्रह्मा विष्णु लोकपति मुनि, आव्या मळी ते वारे। २०।
त्यारे वायु प्रत्ये विधाता बोल्या, शाने करे छे रुदन?
देव सरवेने जीत्या एणे, महाबळियो छे तन। २१।
विष्णु कहे—सुण वायु ए छे, पूर्ण पिंडनो पुत्र,
चौद लोकमां कोई थकी ए, मार्यो मरे नहि सूत्र। २२।
हरिए हसी हनुमंत उठाड्यो, मूक्यो मस्तके हाथ,
चिरंजीवी रहेजे एम बोल्या, पोते वैकुंठ-नाथ। २३।
शिवजी कहे—मारां नेत्रनो अग्नि, बाळे सकळ ब्रह्मांड,
तेनो ताप नहि ए पुत्रने, बोल्या वचन अखंड। २४।

गया। उसने ऐरावत की पूँछ पकड़कर, उसे इन्द्र-सहित भूमि पर पछाड़ दिया। (इससे उन्हें) उस समय बहुत दुःख हुआ। १७। तब गुस्सा होकर इन्द्र ने (उस) वानर के सिर पर वज्र से आघात किया। वज्र के उस आघात से उसे मूर्च्छा आ गयी और (वह) कपि-पति (हनुमान) धरती पर लुढ़क गया। १८। तब पुत्र को गोद में लेकर वायु ने रुदन शुरू किया। उससे प्राण और अपान दोनों रुँध गये और तीनों भुवन व्याकुल हो गये। १९। वायु का चलना बन्द हो गया, तो सब देवता व्याकुल होने लगे। उस समय शिव, ब्रह्मा, विष्णु, लोकपाल, मुनि सब मिलकर (वहाँ) आ गये। २०। तब विधाता वायु से बोले—तू किस लिए रो रहा है? इसने सब देवों को जीत लिया है। (यह) पुत्र महाबली है। २१। विष्णु ने कहा—हे वायु! सुन। यह पूर्ण पिण्ड वाला पुत्र है। चौदह भुवनों में (से) किसी से भी मारने पर (भी) यह नहीं मरेगा। २२। फिर श्रीहरि (विष्णु) ने हँसते हुए हनुमान को उठाया और (उसके) मस्तक पर हाथ रखा। स्वयं वैकुण्ठनाथ (हनुमान से) ऐसा बोले—तू चिरंजीवी हो जाए। २३। शिवजी कहते हैं—मेरे नेत्र की अग्नि सकल ब्रह्माण्ड को जलाती है। परन्तु उसकी आँच इस पुत्र को नहीं लगेगी। इस प्रकार वे पूर्ण वचन बोले—त्रिशूल आदि मेरे जो आयुध हैं, वे इसे नहीं भेदेंगे—छिन्न न करेंगे। ब्रह्माजी ने कहा—इसे ब्रह्मशाप नहीं लगेगा, न इसे

त्रिशूळादिक जे मारां आयुध, ते एने नव छेदे,
ब्रह्मा कहे—ब्रह्मशाप न लागे, शस्त्र एके नव छेदे । २५ ।
इंद्र कहे—मारुं वज्र न वागे, थाजे वज्रदेही बळवंत,
मारे वज्रे हणायो माटे, नाम एनुं हनुमंत । २६ ।
कुबेर कहे—यक्ष राक्षसथी नव, पामे पराजय एह,
वरुण कहे—युद्धमां यश थाशे, अभंग शक्ति देह । २७ ।
यमराज कहे—काळदंड एने, नहि पीडे अभिराम,
ते प्राणीने यमदंड नहि जे, समरे तारुं नाम । २८ ।
आशिष दीधी सरव मुनि, थया विश्वामित्र कृपाळ,
कोटि वर्षे करमाय नहि एवी, आपी कमळनी माळ । २९ ।
एम हनुमन्तने वरदान आपी, देव गया निरधार,
मुनि सरवे निज आश्रम आव्या, वरत्यो जयजयकार । ३० ।
प्राण अपान सकळ प्राणीना, गति करवाने लाग्या,
अखिल विश्वमां आनंद वरत्यो, शोक सरवना भाग्या । ३१ ।
(त्यारे) पुत्रनो शोक धरीने अंजनी, करती रुदन अपार,
(एवे) लोकप्राणेशे लावी मूक्यो, उछंगमां तेणी वार । ३२ ।

शस्त्र भेदेंगे । २४-२५ इन्द्र कहते हैं—मेरा वज्र इसे चोट नहीं पहुँचाएगा, यह वज्रदेही और बलवान बनेगा । मैंने वज्र से आघात किया, इसलिए इसका नाम 'हनुमन्त' (अर्थात् 'हनुमान') होगा । २६ । कुबेर कहते हैं—यह यक्षों और राक्षसों से पराजय को नहीं प्राप्त होगा । वरुण कहते हैं—युद्ध में इसका यश (कीर्ति) होगा—बढ़ेगा । इसकी देह की शक्ति अभंग रहेगी । २७ । यमराज कहते हैं—इस सुन्दर बालक को काल-दण्ड पीड़ा नहीं पहुँचाएगा । हे हनुमान, जो तेरे नाम का स्मरण करेगा, उस प्राणी को यम-दण्ड नहीं जीतेगा । सब मुनियों ने (हनुमान को) आशिष दिया । २८ । वहाँ कृपालु विश्वामित्र ऋषि थे । उन्होंने उसे ऐसी कमल-पुष्प-माला प्रदान की, जो करोड़ों वर्षों में भी नहीं मुरझाएगी । २९ । इस प्रकार हनुमान को वरदान देकर देवता चले गये । सब मुनि अपने-अपने आश्रम गये । हनुमान का जयजयकार हो गया । ३० । (तो) सब जीवों के प्राण और अपान (गतिमान होकर) चलने लगे । समस्त विश्व में आनन्द हो गया और सबके शोक (दुख) भाग गये । ३१ । पुत्र के विषय में दुःख करते हुए अंजनी बहुत रुदन करती रही ; तब लोक-प्राणेश वायुदेव ने उस समय (शिशु को) लाकर उसकी गोद में

(त्यारे) पुत्रने जोई माता हरखी, वात्सल्य भाव अनंत
रुदे चांपी स्तनपान कराव्युं तृप्त थया हनुमंत । ३३ ।
वळी कोई समे हनुमंत भण्यो छे, सूरज केरी पास,
अन्य पुराणमां तेह कथा छे, सूरज शिष्य प्रकाश । ३४ ।
वळी अन्य प्रकारे छे उत्पत्ति, हनुमंत जन्मकथाय,
बहु ऋषिमतने भेद करीने, कल्पकथा कहेवाय । ३५ ।
ते माटे संदेह नव करशो, विवेकी संत सुजाण,
ए अफळ चरित्र ज देव तणां, ते कोणे न थाय प्रमाण । ३६ ।
ए हनुमंतनी जन्मकथा कही, बळ प्राक्रम चरित्र,
जे प्राणी सांभळे भावथकी, ते थाये पुण्य पवित्र । ३७ ।
ग्रहपीडा थाये नहि तेने, विजय सदा ते पामे,
भूत प्रेत पिशाच न पीडे, विघ्न सकळ ते वामे । ३८ ।
जंत्र मंत्र ने तंत्रनी विद्या, नाटक चेटक जेह,
हनुमंतनी कथा सांभळतां, बाध न करे तेह । ३९ ।

डाल दिया । ३२ । तब पुत्र को देखकर वह माता आनन्दित हुई। उसका वात्सल्य-भाव अनन्त था । (उसने उसे) छाती से लगाकर स्तन-पान कराया । इससे हनुमान तृप्त हो गया । ३३ । इसके सिवा, किसी समय सूर्य के पास हनुमान ने (विद्या) सीखी है । अन्य पुराणों में वह कथा है । यह विख्यात है कि वह सूर्य का शिष्य है । ३४ । इसके सिवा, हनुमान की उत्पत्ति की कथा, जन्मकथा दूसरे प्रकार से भी (बतायी जाती) है । बहुत से ऋषियों के मत में अन्तर होने के कारण, अलग-अलग कल्पना करके यह कथा कही जाती है । ३५ । इसलिए (श्रोताओ !), सन्देह न करो । तुम विवेकवान सुज्ञ सन्त हो । यह तो अगम्य देव-चरित्र ही है । किसी से भी उसका प्रमाण (अर्थात् केवल यही सही है ऐसा प्रमाण) नहीं दिया जा सकता । ३६ । हनुमान की यह जन्म-कथा कही है । वह बल, पराकम का चरित्र है। जो जीव इसे श्रद्धापूर्वक श्रवण करेगा, वह पुण्यवान, पवित्र हो जाएगा । ३७ । उसे ग्रह-पीड़ा नहीं होगी । उसे सदा विजय प्राप्त होगी । उसे भूत प्रेत, पिशाच पीड़ा नहीं पहुँचाएँगे । उसके समस्त विघ्न कम हो जाएँगे । ३८ । यंत्र-मंत्र और तंत्र की विद्या, नाटक-पिशाच—जो (भी) हैं, हनुमान की कथा का श्रवण करने पर वे उसे बाधा नहीं पहुँचाएँगे । ३९ ।

'निच्चेद'ननि पल्कि यीकुन्न बोंलियु।नच्चुगा जेसिन यखिल धर्ममुलु ६६०
'दशरथाधीशुंडु धर्मात्मु 'डनग । विशद कीर्तुल नीवु विन ब्रसिद्धुडवु
पुडमिलो नवनीश! भुवनरक्षणमु । गडवंग धर्ममुल् गलवे राजुलकु
गान रामुनिनिच्चि गाधिनंदनुनि । माननीयुनि बंपु मानवाधीश !
'घन बलोन्नतुलु राक्षसुली कुमारु । डनिकि दक्षुंडुगा' डनुचु नीकोंडुकु
शैशवंबुन किंत शंकिपनेल । कौशिकुडुंडंग गलुगुने भयमु
अधिप! विश्वामित्रु नत्युग्रतपमु । लधिकसामर्थ्यंबु लतिविचित्रमुलु
भूनाथ ! ई महापुण्युंडु देव । दानव गंधर्व दैत्युलकंटे
नेंरुगु दिव्यास्त्रंबुलिम्महाभागु । डेंरुगनि विषयंबुलेन्दुनुलेवु
जनलोकनायक जययु सुप्रभयु । ननगदक्षुनिकूतु ला जयवलन
सुप्रभवलन रक्षोवधार्थमुग । सुप्रभुंडगु भृशाश्वुंडु वेर्वेर ६७०
नस्त्राकृतुल बुत्रु लरय नेबंड्र । शस्त्राकृतुल दनूजन्मुलेबंड्र
गामरुपंबुलु गलवारि गांचि । भूमीश ! यिच्चे नी पुण्यात्मुनकुनु

'दूँगा' ऐसा कहकर (वचन देकर), नहीं देने से, शुद्ध रूप से किए गए सभी धर्म (पुण्य) नष्ट हो जाएँगे। ॥ ६६० ॥

—'दशरथ महाराज धर्मात्मा हैं'—ऐसी विशद कीर्ति से तुम प्रख्यात हो। हे अवनीश (राजन्)! पृथ्वी में लोकरक्षा के सिवा राजाओं का अन्य (कौन-सा) धर्म (कर्त्तव्य) है? इसलिए हे मानवाधीश! राम को देकर माननीय गाधिपुत्र के साथ भेज दो। 'राक्षस महाबल में उन्नत हैं, यह कुमार (राम) युद्ध के लिए समर्थ नहीं है' ऐसा (कह कर) अपने पुत्र के शैशव के बारे में इतनी शंका क्यों? कौशिक (विश्वामित्र) के रहते क्या कोई भय हो सकता है? हे अधिप (राजन्)! विश्वामित्र का अति उग्र तप और प्रबल सामर्थ्य अति विचित्र हैं। हे भूनाथ! ये महा-पुण्यात्मा देव, दानव, गन्धर्व तथा दैत्यों की अपेक्षा अधिक दिव्यास्त्रों को (उनके प्रयोग को) जानते हैं। कोई भी ऐसा विषय कहीं भी नहीं है जिसे ये महाबाहु (महाबली) न जानते हों। हे जनलोक नायक! दक्ष (प्रजापति) के जया (तथा) सुप्रभा नामक दो पुत्रियाँ थीं। उन जया से और सुप्रभा से (के द्वारा), राक्षसों के वध के लिए सुप्रभ हो भृशाश्व ने अलग-अलग ॥ ६७० ॥

—अस्त्र की आकृतियों में पचास, (और) शस्त्र की आकृतियों में पचास पुत्रों को, जो कामरूपधारी थे, प्राप्तकर, हे राजन्! इस पुण्यात्मा (विश्वामित्र) को दिया। उस कारण से ये मुनि अखिल शस्त्रास्त्रों के ज्ञाता हैं। तुम्हें डरना नहीं चाहिए। इस मुनि की महिमा के आधिक्य को, हाय! तुम समझ

नदिगारणंबुगा नखिलशस्त्रास्त्र । विदुडिम्मुनियु नीवु वेऱवंगवलव
दीमुनि महिम पेम्पेरुगलेवकट । यीमुनितो नाडि येल तप्पेदवु ?
यीमुनिचंद्रुतो नेग रामुनकु । सेमंबु जयमुनु सिद्धम्मु सुम्मु
इतडु रक्कसुल जयिंपगालेडे । हितमति नीपुत्रु निंद्धचारित्रु
नलघु शस्त्रास्त्रविद्यल बेद्द सेय । वलसि यिच्चटिकि भूवर! वच्चे गाक
कान रामुनि बंपु क्रतुवु रक्षिप ।नी निर्मलात्मुनि किच्चुट मेलु'६७८

दशरथुडु कौशिकुनि वेन्ट रामलक्ष्मणुल बंपुट

अनि वसिष्टुडु पल्क·नात्मलो नम्मि । जननाथुडारामचंद्रुनि बिलचि,
बालभावमु जूचि बाष्पमुल् निंचि ।यालिंगनमुसेसि यर्थि दीविंचि,६८०
चिप्पकूकटि दुव्वि, चेक्किलि पुडिकि । तप्पक योक्किंत दडवु सिंतिंचि,
पुण्याहवाचनपूर्वंबुगाग । बुण्यव्रतंबुलु बुण्यहोममुलु
ग्रहपूजनलु सेसि, कमनीयवस्त्र । महितभूषणमुलु मनमारनिच्चि,
योगि दानु गौसल्ययुनु वसिष्टुंडु । दगिनदीवनलिच्चि, दशरथेश्वरुडु

नहीं सकते हो। इस मुनि को वचन देकर क्यों टालते हो ? इस मुनिचन्द्र के साथ जाने पर राम की भलाई (कुशल) और विजय अवश्य ही होगी। क्या ये विश्वामित्र राक्षसों को जीत नहीं सकते थे ? हित-चिन्तन के कारण, तुम्हारे पुत्र उज्ज्वल चरित्रवान् (राम) को महती शस्त्रास्त्र विद्याओं में बड़ा (श्रेष्ठ) बनाने (के उद्देश्य से ही) हे भूवर (राजन्) ! (वे) इतनी दूर आए हैं। इसलिए यज्ञ-रक्षा के लिए राम को भेजो। इस निर्मल आत्मा वाले (विश्वामित्र) को (राम को) देना ही कल्याण-प्रद है ॥ ६७८ ॥

दशरथ का कौशिक के साथ रामलक्ष्मण को भेजना

इस प्रकार वसिष्ठ के कहने पर, मन में विश्वास कर, जननाथ (राजा) ने रामचन्द्र को बुलाया, उन्हें बालभाव से (बालक मानकर) देख, आँसू भरकर, गले लगा, हार्दिक रूप से आशीर्वाद दिया ॥ ६८० ॥

—उनकी लटों पर हाथ फेरकर, कपोलों को प्यार से स्पर्श कर, थोड़ी देर सोचते रहे। (फिर) पुण्याहवाचन पूर्वक, पुण्यव्रत, पुण्यहोम (हवन), (और) ग्रह पूजाएँ करके, मन को संतोष होने तक सुन्दर वस्त्र, महति भूषण दिए। क्रमशः स्वयं (राजा), कौसल्या और वसिष्ठ ने उचित आशीर्वाद दिए। दशरथेश्वर ने पुण्य मुहूर्त के समय पुत्ररत्न को, पुण्यात्मा गाधिसुत को दे (सौंप) दिया। प्रेम और साहस—इन दोनों भावों के

पुण्यलग्नंबुन बुत्नरत्नंबु । बुण्यात्मुडगु गाधिपुत्नुनकिच्चि,
नेम्मियु देंगुवयु नेरि बिरिगोनग । 'नम्मुनि गोलिचि पोम्म'नि
वीड्कोलिपे ६८६

विश्वामित्रुडु रामलक्ष्मणुल दोड्कोनि पोवुट

नप्पुडु लक्ष्मणुं डा रामु गोलिचि । तप्पनि भक्तितो दानुनु जनियें ।
बोंदिवि पुव्वुलवांन बोरन गुरिसें; । वदलक यनुकूल वायुवुल्वीचें;
वरघोषमंगळ वाद्यमुल्म्रोसें; ।सुरलाकसमु निंडि चूचिरि प्रीति; ६८९
नक्षीणतूण गोधांगुळित्राण । कक्षलंबिक्रुपाण कलितुलै दिव्य
शरचापहस्तुलै संयमिपिरुद । गरमुसंप्रीतिमै गदलि राघवुलु
ना वनजाप्तुनि नर्थितो गोलिचि । पोवु नाश्विनुलन बोवुचो वेड्क ।
नुरुपुण्यमतु लर्धयोजनंबरिगि । सरयुवडग्गरि श्रममु बोंन्दुटयु
रामसौमित्नुल रम्मनि यपुडु । दा मुन्नु दारुणतपमुचे गन्न
कनकगर्भुनि पुत्रिकल सर्वमंत्न । जननुल सर्वदा सौख्यदायिनुल
बल यतिबल यन बरगु मंत्नमुल । नेलमिमै वारलकिच्चें गौशिकुडु

मन को अधिक घेर लेने पर (भी) 'उस मुनि की सेवा करते जाओ' ऐसा कह कर विदा किया । ॥ ६८६ ॥

विश्वामित्र का राम-लक्ष्मण को साथ ले जाना

तब लक्ष्मण उस राम की सेवा कर (प्रार्थना कर) अमित भक्ति (भाव) से स्वयं भी उनके साथ गए । (उस समय) घेरकर (चारों ओर से) पुष्पवृष्टि झड़ी लगाकर हुई, निरन्तर अनुकूल वायु चलने लगा, श्रेष्ठ ध्वनि से मंगलवाद्य बज उठे, आकाश में (झुंड) भरकर, प्रीति से देवताओं ने (उस दृश्य को) देखा । ॥ ६८९ ॥

—अक्षय तूणीर, गोधा, अंगुली-त्राण, कमर में लटकते हुए कृपाण से कलित (सुन्दर) बने, दिव्य शर (और) चाप (धनुष) हाथ में ले, संयमी (विश्वामित्र) के पीछे, अधिक संप्रीति से (बड़े उत्साह से) राघव (रघुवंशी) इस प्रकार जा रहे थे मानों अश्विनी (कुमार) वनजाप्त (सूर्य) की प्रीति से सेवा कर (उनके) पीछे जा रहे हों । अधिक पुण्यचरित्र वाले वे आधा योजन जाकर, सरयू (नदी) के निकट पहुँच (पहुँचते-पहुँचते) थक गए । तब राम (और) सौमित्र को बुलाकर, प्रसन्न हो, उन्हें कौशिक ने बला, अतिबला नाम से अभिहित मंत्रों का उपदेश दिया तथा सर्वमंत्रों की जननियाँ

आ रामलक्ष्मणुलामंत्रशक्ति । नारूढ रवितेजुलै सोम्पुमिगिलि
नाकलि नीरुवट्टादिगा रुजलु । सोकक बलवृद्धि शोभिल्लिरंत
सरयूनदीतटस्थलि नाटि रात्रि । दरुणकोमल दर्भतल्पंबुलंदु
गौशिकुचे बुण्यकथलोप्प विनुचु । दाशरथुलु प्रमोदमुन निद्रिंप,७००
ना गाधितनयुंडु ना प्रभातमुन । वेगंबे मेल्कनि वेड्क चित्तमुन
दनरंग नट दृणतल्पंबुलयंदु । गनुमोड्चियुन्न राघवुल वीक्षिंचि
'यरुणोदयंबय्ये ननघात्मुलार ! । निरुपम पूर्वाह्ण नित्यकृत्यमुलु
वलयु नेमंबुलु वरुस गाविंप । वलयुट मेल्कनवलयु मी' रनिन
देलिसि सन्ध्याविधुल् दीर्चि कौशिकुन । कलरु चित्तमुलतो नतिभक्ति म्रोक्कि
तरणिवंशोत्तमुल् दारर्थि जनुचु । सरयू - सूरापगा - संगमंबुनु
बहुसहस्राब्दमुल् पायनि नियति । बहुतपंबुलु सेयु परमसंयमुल७०८
गनुगोनि संतोषकलितुलै गाधि । तनयुतो बलिकिरा दशरथात्मजुलु;

(आधारभूत) तथा सर्वदा सौख्यदायी कनकगर्भ (ब्रह्मा) की पुत्रियों (शस्त्रास्त्रों) को दिया, जिन्हें उन्होंने पहले दारुण (घोर) तपस्या करके प्राप्त किया था। वे रामलक्ष्मण उस मंत्रशक्ति से सूर्य (के समान) तेजस्वी हो, सुन्दरता से अधिक सम्पन्न हो, भूख, प्यास आदि रुजाओं (संकट) से मुक्त हो, बलवृद्धि से शोभायमान हुए। तब सरयू नदी के किनारे, तरुण कोमल कुश-शय्याओं पर, कौशिक से पुण्यकथाएँ अच्छी तरह सुनते हुए, प्रमोद से दाशरथी (दशरथ के पुत्र) सो गए। ॥ ७०० ॥

—वह गाधितनय उस (दिन) प्रभात-समय तड़के ही जागकर, मन में प्रसन्नता अधिक होने पर, तृणशय्याओं पर, आँखें बंद किए हुए (सोए हुए) राघवों को देखकर बोले, 'हे अनघात्माओ (पुण्यात्माओ)! अरुणोदय हो गया है। निरुपम पूर्वाह्ण (प्रातःकाल) के नित्यकर्म, आवश्यक नियम क्रमानुसार करने चाहिए। इसलिए आप लोगों को जागना चाहिए।' ऐसा कहने पर वे जगे और सन्ध्याविधियों से निवृत्त होकर, प्रसन्नचित्त से, अतिभक्ति से कौशिक को प्रणाम किया। (उसके बाद) तरणीवंशोत्तम (सूर्यवंश के उत्तम जन, राम-लक्ष्मण) बड़ी इच्छा से जाते हुए, सरयू और सुरापगा (गंगानदी) के संगम-स्थल पर पहुँचे। *(वहाँ) कई सहस्राब्दियों से अनवरत नियम से बहुतप करने वाले परम संयमी (मुनि) जनों को देखकर, अत्यन्त प्रसन्न हो, दशरथ के उन पुत्रों ने* गाधितनय से कहा, ॥ ७०८ ॥

अंगदेश वृत्तांतमु

'ऎव्वरि याश्रमंबिदि संयमींद्र ! । यॆव्वरुंडुदुरय्य ! यी तपोभूमि ?'
ननवुडु 'राम! यनंगाश्रममन । विनबडु निदि लोकविख्यातमगुचु७१०
नी याश्रमंबुन नॆलमितो दपमु । सेयुचु लीलमै शिवुडुन्न जूचि
कंदर्पु डतिदर्प गर्वितुंडगुचु । निंदुशेखरु मीद नेयंग जूचि
यडरि महादेवु डधिकरोषमुन । तडयक फालनेत्रमु विच्चिचूड
वडिचॆंडि भस्ममै वसुमति बडियॆ;। बडुट ननंगाख्य बरगॆ लोकमुल ।
नंगसंगति ददीयाश्रम भूमि । यंगदेशंबय्यॆ नंतनुंडियुनु
अरुदार दपमुलीयाश्रमभूमि । जरियिंचु पुण्युलु चरितार्थुलॆन्दु ।'
ननुचु विश्वामित्रु डत्तॆरंगॆल्ल । विनुपिंचि या रघुवीरुलु दानु
निलिचि नाडावाहिनी संगममुन । विलसित स्नानादि विधुलनुष्टिप
नानंदमंदि रय्याश्रमवासु । लैन मुनीश्वरु; लात्मल नॆरिंगि
रमणीयमूर्तुल रामलक्ष्मणुल । नमिततपोधनुडैन कौशिकुनि७२०
गॊनिपोयि वेड्कलु गॊनलॊत्तनपुडु । विनुतार्घ्य पाद्यादिविधुल बूजिंचि

अंगदेश का वृत्तांन्त

—'हे संयमीन्द्र ! यह किनका आश्रम है ? इस तपोभूमि में कौन रहते हैं ?' ऐसा कहने पर (विश्वामित्र ने कहा)-'हे राम ! यह अनंगाश्रम के नाम से लोकविख्यात है । ।। ७१० ।।

—इस आश्रम में संतृप्ति के साथ तप करते हुए, विलास (प्रसन्नता) से रहने वाले शिवजी को देखकर, कंदर्प (मन्मथ) ने अतिदर्प (अहंकार) से गर्वित हो, इंदुशेखर (चंद्रशेखर) पर (पुष्पबाण) चलाया था । (उसे) देख, रुष्ट हो महादेव ने अधिक रोष से, अविलम्ब भाल-नेत्र को खोलकर देखा । (उस अग्नि से कामदेव) शौर्य को खोकर भस्म हो पृथ्वी पर गिर पड़ा । (ऐसा) गिरकर वह लोकों में अनंग के नाम से प्रचलित हुआ । (उसके) अंग की संगति से वह आश्रमभूमि तब से अंगदेश हो गया (कहलाया) । अपूर्व इस आश्रम भूमि में तपस्या करते रहने वाले पुण्यात्मा चरितार्थ (कृतार्थ) हो जाते हैं ।' इस तरह विश्वामित्र ने वह सारा वृत्तान्त कह सुनाया । उन रघुवीरों के साथ स्वयं भी वहाँ रुककर उस नदी-संगम में विलसित स्नानादि विधियों के अनुष्ठान पूरा कर आनन्दित हुए । उस आश्रम के वासी मुनीश्वरों ने (इस समाचार को) अपनी दिव्य दृष्टि से जानकर, रमणीय रूप वाले राम-लक्ष्मण (तथा) अमित तपोधनी कौशिक को, ।। ७२० ।।

पुण्यकथागोष्टि बौंदलि या रात्रि । पुण्यरात्रमु जेसि पुण्य संयमुलु
मरुनाडु नित्यकर्मंबुलायेट । देरगोप्प नंदरु दीर्चिनमीद
'नी नाविकुडु नेर्चु नी येरु गडप; भानुवंशजुलकु बदिलमी नाव'
यनुचु विश्वामित्रु डलरंग बलुक । मुनिवर्युलेल्लरु मुदितात्मुलगुचु
सरसोक्ति संसार जलधि दाटिंचु । परतारक ब्रह्मभाव नाविकुन
करुदैन सरयुवु नथि दाटिंप । गरकौशलमु चाल गलगु नाविकुल
वारक नियमिंप वसुधेशसुतुलु । वारिकि ब्रणमिल्लि वारि दीवनलु
वारक कैकोनि वारु दम्मनुप । ना ऋषितो गूड ना नाव येक्कि
सरयुवु दाटुचो सरयुवु नडुम । गरमु विस्मयमंदि कौशिकु जूचि ७३०
'यिवे महाध्वनुलु वेल्लेसगुचुन्नवियु । दिवि नुब्बि, यिदियेमि तेलुपवे'
यनुडु
'गर मोप्पुमीरुचु गैलासशिखरि । सरयुवु मानससरसि जन्मिचि
पोंगारि साकेतपुरिचुट्टु गविसि । गंगतो गूडेडु करडुल स्रोत'
यनि मुनि सेप्पिन नथितो स्रोक्कि । यनघुलन्नदि दाटि यरुगुचो द्रोव

—(अपने आश्रम) ले गये, (और) अत्यन्त आनन्द (उत्साह) के साथ विनुत (श्रेष्ठ) अर्घ्य-पाद्य आदि विधियों से (उनका) पूजन किया। पुण्यकथा की गोष्ठियों में मन लगाकर उस रात्रि को उन पुण्य संयमियों ने पुण्यरात्रि बना दी। दूसरे दिन उस नदी के किनारे सभी लोगों के निश्चित विधान से नित्यकर्मों से निवृत्त होने के बाद विश्वामित्र ने प्रमुदित होते हुए कहा कि 'यह नाविक (रामचन्द्र) (हमें) इस नदी (जीवन या संसार) को पार कराने में समर्थ है। यह नाव सूर्यवंशियों के लिए उपयुक्त है।' विश्वामित्र के इन सरस वचनों से सभी मुनिवर प्रमुदित हुए। भवसागर को पार करने वाले पर-तारक-ब्रह्मभाव-युक्त नाविक (राम) को सरयू पार कराने के लिए (मुनियों ने) अति कुशल नाविकों को नियमित किया। (तब) राजकुमारों ने उन (मुनियों) को प्रणाम किया और निरन्तर उनके आशीर्वादों को ग्रहण कर उनके बिदा करने पर उस ऋषि (विश्वामित्र) के साथ उस नाव पर चढ़कर सरयू पार करने लगे। (तब) सरयू के मध्य (मंझधार) (में पहुँचने पर) अत्यधिक आश्चर्य से (राम ने) कौशिक को देखकर (पूछा)—॥ ७३० ॥

—'ये (कुछ) महाध्वनियाँ आकाश तक व्याप्त हो रही हैं। बताइए यह क्या है?' ऐसा कहने पर विश्वामित्र ने कहा, 'बड़ी शोभा से कैलास शिखर पर, मानससरोवर में जन्म लेकर समृद्ध हो, साकेत नगर को चारों तरफ़ से घेरकर, गंगा नदी में मिलने वाली सरयू नदी की लहरों की यह

गरुलु सूकरमुलु गासरंबुलुनु । हरिणमुल् शरभंबुलजगरंबुलुनु
बुलुलु भल्लुकमुलु बॉदलु सिंगमुलु ।गल महाटवि जॉच्चि घनुडु राघवुडु
'खदिर तिंदुक पूग खर्जूर निंब । बदरी वट प्लक्ष पाटली तरुलु
बहुळ कंटक लता परिवृत वृक्ष । सहितंबु निर्मानुष्यंबुनु नैन
यिव्वनभूमि मुनीश्वरचन्द्र ! । यॅव्वरियाश्रमं ? बॅरिंगिपु' मनुचु
नडुग विश्वामित्रु डंतयु जॅप्प । दॉडगि या रामुनितो निट्टुलनियॅ ७४०
'नलुक निंद्रुंडु वृत्रासुरु जंपि । मलकलुष प्राप्ति मलिनांगुडैन
सुरलुनु मुनुलुनु सुत्रामु निटकु । दुरितमुक्तुनि जेय दोड्कॉनि वच्चि
पुण्योदकंबुल बुण्यमंत्रमुल । बुण्याभिषेकमुल् पॉलुपार जेय
नामलकलुषंबु लनघ ! यी रॅन्डु । भूमुल निडि शुद्धि बॉन्दे वासवुडु;
मलयुक्तमैनदि मलदंबु, गलुष । कलितमैनदि यॉप्पुगा गरूशंबु
ननियु, बापघ्नंबुलनियु बेरॉसगि । जनपदंबुन दॉल्लि जंभारि दनकु
नल वृत्रुवधपापमंदु दीरुटयु । विलसित धनधान्य विभवमुल् बॉदल

गर्जना है ।' इस पर उन्होंने प्रेम से प्रणाम किया और (वे) अनघ उस नदी को पार करते जा रहे थे (तो) मार्ग में करि (हाथी), सूकर (सुअर), कासर (भैंसा), हिरन, शरभ, अजगर, बाघ, रीछ, श्रेष्ठ सिंहों से युक्त महाटवी (घोर जंगल) में प्रवेश किया । तब महापुरुष राघव (राम) ने पूछा, 'हे मुनीश्वरचन्द्र ! खदिर (कत्था), तिंदुक, पूग, निंब, बदरी, वट, प्लक्ष (पीपल), पाटल (आदि) तरुओं (तथा) बहुकंटक लता परिवेष्टित वृक्षों से युक्त यह निर्जन वन-भूमि किसका आश्रम है ? बताइए ।' ऐसा पूछने पर विश्वामित्र राम से सारा वृत्तान्त (यों) कहने लगे—।। ७४० ।।

—(किसी समय) 'क्रोध से इन्द्र, वृत्रासुर का संहार कर, मल (पाप), कलुष-प्राप्ति से मलिनांग हुए । देवता (और) मुनि सुत्राम (इन्द्र) को पाप-मुक्त करने के लिए (यहाँ) ले आए (और) पुण्योदक (पवित्र जल), पवित्र मन्त्र (तथा) पुण्याभिसेचन, सुघड़ता से करने पर हे अनघ ! उन मल (और) कलुष को, इन दोनों भूमियों (प्रदेश) पर छोड़कर वासव (इन्द्र) शुद्ध हुए । जो मल-युक्त है वह मलद, जो कलुष-कलित है वह करूश कहलाया । उन जनपदों को पापघ्न (पापों को दूर करने वाले) नाम देकर, पूर्वकाल में जंभारि (इन्द्र) वृत्रासुर वध के पाप से वहाँ मुक्त हुए, इस कारण, उन नगरियों को विलसित धन-धान्य-वैभवों से युक्त

बॊलुपार वरमुला पुरमुलकिच्चि । वॆलयिंचॆ; निकनॊण्डु विनु रघुराम; ७४८

विश्वामित्रुडु रामुनकु दाटक वृत्तान्तमु देलुपट

धरणि दाटक यनु दानवुरालु । करुलु वेयिंटिकि गल लावु गलिगि
पॊलुपॊन्दु नी रॆण्डु पुरमुलु सॊच्चि।यलवुमै बाधिंचु' ननुडु राघवुडु७५०
'ऎव्वरु लाविच्चिरी यिंति किंत ?। यॆव्वरि निजपुत्रि यी दुष्टबुद्धि ?
यी पुरंबुलु रॆण्डु नेल कारिंचु । नी पापकर्मुरा ? लेरिगिंपु' मनुडु
'नवनि सुकेतुडन् यक्षुंडु दॊल्लि । तविलि पद्मजु गूर्चि तपमाचरिंचि
यडरॆडु निष्ठमै नतनि मॆप्पिचि । कॊडुकु वेडुटयुनु 'गॊडुकु नीकीनु;
वॆलसिन गजमुल वेयिंटि लावु । गल कूतु निच्चिति गनुमु पो'म्मनिन
ना वरंबुन दानि नातंडु गांचि । भाविंचि सुंदुनि भार्यगा जेसॆ;
नतडव्वधूटि यंदतिघोर - सत्त्व । पतुल मारीच सुबाहुलन् सुतुल
बडसि लोकांतरप्राप्तुडौटयुनु । गॊडुकुलु दानुनु गूडि गर्वमुन

रहने का वर दे कर शोभायुक्त किया था । हे रघुराम ! एक और (बात) सुनो ।' ।। ७४८ ।।

विश्वामित्र का राम को ताड़का का वृत्तान्त सुनाना

—'(इसी) पृथ्वी पर ताडका नामक (एक) दानवी, हज़ार हाथियों का बल रखती हुई, शोभायमान इन दो नगरों में प्रवेश कर, अपनी सारी शक्ति से (सब को) सताती रहती है ।' ऐसा कहने पर राघव ने पूछा, ।। ७५० ।।

—'इस स्त्री को इतनी शक्ति किसने दी है ? दुष्ट बुद्धि वाली यह (स्त्री) किसकी पुत्री है ? यह पापिन इन नगरों को क्यों तंग कर रही है ?' ऐसा पूछने पर (विश्वामित्र ने कहा), 'प्राचीनकाल में (इस) पृथ्वी पर सुकेत नामक यक्ष ने आसक्त हो, पद्मज (ब्रह्मा) के प्रति तपस्या की थी। अतिशय निष्ठा से उसे प्रसन्न कर, पुत्र माँगा । (तब ब्रह्मा ने कहा) तुम्हें पुत्र (तो) नहीं दूँगा । विलसित हजार हाथियों का बल रखनेवाली पुत्री का वर देता हूँ । जाओ, उसे जन्म दो । (ब्रह्मा के) ऐसा कहने पर, उस वर से उसने उस पुत्री को प्राप्त किया । विचार करके, उसे सुन्द (नामक व्यक्ति) की पत्नी किया (विवाह किया) । उस (सुन्द) ने उस स्त्री से अति घोर शक्ति के स्वामी (भयंकर शक्तिशाली) मारीच (और) सुबाहु नामक दो पुत्रों को प्राप्त किया ।

माया ने चतुराई से सब जीवों को आकर्षित कर अपने अधीन कर लिया है। वह (उन्हें) परिच्छिन्नता (भेदभाव) के नूपुर पहना कर नट की तरह नचाती रहती है। सामीजी कहते हैं करोड़ों में से कोई एक साधु ही (ज्ञान के) सुमेरु (पर्वत) पर अग्रसर हुआ। उसने शीघ्र ही बिना कष्ट उठाये अपने परमात्मा को देख लिया है ॥ १७० ॥

गुॾे ग़ुलाम करे, माया सभ संसार खे।
हणे कल्पत कर्ड़ा, कंहिखों कीन टरे।
सन्तनि खों सामी चए, रहे पञ्ज कोह परे।
ज्योति अखण्डु ॿरे, सदा जिनिजे घरमें ॥ १७१ ॥

माया ने सारे विश्व को फँसाकर ग़ुलाम बना दिया है। वह किसी से भी न डर कर, सबको प्रपंच के कोड़े लगाती रहती है। पर सामीजी कहते हैं कि जिन सन्तों के (हृदय रूपी) घर में (ज्ञान की) अखण्ड ज्योति जलती रहती है, उनसे वह (माया) पाँच कोस दूर ही रहती है (माया का प्रभाव उन पर नहीं पड़ता है।) ॥ १७१ ॥

जींए मछीअ खे मेउ, मारे ॼार कुन्ढीअ साँ।
तींए माया माणुहुनि खे, छल वल साँ ॾे छेहु।
सामी बचियो को सूर्मो, भाड़ी पाए भेउ।
ॾूड़्हों अन्दरि ॾेहु, घिरी लधांई घरमों ॥ १७२ ॥

जिस प्रकार मछुआ जाल तथा बंसी (फ़िशिंग हुक) द्वारा मछली को (पकड़ कर) मार देता है, उसी प्रकार माया मनुष्यों को अपने छल-कपट से नष्ट कर देती है। सामीजी कहते हैं, कोई शूरवीर (ज्ञानी) ही (माया के) महान् भेद (रहस्य) को जानकर इससे बच सका है। उसने दूर स्थित परमात्मा को अपने (हृदय रूपी) घर में ढूँढ लिया है ॥ १७२ ॥

विधा सभि ठग्गे, माया जीअ ममत्व साँ।
मन्ज़िल विधी मन खों, कंहि औधूत अग्गे।
जिते तूँ माँ नाहिं का, नको लेपु लग्गे।
जग मग ज्योति जग्गे, सामी सदा अन्भई ॥ १७३ ॥

माया ने मोह से सब जीवों को ठग लिया है। किसी अवधूत ने ही मन से परे (उस जगह पर) अपनी मंज़िल बनायी है, जहाँ न तो किसी प्रकार का लेप ही लगता है और न तू-मैं की भावना ही है; अपितु जहाँ सदैव केवल ज्ञान का प्रकाश ही जगमगाता रहता है ॥ १७३ ॥

विधा जीअ वंगे, माया सभि ममत्व साँ ।
ड्राढी ड्राइणि ड्रुन्दरी, कंहिंखों कीन संगे ।
को नेही व्युसि निकिरी, अटिकल साणु अग्रे ।
ट्रेई लोकलंघे, सामी वेठो सम थी ।। १७४ ।।

माया ने सब जीवों को मोह में डालकर नष्ट कर दिया है। वह बड़ी दाँतों वाली डाइन (माया) किसी का भी साथ नहीं देती है। सामीजी कहते हैं कोई प्रेमी ही किसी युक्ति से इस (माया) से मुक्त हो सका है, तथा तीनों लोकों को पार कर सम-भाव अपना सका है ।। १७४ ।।

विधा जीअ वंगे, माया मोहे मकर साँ ।
को नेही व्युसि निकिरी, साधूअ जे संगे ।
सामी मिल्यो सतिगुरू, कयो पारि पग्रे ।
लंघ्यो लकु लंघे, मिली महद जननि साँ ।। १७५ ।।

माया ने कपट से सब जीवों को मोह कर नष्ट कर दिया है, कोई प्रेमी ही साधु के संग से इस (मायाजाल) से निकल सका है। सामीजी कहते हैं कि जिसे सद्‌गुरु मिला है वह अपने ही पैरों से (संसार रूपी) पगडंडी पार कर परमात्मा से जा मिला है ।। १७५ ।।

सभ खे कानु कसे, माया हंयों मोह जो ।
विधाईं वल छल साँ, दुब्धा मंझि दसे ।
कंहिं गुर्मुख विधुसि ज्ञाति साँ, ब्रांभण ब्रलु खसे ।
जंहिंखे राह ड्रसे, सतिगुरु ड्रिनी सच जी ।। १७६ ।।

माया ने सबको मोह रूपी तीर तान कर मारा है। उसने छल-बल से सबको दुविधा में फँसा (डाल) दिया है। ब्राह्मण (सामीजी) कहते हैं, पर जिस गुरुमुख को सद्‌गुरु ने सत्य का रास्ता दिखाया है, उसने उस (माया) का बल छीनकर, अपने ज्ञान से उसे मार दिया है ।। १७६ ।।

सभ खे ग्रासे, माया वेई मुख रे ।
सामी हिक हरिजन खों, रहे रन पासे ।
जंहिंखे हरि भासे, चीटीअ ऐं कुञ्चरमें ।। १७७ ।।

सामीजी कहते हैं कि यह मुख-हीन माया सबको निगल गई है। पर जिस हरि के भक्त को चींटी एवं हाथी में एक ही परमात्मा दिखाई देता है, उससे यह दुष्टा (माया) दूर रहती है ।। १७७ ।।

सभ खे कई कुच, माया पंहिंजे मोह जी।
सामी समुझीन कीनकी, अन्धा जीअ असुच।
ईएं चवनि था अन्भई, साधूजन समुच।
राम मिलण जी रुच, अन्दर जिनिजे अणमई ॥ १७८ ॥

माया ने अपने मोह से सबको मैला (अपवित्र) बना दिया है। सामीजी कहते हैं, पर अपवित्र अन्धे (अज्ञानी) जीव उस (माया) को नहीं समझ पाते हैं। समस्त अनुभवी साधु यही कहते हैं कि जिनके भीतर राम से मिलने की अनंत (उत्कंठा) अभिलाषा है (वे ही माया के कीचड़ से मुक्त रहते हैं।) ॥ १७८ ॥

सभखे तमां तार, लगी माया मोह जी।
भवनि भौसागर में, पाए जन्म अपार।
सटियो पिण्डु मथे तों, कंहिं हरिजन हुशियार।
जिते जीत न हार, तिते कयाऊं तकियो ॥ १७९ ॥

सबको माया मोह की गहरी तमन्ना लगी हुई है, अतः वे अनेक जन्म प्राप्त कर संसार-सागर में भटक रहे हैं। किसी हरि के प्रवीण भक्त ने ही सिर से (माया के) पिण्ड को पटक कर, वहाँ जाकर निवास किया है, जहाँ न हार है और न जीत। (आत्म-पद को प्राप्त कर लिया है।) ॥ १७९ ॥

सभ खे दिलासे, लाए माया मोहिणी।
फुर्ने फाहीअ में विझी, पलक न थिए पासे।
कयुसि गुमु ज्ञाति साँ, कंहिं नेहींअ निरासे।
सामी सम भासे, जंहिंखे अन्भय आत्मा ॥ १८० ॥

मोहिनी माया सबको (झूठे) दिलासे देकर भ्रम रूपी फन्दे में फँसा देती है; वह पल भर भी किसी से दूर नहीं रहती है। सामीजी कहते हैं कि जिस निराश प्रेमी को सब में समान (एक ही) आत्मा दिखाई देता है, उसने ही अपने ज्ञान से उस (माया) को निर्मूल कर दिया है ॥ १८० ॥

सभखे वसि करे, माया हणी मोचिड़ा।
द्राढी द्राइणि द्रन्दरी, कंहिंखों कीन टरे।
सन्तनि सापुरुषनि खों, रहे पाण परे।
सघे न धीर धरे, सामी ज्ञाणी सूर्मा ॥ १८१ ॥

माया सबको जूते लगाकर (ज़ोर-ज़बरदस्ती से) अपने वश में कर लेती है। वह अत्यन्त बड़ी दाँतों वाली डाइन (माया) किसी से भी दूर नहीं रहती है। सामीजी कहते हैं, पर साधु-सन्तों से वह स्वयं ही दूर रहती है क्योंकि उन्हें शूरवीर (ज्ञानी) जानकर, वह (माया) धैर्य नहीं धारण कर सकती है ॥ १८१ ॥

सभु विश्व वसि कई, माया मोहे ममत्व साँ।
कंहिखे छदे कीन की, निपटि निर्दई।
को नेहीं व्यसि निकिरी, रंगी रस मई।
जंहिखे ग़ाल्हि चई, सामी सतिगुरू समजी ॥ १८२ ॥

माया ने ममता से सारे विश्व को मोहित कर अपने वश में कर रखा है; वह निपट निर्दयी (क्रूर) किसी को भी नहीं छोड़ती है। सामीजी कहते हैं कि जिसे सद्गुरु ने समता (आत्मा एवं परमात्मा एक ही है) की बात बता दी है, वही आत्मा के रंग में रँगा प्रेमी इस (मायाजाल) से बचकर निकल गया है ॥ १८२ ॥

सभु संसार छले, माया कयो वसि पंहिंजे।
सामी सुपिर्युनि जी, वेठो राह मले।
ब्रली ब्रलु हारे रहिया, कंहिजी कान चले।
जंहिखे सचु पले, तंहिखे ड्रन्डवतु ड्रूरोहीं करे ॥ १८३ ॥

सामीजी कहते हैं—माया ने सारे विश्व को धोखे से अपने वश में कर लिया है, अतः वह प्रियतम (परमात्मा) की राह को बन्द कर बैठा है। (माया के आगे) बलवान् अपना बल लगाकर हार गये, पर किसी की एक भी न चली (किसी ने भी माया को वश में न किया)। पर जिसे सत्य का पता लग गया है, उसे वह (माया) दूर से ही दण्डवत (प्रणाम) करती है ॥ १८३ ॥

सभेई हैरानु, ड्रिठा माया मोह में।
व्रिलो को गुरुमुख रहे, सम सीतलु निरब्राण।
जंहिखे आत्मज्ञानु, सामी ड्रिनो सतिगुरूअ ॥ १८४ ॥

सामीजी कहते हैं कि माया के मोह में सब परेशान ही दिखाई दिये। जिसे सद्गुरु ने आत्मज्ञान दिया है, ऐसा कोई विरला गुरुमुख व्यक्ति ही सम, शीतल और मुक्त रह पाया है ॥ १८४ ॥

सभोई संसारु, माया कयो वसि पंहिंजे ।
ख़ाली छद्रियाऊँ कोनको, जोआणु बृधु ऐं ब्रारु ।
विझी ज़ारु भमें जो, कयाईं ख़लिक ख़ोआरु ।
को सामी पुरुष सचारु, जाग़ी छुटे जिन खों ॥ १८५ ॥

माया ने सारे विश्व को अपने वश में कर लिया है। इस (माया) ने, जवान, वृद्ध एवं बालक—किसी को भी (अपने प्रभाव से) खाली नहीं छोड़ा है। इसने भ्रम-जाल फैलाकर संसार के लोगों को बदनाम कर दिया है। सामीजी कहते हैं कोई सत्यव्रती पुरुष ही जागृत होकर इससे मुक्त हो सका है ॥ १८५ ॥

सारी ख़लिक़ ख़ोआरु, रहे माया मोह में ।
उथन्दे वेहन्दे निंड्र में, करे कीन क़रारु ।
व्रिले को गुर्मुखु बचियो, सामी चए सचारु ।
द्रिठो जंहि दीदारु, पंहिंजे अख्यें पंहिंजो ॥ १८६ ॥

सब लोग माया-मोह में बदनाम होते रहते हैं। अतः उन्हें उठते-बैठते तथा नींद में भी चैन प्राप्त नहीं होता है। सामीजी कहते हैं कि वही विरला सत्यव्रती गुरुमुख इस (माया) से बच गया है, जिसने अपनी आँखों से ही अपने स्वरूप (परमात्मा) का दर्शन किया है ॥ १८६ ॥

सारी विश्व छली, माया मोहे ममत्व साँ ।
कोर्युनि में को हिकिड़ो, ब्रांभण बचियो ब्रली ।
जंहिखे सतिगुर समुझ जी, ग़ुझी ग़ाल्हि सली ।
सो रमी रामकली, ग़ाए बेहद बाग़ में ॥ १८७ ॥

ब्राह्मण (सामीजी) कहते हैं कि माया ने ममता से सारे विश्व को आकर्षित कर छल (ठग) लिया है; करोड़ों में से कोई एक बलवान् (ज्ञानी) ही इससे बच सका है। जिसे सद्गुरु ने ज्ञान की छिपी हुई बात बता दी है, वह अनन्त के उद्यान में बैठकर, मस्त होकर, रामकली (रागिनी का नाम) आलाप रहा है।

रामकली :—भारत के गायन विद्या के अनुसार रामकली हिंडोल राग की पाँच स्त्रियों में से एक है। इस रागिनी में योग तथा योगियों की स्तुति ही गाई जाती है। गीता में जो कुछ भी योग तथा योगियों के विषय में कहा गया है, वह सिन्ध के कवि-शिरोमणि शाह अब्दुल लतीफ ने रामकली में गाया है ॥ १८७ ॥

सारी विश्व छली, माया मोहे ममत्व साँ ।
को व्रिलो वेसासी बचियो, ब्रांभणु चए ब्रली ।
जंहिखे ड्रिनी सतिगुरूअ, बेहद मति भली ।
रमी रामकली, गावन्दो वते गोठ में ॥ १८८ ॥

सामीजी कहते हैं कि माया ने ममता से सारे विश्व को आकर्षित कर ठग लिया है, अतः कोई विरला विश्वासी गुरुमुख ही इस (माया) से बच सका है। जिसे सद्‌गुरु ने अपार सद्‌बुद्धि दी है, वह मस्त होकर अपने ही गाँव (हृदय) में रामकली गीत गाता हुआ घूम रहा है ॥ १८८ ॥

सारी विश्व छली, माया मोहे ममत्व साँ ।
व्रिलो को गुर्मुख बचियो, ब्रांभणु चए ब्रली ।
जंहिखे सुतह स्वरूप जी, सतिगुर गाल्हि सली ।
ज्ञाणे सभु भली, कई कर्ता पुरुष जी ॥ १८९ ॥

ब्राह्मण (सामीजी) कहते हैं कि माया ने सारे संसार को ममता से मोह कर ठग लिया है। अतः कोई विरला-बलवान-गुरुमुख ही इस (माया) से बच सका है। जिसे सद्‌गुरु ने परमात्मा के स्वरूप की (रहस्यमयी) बात बता दी है, वह कर्तार पुरुष द्वारा किये हुए कामों में भलाई ही मानता है (परमात्मा के किये हुए कार्यों में ही प्रसन्न रहता है।) ॥ १८९ ॥

सारी विश्व ठगी, माया मोहे ममत्व साँ ।
कंहिखे छड्रे कीन की, वते साणु लगी ।
सामी कंहि सही कई, जोगेस्वर जगी ।
तंहिखों उथी भगी, सति करे ग़र्क़ु ज्ञाति में ॥ १९० ॥

माया ने ममता से सारे विश्व को मोह कर ठग लिया है। वह किसी को भी नहीं छोड़ती, सबके साथ लगी हुई है। सामीजी कहते हैं कि जिस योगीश्वर ने जागृत होकर अपने को सच्चे ज्ञान में डुबोकर इस (माया के सही रूप) को जान लिया है, उससे ही यह (माया) दूर भागी है ॥ १९० ॥

सारी विश्व लुटी, माया मोहे ममत्व साँ ।
कंहिखे छड्रे कीन की, बिना ढब्र ढुटी ।
को नेहीं व्युसि निकिरी, केरे कल्प कुटी ।
जंहिजी गण्ढि छुटी, सामी पेई साध संगि ॥ १९१ ॥

माया ने ममता से सारे विश्व को आकर्षित कर लूट लिया है। यह अडियल, किसी को भी अपने वश करने के सिवा नहीं छोड़ती (सबको अपने वश में करके ही चैन लेती है)। सामीजी कहते हैं कि जिस प्रेमी की साधुओं के संग से (माया की) गाँठ खुल गई है, वह प्रपंच रूपी कुटिया को गिराकर (प्रपंच से मुक्त होकर) निकल गया है (माया से मुक्त हो गया है।) ॥ १९१ ॥

सारी विश्व वग़ी, वही वाच वहण में।
लंघे चढ़ियो लख्य ते, को ताल्बी तग़ी।
जंहिंखे साध संगति जी, रमिज़ हथि लग़ी।
अन्भय ज़्योति जग़ी, सामी ड्रिठाई देहि में॥ १९२॥

सारा संसार प्रपंच के तेज़ प्रवाह में बह कर थपेड़े खा रहा है। कोई (मुक्ति का) इच्छुक प्रेमी ही सब कुछ त्याग कर (ज्ञान के) लक्ष्य की ओर अग्रसर हुआ है। सामीजी कहते हैं, जिसे साधु-संगति की युक्ति हाथ लग गई है (जिसे साधु-संगति की महिमा का पता लग गया है), उसने जागृत होकर अपने शरीर में ही (आप में ही) आतमज्ञान का प्रकाश देख लिया है॥ १९२॥

सारो जगु अन्धो, थियो माया जे मोह में।
विझी वेठा पाणखे, बिना समुझ सन्धो।
को आशिकु चढ़ियो अछते, ज्ञाणी धूड़ि धन्धो।
वारे खपति खन्धों, सामी मिल्यो स्वरूप साँ॥ १९३॥

माया के मोह में सारा संसार अन्धा हो गया है अतः वह बुद्धिहीन होकर अपने को (परमात्मा से) अलग मान बैठा है। सामीजी कहते हैं कि कोई प्रेमी ही (माया के) झूठे व्यवहार को जानकर, ज्ञान के मार्ग पर अग्रसर हो सका है। वही (माया के) बही-खाते (हिसाब-किताब) से निपट कर, स्वरूप से जा मिला है॥ १९३॥

सारो जग़ु जखे थो कुते जाँ कल्पति में।
मर्म मानुष्य देहि जो, को रहतिवानु रखे।
जो मिली साध सङ्गति साँ, अन्भय रसु चखे।
सामी सम लखे, अन्दरि ब्राहरि आतमा॥ १९४॥

सामीजी कहते हैं कि सारा संसार कुत्ते की तरह (माया के) प्रपंच में भौंकता रहता है। कोई प्रेमी ही मानव-देह का महत्व समझ कर, साधुओं का संग कर, आत्म-रस चख कर, बाहर और भीतर एक ही आत्मा को देखता है ॥ १९४ ॥

सारो जगु जखे थो, मनन जे महलात में ।
कोर्युनि में को हिकिड़ो, आत्म रसु चखे ।
जंहिते हथु रखे, सामी पूरो सतिगुरू ॥ १९५ ॥

सामीजी कहते हैं कि सारा संसार मन के महलों में (झूठी कल्पनाओं में) व्यर्थ ही शेखी बघारता रहता है। करोड़ों में से उसी एक व्यक्ति ने आत्म-रस का स्वाद लिया है, जिस पर पूर्ण सद्गुरु ने अपना हाथ रखा है (कृपा की है।) ॥ १९५ ॥

सारो जगु जखे, स्वप्न में सामी चए ।
जाग्रयो पंहिंजे जीअ में कल्पति कान रखे ।
अन्दरि ब्राहरि नभ ज्याँ, अन्भय लालु लखे ।
चेतन रसु चखे, रोम रोम में राति द्वींह ॥ १९६ ॥

सामीजी कहते हैं कि सारा संसार (माया के झूठे) स्वप्न में बड़-बड़ाता रहता है पर जागृत (व्यक्ति) अपने हृदय में (माया की) कलुषता नहीं रखता है। वह आकाश की भाँति (निर्लिप्त हो) बाहर तथा भीतर आत्म-ज्ञान रूपी रत्न को ही देखता रहता है। उसका रोम-रोम दिन-रात आत्मरस का स्वाद लेता रहता है ॥ १९६ ॥

सारो जगु जखे, स्वप्न में सामी चए ।
जाग्रयो पंहिंजे जीअ में, रती न मैलु रखे ।
अन्दरि ब्राहरि आत्मा, पूरणु पाकु लखे ।
चेतनु रसु चखे, लूअँ लूअँ लाल गुलाल थी ॥ १९७ ॥

सामीजी कहते हैं कि सारा संसार (माया के झूठे) सपने में बड़-बड़ाता रहता है। पर जागृत (ज्ञानवान्) अपने हृदय में रत्ती भर भी (माया की) मैल नहीं रखता है। उसे बाहर-भीतर पूर्ण, पवित्र आत्मा ही दिखाई देता है तथा उसका रोम-रोम गुलाल की तरह लाल होकर (आत्मानन्द के रंग में रंगकर) आत्मरस का स्वाद लेता रहता है ॥१९७॥

बेरॆवेरॆ माणिकद पॊळपु मुट्टॆ किडियिडुव सूर्यकांतद शिलॆ-
शळमं, अतिकुतूहलदिं नोडुत्तॆ मुट्टिबर्प समयदॊळ् तॊट्टनॆ
कट्टिदिरॊळ्—

मनमं मुट्टैसि मध्यंदिनद बिसिलॆ बॆळ्दिगळंतागॆ तन्नि
तनुवं बेकॆय्दु बाह्यमेंद्रियमनुडुगि कैयिक्कि निर्वाण साम्रा-
ज्य निवासकॊर्वनंतर्मुखनभिमुखनादित्यबिंबक्कॆ योगीं-
द्रनतंद्रं निर्निमेषं नगनिकट हटद्रत्नकूटंबॊलिर्दं ॥ १४ ॥

मुगिदुवु करकमलंगळ् * बगॆयिं मुंबरिदु मुनिमुखांबुजमं तुं-
बिगळंतॆ मुसुकिदुवु दि- * ट्टिगळॆनभिनुतनॊ वज्रबाहुकुमारं ॥ १५ ॥

दारुण संसरण विषॊ- * र्वीरुहमं कील्व बवसॆयिंदिर्दपनी-
धीरनॆनुत्तुं राजकु- * मारकनामुनिय बगॆद बगॆयं बगॆदं ॥ १६ ॥

दिनमुखदर्शनदिं तॊ- * ट्टनॆ कळ्तिलॆ पिंगुवंतॆ मुनिपति मुखद-
र्शनदिं चित्तद कळ्तिलॆ * जनपतिगॊमॊ्दलॆ पिंगिपॊदत्तागळ् ॥ १७ ॥

ऒनय्य खड्गधारॆय
जॆनॆय्यं नक्कुवंतॆ संसारसुख-
क्कानळिपॆ विषमलोभदि
नेनस्संतानमॆन्ननेनळालिसदो ॥ १८ ॥

यत्र-तत्र लघु चाँदनी बिखेरने वाली चन्द्रकात शिला के आसनों (बेंच) को, हर जगह ठंडी धूप फैलाने वाली वज्रशिलाओं को, तथा विभिन्न माणिक्यों के प्रकाश के स्पर्श से चिनगारी उगलने वाली सूर्य-शिलाओं को अत्यन्त कुतूहल से निहारता हुआ आगे बढ़ रहा था कि अचानक देखा कि सामने—मानो दोपहर ही चाँदनी बन गई हो इस प्रकार एकाग्र-चित्त हो अपने शरीर को मन से अलग करके वाह्य इंद्रियों के कम्पन-स्पंदन को रोककर, निर्वाण साम्राज्य के लिए अकेले अधिकारी के समान अन्तर्मुखी होकर, सूर्य किरणों की ओर मुँह किये हुये, आलस्य-रहित योगींद्र ऐसे दिखाई दिये मानों प्रकाशित वज्रों की राशि हो। १४ उन्हें देखकर वज्रबाहु के हाथ जुड़ गये। वह आगे बढ़ा। उसकी आँखों ने उस मुनिवर के मुखकमल को भ्रमरों के समान घेर लिया। १५ राजकुमार ने मन ही मन समझा कि यह योगींद्र संसार रूपी दारुण विषवृक्ष को उखाड़ देने की इच्छा रखता है। १६ जिस तरह सूर्य के दर्शन से अंधकार समाप्त हो जाता है उसी तरह मुनि के मुख-दर्शन से

एंदु तरिसंदु मनदेरकदिंदवलोकिसुत्तिर्पुदुमुदय सुंदरं बज्रबाहुकुमारन मुखारविंदमं नोडि—

भाव मुनींद्ररं बिडदे नोडिदपै मनमोल्दोडं तपः -
श्रीवधु कामिनीजनदवोल् निनगीवळे कूर्मं वस्त्रम्-
षावळियं कचावळियनीवधु गर्वद गाळु वस्त्रम्-
षावळियं कचावळियनित्तरनल्लदे पोर्दलीवळे ।। १९ ।।

एंदु सरसमं नुडिदोडरसनुदयसुंदरंगेंदनां तपमं कैकोंडोडे नीनेगे-य्वेयेने निन्नोडनानुं तपमं कैकोळ्वेनेंबुदुं—

ओडंबडिसि वाग्विडंबनदिनातनं बंधमं
पडल्वडिप बेगदिंदिरिदु वारणस्कंधदिं ।।
तोडर्परिद वन्यवारणद माण्केयिंदेरिदं
तोडर्पनिनिसानुवं बगेयदाकुभृत्सानुवं ।। २० ।।

आगळातन मनद तरिसलवं कंडु—

नगे दिटमादोडे नाडेयु
मगिदु सुहृज्जनमुमुदयसुंदरनुं कै
मुगिदेरगे माण्बनल्लें
बगेयदिरिं पेरतनेंदु परिपडे नुडिदं ।। २१ ।।

राजकुमार के मन का अन्धकार दूर हुआ। १७ उसने सोचा कि संसार-सुख, जो खड्ग की धार से शहद को चाटने के समान है, उसे चाहने वाला मेरा मन मुझे संसार-दुःख में ढकेले बिना रहेगा! । १८ इस तरह सोचने वाले (विचारमग्न) वज्रबाहु के मुखकमल को उदयसुन्दर ने देखा और बोला—बंधु, मुनिवर को इस तरह अपलक देखने वाला तुम्हारा मन भले ही तपःश्री को अपना ले लेकिन क्या वह कामिनी की तरह तुम पर दया दिखाकर सुख देगी? वह अभिमान से भरी है और ऐसे लोगों पर ही संतुष्ट होती है जो अपनी समस्त सम्पत्ति, वस्त्र-आभूषण आदि को, तथा उनके मोह को त्याग देते हैं। १९ इस तरह विनोद की बात (सरस बात) करने पर वज्रबाहु ने उदयसुन्दर से पूछा—अगर मैं तपस्या को स्वीकार करूँ तो तुम क्या करोगे? उत्तर में उदयसुन्दर ने कहा तुम्हारे साथ मैं भी तपस्या करूँगा। वज्रबाहु ने उसे समझाकर, संसार-बन्धन से छुटकारा पाने की आतुरता से, तुरन्त हाथी की पीठ से उतर कर वसंतगिरि पर चढ़ने की बाधाओं की पर्वाह किये बिना बाधारहित हाथी की तरह उस (वसंतगिरि) पर चढ़ने लगा। २० उसके मन के निश्चय

ई मुनियुमनीमनमुम- ✱ नीमैयुमनीमनुष्यगतियुमनांमु-
न्नेमानों पडेदेंळिली ✱ सामग्रियोंळप्पुकेंय्वेंनघविघनमं ।। २२ ।।

ऍंदु मवद परिच्छेदमं नालगेंगें तंदु परिजनमनोंडंबडिसि—

कर्विन बिल्लनिक्कि भयदिं मदनं परिदेरेंपुत्तना-
पर्वतमं नरेंद्रसुतनेरि विराजितकेशपाशमं ।।
पर्विद मोहपाशदोंडनोंमोंदलोंळ् परिदिक्किदं जसं
पर्वुविनं जगत्रययमना मुनिमुख्यन पादपार्श्वदोंळ् ।। २३ ।।

अंतु वज्रबाहुकुमारं गुणसागरभट्टारकर चरणोपांतदोंळ् तपश्चरण निरतनप्पुदुं—

ऍंन्नोंडवंदंतकनं ✱ बेंन्नट्टलोंर्डचिदं जितात्मं सोंडेंदं ।।
देंन्न जसमळिगुमेंनगदे ✱ बन्नं बन्नक्कें बेरें कोडेंरडोंळवे ।। २४ ।।

ऍंदुदयसुंदरनुं परिच्छेदिसि तन्नोंडनें तपक्कें तरिसंदिर्पत्तु मूवररसुमक्कळ् वेंरसु तपोनिधियं सन्निधियोंळ् जातरूपधरनप्पुदुं—

अग्रजनोंळाद जिन दी-
क्षाग्रहणमननुजें केळ्दु तानु जिन दी-
क्षाग्रहयं पडेंदळ् ल-
ब्धिग्रहणदिनोंळ्पुवडेंवुदोंदच्चरियें ।। २५ ।।

को समझकर उदयसुन्दर ने भी, इस बात की चिन्ता किये बिना ही कि दुनिया क्या कहेगी, संसार का मोह छोड़ने की ठानी। २१ (और सोचा) इस मन को, इस देह को तथा इस मानव-जन्म को प्राप्त करने वाला मैं शीघ्र ही उस मुनि से पाप-रहित गति प्राप्त कर लूँगा। २२ अपने मनके इस निर्णय को वाणी के द्वारा, परिजनों को बताकर उन्हें समझाया। वह अपने हाथ में धारण किये हये इक्ष धनुष को फेंक कर उसी तरह पर्वत पर चढ़ने लगा जिस तरह ईश्वर के भय से कामदेव अपने धनुष को फेंककर वल्मीक पर चढ़ गया था। अपनी केशराशि को और मोहपाश को फेंककर (त्याग कर) राजकुमार मुनिवर के चरण-कमलों के पास इस तरह पहुँच गया मानो कीर्त्ति जग में व्याप्त हो गई हो। २३ इस तरह वज्रबाहु कुमार गुणसागर भट्टारक के चरणकमलों के पास पहुँच कर तपस्या में लीन हुआ। उसने अपने साथ आये हुए यमराज का पीछा करने का निश्चय किया। उदयसुन्दर ने (भी) सोचा कि अगर मैं पीछे हटता हूँ तो जग में मेरी अपकीर्ति होती है। २४

अंतु गुणोदेयुं निर्भर तपोभरमं तळेदळित्तल् विजयरथमहिनायं तन्नमोम्मनप्प वज्रबाहुकुमारन तपःप्रपंचमं निळिदु—

मदुवेगे पोपुदेत्त गिरिकंदरदोळ् मुनियं मनस्वि क-
ट्टिटदिरोळे काण्बुदेत्तदुवे कारणमार्गे कडंगि महोपा-
शद तोडरं बिर्दिचि देसेयं तुवरं निजकीर्तियं निमि-
र्चिदनेने वज्रबाहुव नेगळ्ते पोगळ्तेगळुंबमागदे ॥ २६ ॥

युवराजं नवयौवन * नवयवदिं दीक्षेगोंड्डिदं तनुवनिदे-
नवचलनो कुमारं मो- * ह्विषाहिय कालकूट रदमं किळ्तं ॥ २७ ॥

किरुगूसु विषय सुखमं * तोरेदु तपंबट्टनिन्नेवरमरिपिदं
मरेदिर्दे नेंदु तंदं * तरिसरबं तन्न चित्तदोळ् विजयरथं ॥ २८ ॥

अंतु विजयरथनरेंद्र निजतनूजप्प सुरेंद्रमन्युवेरसु तन्न मोम्मनप्प पुरंदरंगे निजराज्यमनित्तु निवार्णघोषरेंब मुनिमुख्यर समीपदोळ् तपोराज्यदोळ् निंदनित्तला पुरंदरं सकलसाम्राज्यसुखसुधारसदिं तणिदु विषयवैशम्यतत्परं क्षेमंकरमुमुक्षुगळ समक्षदोळ् दीक्षेयं कैकोंडु निल्वुदुं—

इस विचार से उसने (उदयसुन्दर ने) अपने साथ आये हुये तेईस राजकुमारों के साथ गुणसागर भट्टारक से दीक्षा ली। अपने भाई द्वारा जिन-दीक्षा ग्रहण करने की सूचना पाकर बहन गुणोदया ने भी जिनदीक्षा ली। उपलब्धि को ग्रहण करके उच्च (बड़ा) बनने में आश्चर्य क्या है ? । २५ गुणोदया और वज्रबाहु द्वारा इस तरह जिनदीक्षा स्वीकार करने की ख़बर पाकर महाराज विजयरथ ने सोचा—कहाँ विवाह के लिए रवाना होना ! कहाँ पर्वत की तराई में मुनिवर को देखना ! उसी कारण से कहाँ मोहपाश को तोड़ कर दीक्षा लेकर दिगंत विश्रांत कीर्ति पाना ! वज्रबाहु का यह यश अतिशय प्रशंसा का आश्रय बने इसमें शंका क्या है ? । २६ नव यौवन से परिपूर्ण होते हुए भी युवराज ने अपने शरीर को तपस्या में लगा दिया। उसके मन की धारणा अचल है। इसीलिए विषधर सर्प के दाँत के समान मोह को उखाड़ कर फेंक सका है। २७ छोटे बच्चे ने विषय-सुख त्याग कर तप को अपनाया ! मैं मोह के कारण अब तक भूला रहा—ऐसा सोचकर विजयरथ ने भी (तप करने का) मन में निश्चय कर लिया। २८ इस तरह अपने पौत्र पुरंदर को राज्य सौंपकर विजयरथ ने अपने पुत्र सुरेन्द्रमन्यु के साथ निवार्ण-घोष नाम के मुनिवर से दीक्षा ली। तत्पश्चात् पुरन्दर ने बहुत समय तक

कीर्तिमुखदंतें कीलिसे
कीर्ति दिशादंतिदंतमं तदपत्यं
कीर्तिधरनेंबनरसं
कार्तस्वर कुधरदंतिरिकेयं तळेदं ॥ २९ ॥

आ कीर्तिधरनरेंद्रनोंदु दिवसं मणिमाडदमेले मणिमयासन—
दोळाप्त परिजन परिवृतनोड्डोलगदोळिर्पुदुमासमयदोळ्—
इनमंडलमं स्वर्भा- * नु नुंगे कडुगदि कुंदगोंडिर्पुदुमा
जननाथनदुवे निर्वे- * ग निमित्तमेनल् विरागमं कैकोंडं ॥ ३० ॥

जगमं बेलगुव चंडा-
शुगमी स्थितिराहुविंदमादत्तेनले-
नुगिबगिमाडदे कालो-
रगमस्मद्विधमनन्य राजन्यकमं ॥ ३१ ॥

अेंदु वैराग्य परिणतियिं चतुरुदधिवलय वलयित धरित्रियं
जरत्तृणमं बगेवंते बगेये मंत्रिमंडल महासामंतरति चकितचित्तरागि—
परचक्रक्केडेमाडि भूवलयं भंडारमं बालवृ-
द्धरनीडाडि तपक्के पोपुदनयंभूपाल निन्नं पुरं-
दरनी राज्यभारक्के योचिसि तपोराज्यक्के मेय्दंदनं-
तिरे नीनाचरिसल्लदंदु धरे मात्स्यन्यायमेनागदे ॥ ३२ ॥

राज्य-सुखों की अमृतधारा का उपभोग करके, तृप्त होने के बाद विषय-वैराग्य से निरत क्षेमंकर मुमुक्षु के सम्मुख दीक्षा ग्रहण की। कीर्तिधर नाम के राजा की कीर्ति दिग्गजों की दंतपंक्ति के प्रकाश की तरह समस्त दिशाओं में फैली और पृथ्वी को सुवर्ण-पर्वत-सा बना दिया। २९ एक दिन कीर्तिधर राजप्रासाद के रत्नजडित (मणिमय) सिंहासन पर परिजनों से घिरा हुआ विराजमान था कि राहु द्वारा सूर्यमंडल को निगलने (सूर्य-ग्रहण) के कारण प्रकाश नष्ट हो गया। यह देखकर उसके मनमें वैराग्य जगा और वह विरागी बन गया। ३० अगर राहु के कारण सारी दुनिया को अपनी किरणों से प्रकाशित करने वाले सूर्य की यह स्थिति होती है तो क्या यह कालसर्प मेरा और अन्य राजाओं का (हमारी प्रगति का) नाश किये बिना रहेगा? । ३१ इस तरह सोचकर, विराग भाव के कारण, अपने विशाल राज्य को तृणवत समझकर त्यागना चाहा तो मंत्री, सामंत आदि चकित हुए। उन्होंने समझाया कि इस तरह इस राज्य

अदरिनन्वय राज्यरक्षणार्थमात्मजनं पडेदु तपंडुवुदेंदु मंत्रिमंडल-मोंडबडिसे कीर्तिधरनोंडंबट्टु पलवुकाल मरसुगेय्युत्तिरला महीवल्लभन सहदेविवेंसर महादेविगे—

पीनकुचाननदोळ् क- * पाननदोळ् बेळ्पु तोरे तोरिदुदा चं
द्राननेगे गर्भचिह्नं * मानसदोळ् तोरे बेरे हर्षविषादं ॥ ३३ ॥

संतति राज्यरक्षणेगे पुट्टिटद संतसमुं महीभुजं
संततिपुट्टे बिट्टुधरेयं तपदोळ् तरिसल्गुमेंब चिं
तांतरमुं मनक्केबरे माडिदाक्षणदोळ् नरेंद्रसी-
मंतिनि तद्विरुद्ध रस नाटक रंगमनंतरंगमं ॥ ३४ ॥

अंताके गूढगर्भदिं केलवानुं दिवसक्के बडवं निधानमं पडेदंते मगनं पडेदु पेररिरयिदंते नडपुतिर्पुदुं—

भेदिसि सहदेविगे मग-
नादुदनोर्वं धनार्थि मेच्चं पडेवों-
दादरदिनरियें भूपति-
गादुदु बगे तीर्दुदीगळेंबनुरागं ॥ ३५ ॥

और भंडार को अन्यों को हथियाने का अवकाश देकर, एवं बाल-वृद्धों को त्यागकर तपस्या के लिए निकल पड़ना उचित नहीं है। पुरन्दर ने तुम्हें यह राज्य सौंपकर तपस्या ग्रहण की थी। अब अगर तुमने इसे यों ही त्याग दिया तो क्या वह अन्यायपूर्ण नहीं होगा? और तुम्हारे इस निर्णय को जगत् मत्स्यन्याय कहे बिना रहेगा? । ३२ अतः वंश-परम्परा में उपलब्ध इस राज्य की रक्षा करने के लिए एक पुत्र-रत्न को पाने के पश्चात् तपस्या के लिए जावे—इस तरह समझाने पर कीर्तिधर ने प्रस्ताव को मान लिया और कई सालों तक राज्य करने के बाद उसकी पटरानी सहदेवी का चेहरा उज्ज्वल और कुचों का अग्रभाग काला हो गया, और गर्भ के सारे चिह्न दिखाई देने लगे। तब उस चंद्रमुखी के मन में आनन्द और विषाद एक साथ जाग उठे। ३३ वंशपरम्परा से प्राप्त राज्य की रक्षा के लिए संतान के जन्म लेने पर हर्षित होना स्वाभाविक है; लेकिन रानी को इस बात की चिन्ता हुई कि राजा राज्य त्यागकर तपस्या के लिए निकल जायेगा। अतः उसने गर्भवती होने की बात को गुप्त रखा। ३४ इस तरह कुछ समय बीतने के पश्चात् रानी ने पुत्र-रत्न को उसी तरह पाया जिस तरह किसी निर्धन को सोने का भंडार मिलता है। रानी ने इस बात को सबसे गुप्त रखा। लेकिन धन के लालच

मगनादं सहदेविगेंदीसगेदंदातंगे चेंबोन्नरा-
शिगळं वस्त्रविलेपनाभरणमं साल्वेन्नगं कोट्टना
जगती वल्लभनेन्न पूण्कॆ तुदिगेय्दित्तेंब संप्रीति कै-
मिगे संसार शरीर भोग परिनिर्वेगं तपः प्रीतियिं ॥ ३६ ॥

तोट्टिल मगंगे पट्टं * गट्टि जरतृण समानमेने वसुमतियं
बिट्टु जिनदीक्षेगोंडं * मुट्टुविनं कीर्तिदेसेगळं कीर्तिधरं ॥ ३७ ॥

इत्त सुकौशलक्कोंडेयनागि सुकौशलनेंब नाममं
पेत्तु निरंतरोपचर्यदिं नवयौवननागि मीरिदु-
द्वृत्तरनिक्कि सुत्तण कडल्वरेगं नेलनं निर्मिचि भू-
पोत्तमनितु तन्न जसमं देसेयंतुतुवरं निर्मिचिदं ॥ ३८ ॥

चतुरुदधि मेखलालं- * कृत वसुधादेविगज्जगापिनवर् दि-
क्कृतिगळेने सार्वभौमो- * न्नतियं तळेदं सुकौशल क्षितिनाथं ॥ ३९ ॥

आ सुकौशलन जननियप्प सहदेवि सहचरी समन्विते मणिमाडद नेलेय मणिमयासनद मेले लीलेयिं कुळ्ळिर्पुदुमोंदुदिवसं—

ऊरडवियेंब बगेयं * तारदतित्वरित मंदमेल्तेने गति बं-
दूरं यतिपति पोक्कं * तारापतिमंते पडेदु नयनोत्सवमं ॥ ४० ॥

से एक सेवक ने रानी के पुत्र उत्पन्न होने की सूचना राजा को दे दी। तब राजा ने सोचा कि अब मेरी मनोकामना पूरी हुई। ३५ पुत्र उत्पन्न होने की सूचना देने वाले सेवक को राजा ने सुवर्ण, वस्त्रादि देकर तृप्त किया। मेरी मनोकामना पूर्ण हुई, इस बात से संतुष्ट होकर वह राजा अपनी प्रतिज्ञा पूर्ण करने के उद्देश्य से शरीरभोग की लालसा को त्याग कर तप के निमित्त राजमहल छोड़ने को तैयार हुआ। ३६ पालने में सोये हुये अपने बेटे को सिंहासन सौंपकर, अपने राज्य को जीर्ण तृणवत् समझकर कीर्तिधर ने जिन-दीक्षा लेकर अपनी कीर्ति को दशो दिशाओं में फैलाया। ३७ इधर राजकुमार सुकौशल बड़ा होकर सुकौशल देश का राजा बना। उसने अपने शत्रु राजाओं पर विजय प्राप्त करके चारों ओर के प्रदेशों को अपने राज्य में मिलाकर शासन करते हुए अपनी कीर्त्ति-पताका को दिगंत तक फैलाया। ३८ चार समुद्र जिसकी सीमा थी और दिक्पालक जिसके रक्षक थे, इस प्रकार की अलंकृत वसुधा को सार्व-भौम सुकौशल ने सुशोभित किया। ३९ एक दिन सुकौशल की माँ सहदेवी अपनी परिचारिकाओं के साथ महल के दुमंजले पर मणिजटित आसन पर बैठी हुई थी कि—गाँव, जंगल आदि की चिन्ता किये बिना

मुनियं कंडाक्षणदॊळॆ
तनूभवं दीक्षॆगॊळ्गुमॆंबावेशं
मनदॊळिरॆ लोचनातिथि
यनतिथियं कंडु कलषमं कैकॊंडळ् ।। ४१ ।।

गुणहीनॆ धर्महानिय
नॆनिसदॆ पापक्कॆ मणियदुपवासद पा-
रणॆयॊळॆ पॊळलिंदति दा-
रुणमति पॊरमडिसि कळॆदळा यतिपतियं ।। ४२ ।।

पति मुन्नं तनगॆंबिदं बगॆदळिल्लिक्ष्वाकुवंशावनी-
पति लोक स्तुतनॆंबुदं नॆनॆदळिल्लीगळ् तपोमार्ग वि-
श्रुतनॆंबुन्नतियं विचारिसिदळिल्ला कांतॆ दुर्मोहदिं
मतिगॆट्टा यतियं परामविसि चर्याविघ्नमं माडिदळ् ।। ४३ ।।

आगळदं कंडु सुकौशलन दादियप्प वसंतमालॆ कीर्तिधरनरेंद्र-नप्पुदनरिदु—

अपमानमं सुकौशल * नृपाल जनकंगॆ पतिगॆ कीर्तिधर क्ष-
त्रपवित्रंगॊडरिसिदळ् * विपरीतमिदॆंदु नॊंदु शोकंगॆय्दळ् ।। ४४ ।।

एक मुनिवर अत्यन्त शीघ्रता से नगर में प्रविष्ट हुआ और तारापति (चन्द्रमा) के समान आँखों को आनन्द देने लगा । ४० मुनि को देखते ही इस बात के डर से कि बेटा दीक्षा ले लेगा (नगर में आये हुए) मुनि के प्रति सहदेवी के मन में द्वेष जगा । ४१ उस गुणहीन रानी ने धर्म-हानि की परवाह किये बिना तथा पाप से भी न डरकर, उपवास के पश्चात् अल्पाहार की प्रतीक्षा करने वाले मुनि को निर्दयता से नगर के बाहर निकलवा दिया । ४२ इस बात पर ध्यान दिए बिना कि वह (मुनि) कभी अपना ही पति था, या इसकी चिन्ता किये बिना कि वह कभी सूर्यवंश का जग-प्रसिद्ध राजा था और अब तपसिद्धि पा चुका है, संसार-मोह के कारण रानी ने उस अल्पाहार में बाधा डाली । ४३ सुकौशल की धाय वसंतमाला ने कीर्तिधर को पहचान लिया । अपनी मालकिन के व्यवहार से सुकौशल और कीर्तिधर दोनों का अपमान हुआ है और यह बड़ा बुरा हुआ, ऐसा सोचकर उसे (वसंतमाला को) दुःख हुआ । ४४

कौशल्या पनि यो विचार् गरि तहाँ गर्थिन् पुजा देविको ।
द्यौताका मनमा भन्या ठहरियो काम् विघ्न गर्नूनिको॥१२॥
वाणी गै तिमी विघ्न पारिकन आउ ती मन्थरा कैकेयी ।
द्वी स्त्रीका घटमा पसेर तिमिले काम् सिद्ध लाऊ गई ॥
द्यौताका इ वचन् सुनेर झटपट् तेस् मन्थरामा पसिन् ।
कैकेयीकन खुप् भुलाउन भनी फेर् कैकेयीमा पसिन्॥१३॥
वाणीका वशमा पऱ्याकि छँदि ती जाहाँ थिइन् कैकेयी ।
काम् बित्ला भनि चट्पटाइ तहिंझट् त्यो मन्थरा गैगई ॥
नाना छल् गरि ठिक्क पारिकन सब् वृत्तान्त विस्तार् भनी ।
दुई वर्छन् तिमि मागिल्यौ भनि ठुलो सूचन् गरी यो पनि॥१४॥
वाणीले ति भुलाइयाकि छँदि लौ भन्दी भइन् कैकयी ।
राम्लाई वनवास् भरत्कन रजाइँ माग्छू म चाँडो गई ॥
दुई वर्ले जब काम सिद्ध गरुँला द्यूँला सये गाउँ भनिन् ।
बीदा दी घर मन्थराकन फिराइ रिस् गर्न लाग्दी भइन्॥१५॥
सुन्दर् वस्त्र निकालि फालि कपडा मैला शरीर्मा धरिन् ।
आभूषण् कन फ्याँ कि खूप रिसले खाली जमीन्मा परिन् ॥

कौशल्या भी यही विचार कर देवी की पूजा करती थीं। [किन्तु] देवताओं ने मन में कार्य में विघ्न उत्पन्न करने का ही निश्चय किया। १२ वाणी (सरस्वती) को आज्ञा हुई कि तुम जा कर मंथरा और कैकेयी दोनो स्त्रियों के मन में प्रवेश कर विघ्न उत्पन्न करो और कार्य सिद्ध करके आओ। देवताओं के इस वचन को सुनकर वाणी तुरन्त मंथरा में प्रवेश कर गई। कैकेयी को भी भ्रमित करने के लिए (सरस्वती) पुनः कैकेयी में भी प्रवेश कर गई। १३ इस प्रकार वाणी के वशीभूत कैकेयी जहाँ थी, कहीं अवसर न निकल जाये, ऐसा सोच कर मंथरा तुरन्त वहाँ पहुँच गई। अनेक प्रकार के छल से उसे अपने वश करके सब वृत्तान्त सविस्तार कहने लगी। बोली कि दो वर हैं, जो तुम अभी मांग लो, इसी में भलाई है। १४ वाणी के वशीभूत कैकेयी कहने लगी कि मैं इन दोनों वरों को मांग लूँगी। एक से राम को चौदह वर्ष का वनवास और दूसरे से भरत को राज्य। इन दो वरों से जब कार्य सिद्ध होगा तब मैं तुम्हें सौ गाँव दूँगी। मंथरा को विदा कर घर लौटी। कैकेयी क्रोधित होने लगी। १५ उस सुन्दर वस्त्रों को त्याग कर मैले वस्त्र शरीर में धारण कर लिये। आभूषणों को भी उतार फेंका और भूमि पर लेट गई। संसार के सज्जनों का कहना

सज्जन् बेस् सुमती पनी कुमतिका सँग्ले त बिग्री गयो ।
भन्छन् जो दुनियाँ उ लक्षण यहाँ ठीक् कैकेयीमा भयो।। १६।।
कैकेयी सित बस्नलाइ खुशिले राजा गयेथ्या जसै ।
देख्यानन् र तहाँ कता गइ भनी चाकर्नि सोध्या तसै ।।
क्रोधागार-विषे भयाकि त बुझ्याँ कारण् छ कुन् कत्ति यो ।
बूझ्याको पनि छैन गै हजुरले बुझ्नू हवस् क्यान हो।। १७।।
केटीका इ वचन् सुनीकन डराइ राजा नजीक्मा गया ।
कैकेयीकन क्यान यो रित गर्‍यौ बात् खोल भन्दा भया ।।
जो भन्छचौ म पुर्‍याउँला भनि शपथ् खाँदा जसै बात् गरिन् ।
राजा वृक्ष सरी गिर्‍या पृथिविमा यस्मा बहुत् जिद् गरिन्।। १८।।
राम्लाई बनवास भरत्कन रजाइँ देऊ भनी जिद् गरी ।
दुई वर्ले यहि द्यौ दिंदौन त भन्या बाच्नू त मुर्दा सरी ।।
भोली येति कुरा भयेन त भन्या मर्न्याछु विष् खाइ म ता ।
भन्न्या येति कुरा सुनी फिरि गिर्‍या राजा जमीन्मा यता।। १९।।
त्यो रात् वर्ष समान् व्यतित् हुनगयो राजा ति मूर्छा भया ।
सब् सामग्रि तयार् गरीकन बिहान् मन्त्री हजुर्मा गया ।।

है कि उत्तम से उत्तम सुमति भी कुमति की संगति से बिगड़ जाती है । ठीक वही लक्षण कैकेयी में दृष्टिगोचर हुए । १६ राजा प्रसन्न हो कर जैसे ही रानी कैकेयी के पास पहुँचे वैसे ही कैकेयी को न देख कर उनकी उपस्थिति के विषय में सेविकाओं से पूछा । सेविकाओं ने विनती की कि वह कोपभवन में जाकर बैठी हैं । किन्तु कारण का कुछ ज्ञान नहीं है । आप स्वयं जाकर जानने की कृपा करें । १७ बालिका (सेविका) के इन बचनों को सुनकर राजा भयभीत होते हुए निकट गये । उन्होंने कैकेयी से कहा कि यह सब क्या कर रही हो ? सब बात मुझे स्पष्ट करो । विवश करने पर जब राजा ने शपथ लिया कि जो कुछ कहोगी मैं पूर्ण करूँगा, तब कैकेयी ने सब बात कह दी । उसे सुन कर राजा वृक्ष की भाँति पृथ्वी पर गिर पड़े । १८ मेरे दो वर हैं दीजिए । एक से राम को वनवास और दूसरे से भरत को राजगद्दी । और यदि नहीं देगें तो आपका जीवित रहना मृत के समान है । यदि कल तक वह नहीं हुआ तो मैं विषपान कर प्राण त्याग दूँगी । ऐसी बात सुनकर राजा पुनः पृथ्वी पर गिर पड़े । १९ राजा मूर्छित हो गये और वह रात्रि एक वर्ष के समान बीती । सब सामग्री तैयार कर प्रातः मंत्री राजा के यहाँ गए । सब

देख्या चाल् र वहाँ विचार् हुन गयो सोध्या पऱ्यो क्या भनी ।
विस्तार् पाइ सुमन्त्र राम् लिन गया आया तहाँ राम् पनि॥२०॥

राजालाइ त दुःख सुक्ख हुनको कारण् तिमी छौ भनी ।
वन्मा गै तिमि राज्य द्यौ भरतलाइ भन्दी भइन् यो पनि ॥
यस्ता बात् सुनि बात् गऱ्या प्रभुजिले सुन्छचौ कि ए कैकेयी ।
राजा खूशि रहुन् म जान्छु वनमा के काम् छ घर्मा रही॥२१॥

गाह्रो कत्ति नमानि जान्छु वनमा राजा त बोलून् भनी ।
बोल्याको प्रभुको वचन् सुनि तहाँ बोल्छन् ति राजा पनि ॥
हे राम्चन्द्र ! मलाइ आज् तिमीले बाँधेर राज्यै गरी ।
झूट्टादेखि बचाउ पाप् तिमिकनै लाग्दैन यस्तो गरी ॥२२॥

राजा येति भन्या र फेर् पनि विलाप् खुप् गर्न लाग्दा भया ।
राजाको बुझियो र आशय तहाँ राम्चन्द्र माइथ्यैं गया ॥
कौशल्या पनि भक्तिले हरिजिको ध्यान्मा रहयाकी थिइन् ।
राम्जीलाइ नदेखि कत्ति नछुटाइ ताना प्रभूमा दिइन्॥२३॥

सुमित्राले भन्दा पछि पलक माइका खुलि गयो ।
प्रभूलाई देख्ता अधिक मन सन्तोष् पनि भयो ॥
खूशीले काख्मा लीकन जब भनिन् खाउ कछु भनी ।
सुनी राम्ज्यू भन्छन् अब त कति खाँला नि म पनि ॥२४॥

स्थिति को देख कर बड़े ही असमंजस में पड़ कर उन्होंने कारण पूछा । पूरी परिस्थिति को भली प्रकार समझकर मंत्री सुमंत्र राम को लेने गये । राम भी आ गए। २० कैकेयी ने कहा, राजा को तुम्हारे यहाँ रहने से दुख हुआ है, तुम भरत को राज्य सौंप कर बन चले जाओ । इस प्रकार की बात को सुनकर प्रभु ने कहा, माता सुनो ! राजा प्रसन्न रहें । घर में रह कर करना ही क्या है । मैं वन को जाता हूँ । २१ बिना संकोच मैं वन चला जाऊँगा, महाराज आदेश दें तो । प्रभु के वचन को सुन कर राजा भी बोले, हे रामचन्द्र! मुझे आज बाँध कर [डाल दो और] राज्य करके इस असत्य से बचाओ । ऐसा करने से तुम्हें किसी प्रकार का पाप न होगा । २२ राजा इतना कहकर फिर अत्यन्त विलाप करने लगे । राजा के इस आशय को समझ कर रामचन्द्र माता के पास गये । कौशल्या भी हरि जी के ध्यान में मग्न थीं । राम को न देख कर प्रभु से अनुयोग भी किया । २३ सुमित्रा के बाद, माता (कौशल्या) के पलक खुलते ही प्रभु

गयो खान्या बेला मकन त मिल्यो राज्य वनको ।
भरत्ले राज् पाया यहिं बसि गरुन् राज्य जनको ॥
बिदा बक्स्याजावस् खुशिसित म जान्याछु वनमा ।
म चाँडै फिर्न्याछू विरह नहवस् कत्ति मनमा ॥२५॥

वचन् सुन्दा मूर्च्छा परिकन उठ्याकी छँदि तहाँ ।
भनिन् कौशल्याले अब म तिमिलाइ छोड्दछु कहाँ ॥
भन्या राजाले ता तर म तिमिलाइ रोक्तछु यहाँ ।
कि साथै लैजाऊ मकन तिमि जान्छौ अब जहाँ ॥२६॥

तिमीलाइ बिदा दी म कसरि यहाँ दुःख सहुँला ।
बरू प्राणै त्यागी यमपुरिमहाँ जाइ रहुँला ॥
विलाप् कौशल्याको यति सुनि दयाले भरिगयो ।
तहाँ लक्ष्मण्को मन् तब अरु उपर् रिस् हुन गयो ॥२७॥

नजर् दी राम्ज्यूमा अरुसित उठ्याको रिस बढाइ ।
गर्न्या बिन्ती राम्थ्यैं अब भरतथ्यैं गर्दछु लडाइँ ॥
हजुर्का राज् हर्न्या जति जति त छन् मार्छु सबलाइ ।
पितै बाँध्छू पैले भनिकन भन्या क्या छ अरुलाइ ॥२८॥

को देख कर मन को अत्यधिक सन्तोष हुआ । अति प्रसन्नता से गोद में लेकर जब कुछ खाने को कहा तो राम बोले कि अब मैं कितना खाऊँगा । २४ मेरा खाने का समय निकल गया । मुझे वन का राज्य मिला है । भरत ने राज्य पाया है और वह यहीं रह कर राज्य करें । मुझे शीघ्र विदा देने की कृपा करें । मैं वन को जाता हूँ । मैं शीघ्र ही लौटूँगा । मन में किंचित मात्र भी चिन्ता न करें । २५ ऐसा वचन सुनकर मूर्छित हुई कौशल्या पुनः सचेत हो बोली कि अब मैं तुम्हें कैसे छोड़ सकती हूँ । राजा ने तो कह दिया परन्तु मैं अब तुम्हें रोकती हूँ । तुम अब जहाँ जाओ मुझे भी अपने साथ ले चलो । २६ तुम्हें विदा कर मैं यहाँ किस प्रकार पीड़ा सहन करूँगी । मैं प्राण तज कर यमलोक में जा कर रहूँगी । कौशल्या का यह विलाप सुनकर राम के हृदय में दया उमड़ आई और लक्ष्मण के मन में अन्य लोगों पर क्रोध आया । २७ श्रीराम की ओर एक नजर देख अन्य लोगों पर उत्पन्न क्रोध से उग्र हो कर राम से लक्ष्मण ने विनती की कि अब मैं भरत के साथ युद्ध करूँगा और श्रीमान् के राज्य को हरण करने वाले जो भी हैं सब का वध करूँगा । पिता का ही सर्वप्रथम वध करूँगा । औरों का तो कहना ही क्या । २८ चाहे

चढ्याजावस् गादी सकल रिपुको नाश् म गरुँला ।
यसै काम्ले माइका सकल मनको शोक हरुँला ।।
सुन्या लक्ष्मण्जीका यि वचन जसै राम् खुशि भया ।
बुझाया विस्तार्ले पनि तहिं ठुलो लीकन दया ।।२९।।

सुन्यौ भाइ ! संसार्मा शरिर अति कच्चा छ जनको ।
शरीर् कच्चा जानी नगर तिमि रिस् कत्ति मनको ।।
सबै भोग् चञ्चल् छन् बिजुलिसरि एक् छिन् नरहन्या ।
विचार् यस्तो राखी सहु तिमि बडो हुन्छ सहन्या ।।३०।।

भ्यागु तोखाँ भनि खोज्छ डाँस्मुखविषे साँप्ले धन्याको पनि ।
तेस्तै भोग् गरुँला भनेर मनले भन्छन् दुनीयाँ पनि ।।
क्याको रस् छ यहाँ विचार मनले काल्सर्पको मुख् परी ।
क्या होला वन जाउँला इ सबलाइ आनन्द राख्नन् हरि।।३१।।

देश्देश्का बाटुलिन्छन् बुझ तिमि मनले बाटका पाटिमाहाँ ।
बात्चित् गर्दै रहन्छन् खुशिसित मनले बन्धुझैं राति ताहाँ ।।
प्रातःकाल्भो जसै ता उठिकन ति सबै दश्दिशा लागिजान्छन् ।
बन्धूको संग यस्तो बुझिकन गुणिले दुःखसुख् एक मान्छन् ।।३२।।

गद्दी पर बैठ भी जायें, तो भी मैं समस्त शत्रुओं का नाश करूँगा। इन कार्यों से माता के मन के सम्पूर्ण शोक का हरण करूँगा। लक्ष्मण के इन वचनों को सुनकर रामचन्द्र जी प्रसन्न हुए और महान् कृपा कर उन्हें भली प्रकार समझाया। २९ सुनो भाई ! संसार में मानव-शरीर अत्यन्त क्षणभंगुर है। शरीर को ऐसा समझ कर तुम मन में किंचित्मात्र भी क्रोध न करो। सभी भोग्य वस्तुएँ क्षणभंगुर हैं। इन बातों का विचार कर तुम कष्ट सहन करो। सहनशील (व्यक्ति) ही महान् होता है। ३० मेढक सर्प के मुँह को विषपान करने हेतु खोजता है। उसी प्रकार संसार में भी भोग करने को मन कहता है। मन से यह विचार करो कि काल रूपी सर्प के मुँह में किस प्रकार का रस है। वन जाने से हमारी क्या हानि हो जायेगी। भगवान् सब को आनन्द-मंगल से रक्खें। ३१ तुम अपने मन से विचार कर देखो कि लोग देश-विदेश घूमते हैं। वहाँ मार्ग में विश्राम-गृह में मित्रों की भाँति प्रसन्न हो कर परस्पर वार्तालाप करते रहते हैं और प्रातः होते ही सब अपनी-अपनी दिशाओं की ओर चले जाते हैं। ३२ ऐसे मित्रों की संगति के गुणों को समझ कर गुणी

छाया तुल्य छ लक्ष्मि, यौवन भन्या भेलै सरीको भनी ।
भन्छन् स्त्रीसुखलाइ स्वप्न सरिको साँचो कुरा हो भनी ॥
यस्तै जानि पनी मनुष्यहरु सब् संसारमा भुल्दछन् ।
भुल्नैका वशले अनेक् फजितिले संसारि भै डुल्दछन्॥३३॥

जुन् यस् देह निमित्त यो रिस गऱ्यौ चिन्छौ कि कस्तो छ यो ।
हाड् मासू र रगत् नसा यति कुरा जम्मा भई बन्छ यो ॥
विष्ठा हुन्छ कि भस्म हुन्छ पछितक् बाँच्तैन यो ता कसै ।
यस्का खातिर घात् गऱ्यौ पनि भन्या पाप् मात्र लाग्ला उसै॥३४॥

क्रोधै हो यमराज सर्व जनको वैतर्नि भन्नू पनि ।
तृष्णा हो भनि यो बुझेर तिमिले कैले नबिर्स्या पनि ॥
सन्तोष्लाइ बुझि कामधेनु सरिको सन्तोष मन्ले रहू ।
रिस गर्नू बढिया त छैन मनमा जानू असल् हो सहू॥३५॥

यस्तै हो सुन कर्मका वश हुँदा बस्तैन एक् ठाम् रही ।
कस्तै कोहि हवस् अवश्य करले जानू छ जाहाँ गई ॥
कर्मैको फल भोग गर्छ दुनियाँ यै चित्तमा लेउ भाइ ।
आमैले यहि बात् बुझीकन बिदा दीनूहवस् हामिलाइ॥३६॥

जन दुख और सुख को एक समान ही मानते हैं। धन को छाया तुल्य, यौवन को धूल के समान तथा स्त्री-सुख को स्वप्न की भाँति मानते हैं। और इस यथार्थता को मानते हुए, ऐसा जान बूझ कर भी, मनुष्य संसार में भूला रहता है और इसी कारण अनेक आपदाओं सहित संसार में भ्रमण करता रहता है। ३३ जिस शरीर के लिए इतना क्रोध किया उसे पहचानते हो ? हड्डी, रक्त, मांस और नसें यही सब मिलकर यह शरीर बनता है जो एक दिन नष्ट हो कर भस्म हो जाता है। अनन्त काल तक यह किसी प्रकार जीवित नहीं रह सकता। ऐसे शरीर के लिए किंचित् मात्र भी छल किया तो पाप के भागी होंगे। ३४ क्रोध समस्त मानव-जाति के लिए यमराज सदृश है। तृष्णा वैतरणी है इसे भी न भूलना, और सदा सन्तोषरूपी कामधेनु का सहारा लेकर रहना। क्रोध करना अच्छा नहीं, वरन् बन जाना ही उचित है; इसे सहन करो। ३५ ऐसा ही है, सो सुनो ! कर्मरत प्राणी को एक स्थान पर रहने को नहीं मिलता। किसी न किसी कार्यवश उसे एक स्थान से दूसरे स्थान को जाना ही पड़ता है जहाँ जाकर वह अपने किये कार्यों के फल का भोग करता है। यही बात चित्त में धारण करके हे भाई तथा

यो बिन्ती गरि पाउमा जब पऱ्या	बीदा दिइन् मन् बुझाइ ।
आँसू थाम्न कठिन् भयो र बहुतै	रोइन् शरीरै रुझाइ ॥
आशीर्वाद वचन् समेत् मिलि गयो	ताहाँ बिदा रामलाइ ।
लक्ष्मण्ले पनि साथ जान्छु म भनी	बिन्ती गऱ्या जानलाइ॥३७॥
लक्ष्मण्लाइ हिंडलौ भन्या र रघुनाथ्	सीता भयामा गया ।
सीतालाइ तिमि ता घरै बस भनी	पैले त भन्दा भया ॥
पङ्खा छत्र चमर् रहित् प्रभुकनै	देख्ता त शङ्कित् भइन् ।
क्या कारण् हुनगो भनीकन सिता	हात्जोरि साम्ने भइन्॥३८॥
शङ्कित् जानकिलाइ देखि प्रभुले	तीमी घरैमा यहाँ ।
सासूको टहलै गरीकन रहू	वर्षै त चौधैमहाँ ॥
पीताको वचनै लिई शिर-उपर्	जान्छू म वन्मा प्रिये ।
चौधै वर्ष बिताइ जल्दि म यहाँ	फिर्न्याछु निश्चै श्रिये॥३९॥
यस्ता बात् प्रभुका सुनीकन तहाँ	सीताजि मूर्छा परिन् ।
पैले ज्योतिषिको कुरा सब कही	छोड्दीनँ सेवा भनिन् ॥
सीताका यति बात् सुन्या र खुशिभै	साथै सिताजी लिया ।
ब्राह्मण् खूशि सदा रहून् भनि तहाँ	दौलत् बहूतै दिया ॥४०॥

माता, आपलोग मुझे बिदा देने की कृपा करें। ३६ ऐसी विनती करके जब राम चरणों में झुके तो उन्होंने अपने मन को समझा कर बिदा दी और रो-रोकर अपने शरीर को ही भिगो लिया। राम को आशीर्वाद के वचनों के साथ बिदा मिली और लक्ष्मण ने भी साथ जाने की विनती की। ३७ लक्ष्मण को चलने की अनुमति दे कर राम सीता के पास गये। पहुँचते ही सीता जी को घर में रहने की आज्ञा दी। पंखा, छतरी तथा चँवर आदि से सुसज्जित प्रभु को देखकर वे सशंकित हुईं। वे करबद्ध होकर, उनकी इस वेशभूषा का कारण जानने के लिए सामने आईं। ३८ सशंकित जानकी को देखकर प्रभु ने कहा कि चौदह वर्ष तक तुम घर पर रह कर अपनी सासों की सेवा टहल करती रहना। हे प्रिये! मैं पिता जी की आज्ञा शिरोधार्य करके, वन को जाता हूँ। चौदह वर्ष व्यतीत कर मैं निश्चय ही शीघ्र लौटूँगा। ३९ प्रभु की ये बातें सुनकर सीता जी मूर्छित हो गयीं। पहले ज्योतिषी की सब बातें कहीं, तत्पश्चात् विनती की कि आप की सेवा नहीं छोड़ूँगी। सीता जी की यह बात सुनकर राम ने प्रसन्न हो उन्हें साथ ले लिया। फिर ब्राह्मणों को सदा ख़ुश रखने के लिए धन-सम्पत्ति का वितरण किया। ४० माता

कौसल्याजि जहाँ थिइन् तहिँ गई लक्ष्मण्जिले बिन्तिलाइ ।
माता मेरि पिछा भइन् भनि तहाँ सुम्प्या सुमित्राजिलाइ ॥
येती काम् गरि रामका हुकुमले लक्ष्मण् तयारी भया ।
सीता लक्ष्मण साथमा लि रघुनाथ् राजा भयामा गया ॥४१॥

बीदा हून पिताजिथ्यैं जब सिता लक्ष्मण् लि राम्ज्यू गया ।
यस्तो देखि असह्य भो र दुनियाँ सब शोक गर्दा भया ॥
सीता राम्कन दुःख यो हुन गयो कैकेयि दुष्टै भई ।
सीता आज कसोरि दुःख सहनिन् घोर् जङ्गलैमा गई ॥४२॥

यो अन्याय भयो यहाँ त नबसौं जाऔं प्रभूका सँगै ।
राम्लाइ छोडि यहाँ कसोगरि बसौं बूझेन मन् ता नगै ॥
यस्ता बात् गरि लोकले त बहुतै शोक् गर्न लाग्या भनी ।
सब् विस्तार् गरि वामदेव ऋषिले सब्लाइ बुझाया पनि॥४३॥

हेलोक्हो ! अतिगर्दछौतिमितशोक् यो शोक ता छाडिद्यौ ।
साक्षात् विष्णु इ हुन् भनेर मनले श्रीरामलाइ जानिल्यौ ॥
पृथ्वीको सब भार् हरेर रघुनाथ् फिर्छन् इ जान्छन् कहाँ ।
साँचा हुन् इ कुरा अवश्य तिमिले खेद् कीन मान्यौ यहाँ॥४४॥

को पीछे लगते देख लक्ष्मण ने कौशल्या के पास जाकर विनती की और सुमित्रा माता को उन्हें सौंप दिया। इतना कार्य कर राम की अनुमति पाकर लक्ष्मण तैयार हो गये। सीता और लक्ष्मण को साथ लेकर रघुनाथ पिता के पास गये। ४१ राम को सीता और लक्ष्मण सहित बिदा लेने के लिए पिता के पास जाते देख असहाय हो समस्त प्रजा शोकाकुल हुई। दुष्ट कैकेयी के कारण सीता तथा राम को कष्ट सहन करना पड़ा है। सीता आज किस प्रकार घोर जंगल में जाकर दुख सहन करेंगी। ४२ यह अन्याय हुआ है। यहाँ न रहें, प्रभु के संग ही चलें। राम को छोड़ कर यहाँ किस प्रकार रहेंगे। बिना गये मन नहीं मानता। ऐसी बातें कर प्रजाजन अत्यन्त शोक करने लगे। तब वामदेव ऋषि ने सविस्तार वर्णन कर सबको समझाया। ४३ हे प्रजाजन! तुम लोग अपने इस अत्यधिक शोक का त्याग करो। श्रीराम को मन में साक्षात् विष्णु का अवतार समझो। पृथ्वी के सब भारों का निवारण करने के बाद रघुनाथ लौट आयेंगे। ये जायेंगे कहाँ? ये सब बातें सत्य हैं। तुम व्यर्थ ही यहाँ पर क्यों शोक प्रकट करते हो। ४४ इन बातों से ऋषि ने सभी जनों के मन को अत्यन्त सन्तोष प्रदान किया।

करुख शांदी अराबन गयि सवारा ।
रथन हसितेंन प्यठुय वोयुख नक़ारा ॥
तयारी करुख सारिय द्रायि शादां ।
तिमन मंज़ रामुजुव ज़न सिरियि ताबां ॥ ५ ॥

तबलु वोयुक सपुन यंत्र शांदियाना ।
ज़नख राज़ुन गरु सांपुन्य रवाना ॥
समिथ तिम आसतु आसतु द्रायि खोंशदिल ।
पकुनि लंग्य रसु रसु मंज़िल ब मंज़िल ॥
स्यठाह शांदी करान मंज़िल करिख तय ।
बशांदी राज़ुह ज़नुखुन गरु गंछिथ प्यय ॥
दपान तंम्य राज़ु ज़नखन फरशि मख़मल ।
वथुरमुत लोलुबाग़स ही तु मसवल ॥
वुछिथ सामानु आशचरकार सांपुन ।
वुछिथ तिम राज़ु लूख यंत्र शाद सांपुन ॥ १० ॥

तिमन वुछ्य वुछ्य स्यठाह गव शाद राज़ु ।
वुछिथ महाराज़ु यंत्र गव राज़ु ताज़ु ॥
करुख शांदी मुनांदी द्रायि बाज़ार ।
समिथ यिन राज़ु ज़नखुन गरु लाचार ॥

सभी तैयार होकर ख़ुशी-ख़ुशी निकल पड़े। उनके बीच में श्रीरामचन्द्र जी मानो सूर्य के समान चमक रहे थे ॥ ५ ॥ तबला (ढोल) बजाया गया और राजा जनक के घर की ओर (सभी) शादमानी के साथ रवाना हो गये। सभी इक्ट्ठे होकर आहिस्ता-आहिस्ता ख़ुश-दिल होकर चल पड़े। वे धीरे-धीरे मंज़िल-ब-मंज़िल चलने लगे। ख़ूब प्रसन्नता के साथ उन्होंने मंज़िल को तय कर लिया और ख़ुशी के साथ (आख़िरकार) राजा जनक के घर पर पहुँच गये। (इधर) राजा जनक ने (बरातियों के स्वागत के लिए अपने प्रेम-उद्यान के मख़मली फ़र्श को चंपा व मसवल के पुष्पों से सजा रखा था मूल्यवान् सामान को देख वे (राजा जनक) आश्चर्य करने लगे तथा बारात में ऐसे-ऐसे (राजा लोगों) महापुरुषों को देखकर वे शाद हो गये ॥ १० ॥ उन (बरातियों) को देख-देखकर राजा बहुत प्रसन्न हुए और आशातीत रूप से ताज़ा हो गये। (सभी ने) ख़ुशियाँ मनाईं और नगर (के बाज़ारों) में यह मुनादी कराई गई कि जो लाचार (निर्धन, दरिद्र) हों वे सभी मिलकर राजा जनक के घर

द्युतुक दरमस खज़ानु राज तु ताज ।
बिला शक वाति यौत युस आसि मौहताज ।।
स्यठाह गव नगर खौंश शांदी तिमव दीठ ।
कंरिथ यंत्र दरम दान लंगनस प्यठन बीठ्य ।। १४ ।।

लंगनुक ग्यवुन

शेरस लागय पोश लवु हंतिये ।
संतिये वोतुये व्यवाह काल ।।
शोक्लम कंरिथ ओम शब्दु सांतिये ।
वीदु शास्त्रु द्रायि रुत्य रुत्य गौंन ।।
वौलुबा वंरुनख महागनुपंतिये ।
संतिये वोतुये व्यवाह काल ।। १ ।।
व्यज़या सुत्य छय बेयि सरस्वतिये ।
वनु वुनु मंज़ु शौंब वासना द्राये ।।
शिवुनाथ वरुने आव पारुवंतिये ।
संतिये वोतुये व्यवाह काल ।। २ ।।
जमुना शारुदा छय सुत्य सुतिये ।
नमु ना पादन गण्डु हांय सौंन ।।

पर आजायें, उनके लिए ख़ज़ाने का सारा धन, राज और ताज लुटाया जायेगा। कोई मुहताज (निःसहाय) हो तो वह बिलाशक (निश्चित होकर) यहाँ पहुँच जाय। नगर बहुत ही ख़ुश हो गया और नगरवासी शादमानी करने लगे। (इस प्रकार) पर्याप्त दान-धर्म करके वे लग्न करने को बैठे ।। १४ ।।

लग्न का गीत

तेरे सिर पर ओस-सिक्त (ताज़े) पुष्प लगाऊँ, री सीता! तेरा विवाह काल आ गया। शुक्लम् (शुभ योग) में ओम् शब्द के साथ वेद एवं शास्त्रों की मंगल-वाणी प्रस्फुटित हो रही है। वल्लभा का वरण करने महागणपत आगये हैं—री सीता! तेरा विवाह-काल आ गया। १ (देवी) विजया के साथ सरस्वती भी है। मंगलगीतों से शुभवासना (शुभेच्छा) फूट रही है। शिवनाथ पार्वती को वरण करने आये हैं—री सीता! तेरा विवाह-काल आ गया। २ जमुना और शारदा (भी)

बूतीश्वर वरुनि आव रांगिन्यायि येंतिये ।
संतिये वोतुये व्यवाह् काल ।। ३ ।।

ह्यंगला मंगला बंदरुकल आंये ।
ब्रह्मा करान ओस दारु पूज़ा ।।
दारस अरुगु पोश लांग्य हंगि सांती ।
संतिये वोतुये व्यवाह् काल ।। ४ ।।

ज़ाला लम्बोदर बेंयि गणुपंतिये ।
कंरिह्य पोंपरु कोंङ्ग पोशि ड्री ।।
बालुह्यामि बालिकायि वनुवुन ह्योंतये ।
संतिये वोतुये व्यवाह् काल ।। ५ ।।

अंकिनगामि शिवायि वनुवुन ह्योंतये ।
वोंत्रसि वोंमायि कंरनय जाय ।।
लोलु चानि ज़नु खुनि गरि छी येंतिये ।
संतिये वोतुये व्यवाह् काल ।। ६ ।।

सोंम्बरिथ दीवी दीवता येंतिये ।
ब्रह्मा तु ब्रह्मन वीद परान ।।
लंगुनस वंछुखय रामस सांतिये ।
संतिये वोतुये व्यवाह् काल ।। ७ ।।

साथ-साथ हैं। तेरे चरणों में झुककर वे सोना बाँध रही हैं। भूतेश्वर राज्ञी को वरण करने आये हैं—री सीता ! तेरा विवाह-काल आ गया। ३ हिंगुला, मंगला और भद्रकाली (भी) आ गई हैं। ब्रह्मा (स्वयं) द्वार-पूजा कर रहे हैं। द्वार पर अर्घ्य व पुष्प उन्होंने सश्रद्धा लगाये—री सीता ! तेरा विवाह-काल आ गया। ४ ज्वाला, लम्बोदर और गणपत ने पाँपोर गाँव में तेरे लिए केसर (कुमकुम) की बाटिका लगाई। बालुहाम गाँव की बालिका (देवी) ने भी मंगलगान शुरू किया—री सीता तेरा विवाह-काल आ गया। ५ अकिनगाम गाँव की शिवा भी मंगलगान करने लगी। उत्रस गाँव की उमा ने अपने दिल में तुझे बिठाया। ये सभी देवियाँ तेरे प्रेम में यहाँ जनक के घर विराज रही हैं—री सीता ! तेरा विवाह-काल आ गया। ६ सभी देवी-देवता यहाँ इक्ट्ठे हुए हैं और ब्रह्मा व अन्य ब्राह्मण वेद-पाठ कर रहे हैं। सभी ने लग्न-मण्डप पर सीता को राम के साथ देखा—री सीता !

त्रिसन्द लोंदरुसंद पवनु सातिये ।
अज्ञान त्राविथ ब्योंन ब्योंन नाव ।।
वशस्ट महार्‌योश छुय सनिदान येंतिये ।
संतिये वोतुये व्यवाह काल ।। ८ ।।

छु राज़ु वुछान ब्रोंठु तय पतिये ।
रोपुबवानि रंट वासुकुरि जाय ।।
अंगनस कुन च्रु अथु दार येंतिये ।
संतिये वोतुये व्यवाह काल ।। ९ ।।

ब्रह्मा वीद परान ब्रोंठ तु पतिये ।
सन्ज़ करनि आयी बंदरुकाली ।।
रामुजुव वरुनि आव सीतायि येंतिये ।
संतिये वोतुये व्यवाह काल ।। १० ।।

क्रुश्नु जुवन अवतार दोरुन येंतिये ।
रादायि वरुने मन्ज़ द्वारिका ।।
नन्दु गोर्‌युन गरु आमुत छु येंतिये ।
संतिये वोतुये व्यवाह काल ।। ११ ।।

राज़ु सोन बोज़ वरन त्रिपुरसुन्दरिये ।
शीतला तु तोतला रख्या कार ।।

तेरा विवाह-काल आ गया । ७ त्रिसन्ध्या (भी) लोंदरु-सन्ध्या और पवनु-सन्ध्या के साथ आ गई हैं । अज्ञान को त्याग कर उनके (पृथक्-पृथक्) स्वरूप को पहचाना जा सकता है । महर्षि वशिष्ठ भी यहाँ पर सुशोभित हो रहे हैं । री सीता ! तेरा विवाह-काल आ गया । ८ राजा (कभी) आगे और (कभी) पीछे देख रहे हैं । वासुकुर गाँव की रूपभवानी ने भी अपना स्थान ग्रहण कर लिया । अग्नि के प्रति तेरे हाथ हैं--री सीता ! तेरा विवाह-काल आ गया । ९ ब्रह्मा (तेरे) आगे-पीछे वेद-पाठ कर रहे हैं । भद्रकाली तुझे (साज-सँवार कर) तैयार करने के लिए आ गई हैं । रामचन्द्र सीता का वरण करने के लिए आ गये हैं—री सीता ! तेरा विवाह-काल आ गया । १० कृष्णजी ने (जैसे) यहाँ अवतार धारण कर लिया है और द्वारिका में राधा को वरण करने के लिए आ गये हैं । वे (जैसे) नन्द-ग्वाल के घर यहाँ आ गये हों--री सीता ! तेरा विवाह-काल आ गया । ११

लंखिमन जुव वरुनि आव पद्मावंतिये।
संतिये वोतुये व्यवाह काल॥ १२॥

वेंश्वामेंत्रन म्युल कंरिथ द्युतुये।
राज़ु दशरथ गरुहय आव॥
बरथ राज़ु वरने आव बगवंतिये।
संतिये वोतुये व्यवाह काल॥ १३॥

दशरथ तति कोंलुबरदार दारी।
सन्ज़ तय सामानु छुय करान॥
शतुरगुण वरुनि आव पद्मावंतिये।
संतिये वोतुये व्यवाह काल॥ १४॥

त्रिकूटी दीवता सुत्य सुत्य संतिये।
लांनिस चांनिस जय जय कार॥
त्रिकारण त्रिभुवन सुत्य सुत्य येंतिये।
संतिये वोतुये व्यवाह काल॥ १५॥

दीवी छय करान पोशन फोंतिये।
राज़ु कोंमारि करु पोशि पूज़ा॥
शेरस पोश लागय वोंज़िल्य नील्य छेंतिये।
संतिये वोतुये व्यवार काल॥ १६॥

सुनो, हमारा राजा त्रिपुरसुन्दरी को वरण कर रहा है। देवी शीतला और तोतला रक्षा करने आई हैं। लक्ष्मण जी पद्मावती को वरण करने के लिए आ गये हैं—री सीता! तेरा विवाहकाल आ गया। १२ विश्वामित्र ने यह संयोग कराया और राजा दशरथ फूले नहीं समा रहे हैं। भरत (भी) पद्मावती को वरण करने के लिए आ गये हैं——री सीता! तेरा विवाह-काल आ गया। १३ दशरथ (सूर्य) वंश के मुखिया का दायित्व निभा रहे हैं तथा सभी तरह के प्रबंध कर रहे हैं। शत्रुघ्न (भी) पद्मावती को वरण करने के लिए आ गये हैं—री सीता! तेरा विवाह-काल आ गया। १४ तीनों लोकों के देवता (तैंतीस करोड़ देवता) साथ-साथ हैं। तेरे भाग्य को जय-जयकार हो। त्रिकारण एवं त्रिभुवन (के स्वामी) भी यहाँ पर हैं—री सीता! तेरा विवाह-काल आ गया। १५ देवी पुष्पों के अम्बार बना रही है ताकि (हमारी) राजकुमारी की पुष्पों से पूजा की जाय। तेरे शीर्ष पर वह लाल, नीले

दीवता अंद्य अंद्य वुछान छी लंतिये ।
लायि बांये गंगु व्यसु मंगु नावेंख ।।
लायि बांये लायि छख दिञ ब्रोंठु पंतिये ।
संतिये वोतुये व्यवाह् काल ।। १७ ।।

लंख्यमी तु हारी आयि परुबंतिये ।
अष्टादश बोंज़ साल करान ।।
ञंकरीशोंर वरुने आव बगुवंतिये ।
संतिये वोतुये व्यवाह् काल ।। १८ ।।

दखिनायि येंलि वेलु वोतुय संतिये ।
वसिष्ट महार्‌यौश थाल ह्यथ द्राव ।।
पखिदार ब्रह्मनव नियि मोंहरु फोंतिये ।
संतिये वोतुये व्यवाह् काल ।। १९ ।।

मंज़िमयोर मोंहरु मंगनि आवुय तंतिये।
दखिना दिनु विज़ि कोंरुख याद ।।
नन्दगूर दोंद ह्यथ आसय योंतुये ।
संतिये वोतुये व्यवाह् काल ।। २० ।।

व सफ़ेद पुष्प लगा रही है—री सीता ! तेरा विवाह-काल आ गया । १६ आस-पास बैठे सभी देवता (सब कुछ ध्यान से) देख रहे हैं । 'लायबोय'† और 'गंगव्यस'† को बुलाया गया । लायबोय ने आगे-पीछे खीलों की वर्षा की——री सीता ! तेरा विवाह-काल आ गया । १७ (देवी) लक्ष्मी और 'हारी' (शारिका) पर्वत से आ गईं । अष्टादशभुज भोज का आयोजन कर रही हैं । चक्रेश्वर भगवती को वरण करने के लिए आ गये हैं——री सीता ! तेरा विवाह-काल आ गया । १८ जब दक्षिणा देने की वेला आई तो (कुल-ब्राह्मण) महर्षि वशिष्ठ थाली लेकर निकले (तथा अन्य) पक्ष के ब्राह्मणों को मोहरों की टोकरियाँ मिलीं——री सीता ! तेरा विवाह-काल आ गया । १९ दक्षिणा देने के समय मध्यस्थ को याद किया गया और वह मोहरों को माँगने स्वयं वहाँ (लग्न-मण्डप) पर पहुँचा । (विवाह में दूध की व्यवस्था करने के लिए) नन्द-ग्वाल स्वयं दूध लेकर वहाँ आये हैं——री सीता ! तेरा विवाह-काल आ गया । २० आपके प्रकाश से अन्धकार दूर हो गया । हे राम ! अब

† लग्न का एक विशिष्ट कृत्य । कन्यापक्ष के बालक और बालिका इसे सम्पन्न करते हैं । इन्हें क्रमशः लायबोय और गंगव्यस कहते हैं ।

प्रकाशि चाने गटु गंज्य येतिये ।
श्रीरामु असि वौन्य दर्शुन हाव ॥
अन्दुकार वौन्दु निशि कास बगुवंतिये ।
संतिये वोतुये व्यवाह काल ॥ २१ ॥

व्यवाह (लंगुन)

वेशवामेत्रन लंगुन वोन राजु ज़नखस ।
अनिख सीता तु पुशरुख रामुचन्दुरस ॥
रंनिख बूज़न अंनिख सारिय कबीलु ।
कौरुख व्यवाह तिमन रूदुक नु हीलु ॥
ज़नख राज़स पनुन्य अख आस कौमारी ।
सौ पुशरुन लंखिमनस खौश गास सारी ॥
ज़ु आसस बावुज़ु पुशरेन तिमन दौन ।
बरुथ बेयि ओस मालिस सुत्य शतुरगोण ॥
करुख तीजी तु खौश सांपुन सु दशरथ ।
कोरुन खान्दर तु गरु गव च्रोर नौशि ह्यथ ॥ ५ ॥

करुख शादी अराबन गंयि सवारा ।
ज़नख राज़ुनि गरि सांपुन्य रवाना ॥

आप हमें दर्शन दीजिए। हमारे दिल से, हे भगवती, आप अन्धकार मिटा दीजिए––री सीता ! तेरा विवाह-काल आ गया । २१

विवाह (लग्न)

विश्वामित्र ने राजा जनक को लग्न बताया और सीता को लाकर श्रीरामचन्द्र को सौंपा गया। अच्छे-अच्छे भोजन पकाये गये तथा सारे क़बीले वालों को बुलाया गया। विवाह (सानन्द) सम्पन्न हुआ तथा किसी को कोई शिकायत नहीं रही। राजा जनक की एक अपनी कुमारी (कन्या) थी जिसे उन्होंने लक्ष्मण को सौंपा तथा सभी ख़ुश हो गये। उनकी दो भतीजियाँ भी थीं जिन्हें उन्होंने पिता के साथ आये हुए भरत और शत्रुघ्न को सौंपा। सभी ने (लौटने ने लिए) जल्दी की तथा राजा दशरथ ख़ुश हो गये। विवाह के सम्पन्न हो जाने पर वे (राजा दशरथ) चार वधुओं को लेकर घर (अयोध्या) की ओर चल पड़े ॥ ५ ॥
ख़ुशियाँ मनाते हुए सभी रथों पर सवार हो गये तथा जनक के घर से

सु दशरथ लीन गव पनुनिस ह्रस कुन ।
पकन गव लोलु सुत्य पनुनिस गरस कुन ॥
गर्म बाज़ार सांपुन दरम का राज ।
मनुष्य गंयि खोंश कांह् छुनु कांसि मुहताज ॥
पकान गव वोत येंलि तोंत बारगोराम ।
कमान फुटरुन दोंपुन तस कर च़ु आराम ॥
दोंपुन तस गछ च़ु पानस बेंह खंटित रोज़ ।
नयाबत वांत्र वोंन्य असि निश पोंज़ुय बोज़ ॥ १० ॥

पकन सोंन रोंफ छकन गरुड़ा सवारी ।
संमिथ त्रियि आयि लजि तस पांर्य पांरी ॥
तसुन्द दरशुन वुछित तिमु पान गालन ।
ज़ु आलंत्र करन मोंक्त रूद वालन ॥
यिवान दरशुन वुछिनि सांरी गंडिथ गुल्य ।
करान आलंत्र जिगर गोशस वन्दन दिल ॥
वननि लंग्य शक्ति बोंड दय व्याद कांसिन ।
नंविस राज़स मुबारकबाद आंसिन ॥

रवाना हो गये । राजा दशरथ अपने ह्र (भगवान्) के ध्यान में लीन हो गये तथा प्रेमपूर्वक अपने घर की ओर प्रस्थान किया । दान-धर्म के प्रभाव से सभी बाज़ार (रास्ते) गर्म हो उठे (रास्ते-भर राजा ने खूब दान-पुण्य किया) । सारे मनुष्य ख़ुश हो गये—कोई किसी का मुहताज न रहा (व्यापक दान के कारण कोई निर्धन नहीं रहा) । चलते-चलते उन्हें रास्ते में भार्गव राम (परशुराम) मिले । (दशरथ ने उनसे कहा,) आपकी कमान तोड़ दी जा चुकी है, आप आराम करें तथा कहीं बैठकर गुप्तवास करें । (इस बहाने से) हमारे पास एक दुर्लभ वस्तु (सीता) आ गई है—यह आप सच मानिए ॥ १० ॥ इस प्रकार (विपुल मात्रा में) सोने-चाँदी की दान-पुण्य में वर्षा करते हुए तथा गरुड़ पर सवार होकर वे (श्रीरामचन्द्र जी सीता सहित) आगे चलते गये । (अयोध्या में सीता-राम के आगमन की सूचना पाकर) नगर की सभी स्त्रियाँ इक्ट्ठी हुईं तथा उन पर बलिहारी हुईं । उसका (सीता का) दर्शन पाकर वे उस पर मर मिटीं । सभी ने दो बार आरती उतारी तथा मोतियों की वर्षा करने लगीं । दूसरे अनेक नर-नारी हाथ जोड़कर दर्शन करने हेतु आते गये तथा जिगर के टुकड़े (श्रीराम) की आरती उतारकर वंदना करने

श्री गुरुग्रन्थ साहिब

(देवनागरी लिपि में)

हिन्दी व्याख्या सहित

श्री जपुजी

मंगलाचरण

मंत्र

१ ओंकार सतिनामु करता पुरखु निरभउ निरवैरु
अकालमूरति अजूनी सैभं गुर प्रसादि ॥

[सिख (शिष्य) सम्प्रदाय के अग्रणी युगप्रवर्तक साहिब श्रीगुरू नानकदेव जी महाराज ने जपुजी साहिब की रचना की है; समस्त सिख एवं इस सम्प्रदाय में आस्था रखनेवाले जन प्रातःकाल इसकी अराधना करते हैं। आदि गुरू ग्रन्थ साहिब की रचना में इस वाणी को सर्वप्रथम स्थान दिया गया है। "ईश्वर एक है"—इसी मूलभूत सिद्धान्त को लेकर जपुजी साहिब का शुभारम्भ होता है]

सर्वसाधारण का रचयिता और प्रतिपालक—वह प्रभू १ ओंकार सत्य-स्वरूप है; भय-वैर, जीवन-मृत्यु, आवागमन से रहित, स्वयं प्रकाशमान है; और ऐसे ईश्वर का मिलना केवल गुरू की कृपा से ही हो सकता है।

जपु

आदि सचु जुगादि सचु ।
है भी सचु नानक होसी भी सचु ॥

हे प्राणीमात्र ! उसी की अराधना करो जो सृष्टि से भी पहले से, आदि काल से सत्यस्वरूप है, आज भी है, और अनन्तकाल तक सत्यस्वरूप ही रहेगा।

पौड़ी १

सोचै सोचि न होवई जे सोची लखवार ।
चुपै चुपि न होवई जे लाइ रहा लिवतार ।।
भुखिआ भुख न उतरी जे बना पुरीआ भार ।
सहस सिआणपा लख होहि त इक न चलै नालि ।।
किव सचिआरा होईऐ किव कूड़ै तुटै पालि ।
हुकमि रजाई चलणा नानक लिखिआ नालि ।। १

उस प्रभू के बारे में यदि लाखों बार सोचा जाय तो भी उसकी पूर्णता को अनुमानित नहीं किया जा सकता और न उसके बारे में चुप्पी धारने से ही काम चल सकता है; क्योंकि जैसे प्रतिदिन भोजन करने के पश्चात् भी क्षुधा की तृप्ति नहीं होती, वैसे ही अहर्निश उसकी अराधना करने से भी मन नहीं भरता। सारी दुनिया अपने साथ बाँध लें, अनेकानेक-चतुराइयाँ करें, फिर भी कोई साथ नहीं जाती। अस्तु, यह जीव किस प्रयत्न से सच्चा, भ्रम से मुक्त एवं ज्ञानवान् बना रह सकता है, इसका एक ही उपाय है कि वह ईश्वर की आज्ञा में रहे—उसे सत्य कर माने, प्रारब्ध पर विश्वास रखे; तभी उसका कल्याण संभव है। १

पौड़ी २

हुकमी होवनि आकार हुकमु न कहिआ जाई ।
हुकमी होवनि जीअ हुकमि मिलै वडिआई ।।
हुकमी उत्तमु नीचु हुकमि लिखि दुख सुख पाईअहि ।
इकना हुकमी बखसीस इकि हुकमी सदा भवाईअहि ।।
हुकमै अंदरि सभु को बाहरि हुकम न कोय ।
नानक हुकमै जे बुझै त हउमै कहै न कोय ।। २

ईश्वरीय आज्ञा से ही समस्त रूप-स्वरूप बनते-बिगड़ते हैं, परन्तु उसका वर्णन अकथनीय है। उसके कथन से ही जीव संसार में आते, बड़प्पन प्राप्त करते, और ऊँचे-नीचे स्थान तथा सुख-दुख की प्राप्ति करते हैं। ईश्वरीय आज्ञा से ही प्रारब्धानुसार उत्तम पुरुष को आत्मपद की प्राप्ति-रूप लाभ, एवं नीच पुरुष आवागमन के चक्करों में भटकते रहते हैं—सभी जीव उसकी आज्ञा के अन्दर हैं—कोई भी उसकी आज्ञा का उल्लंघन नहीं कर सकता। और जब इसका बोध हो जावे कि समस्त कार्य उसी की आज्ञा में हो रहे हैं, तो अहं (तेरा-मेरा के भेदभाव) का नाश हो जाता है। २

पौड़ी ३

गावै को ताणु होवै किसै ताणु, गावै को दाति जाणै नीसाणु ।
गावै को गुण वडिआईआ चार, गावै को विदिआ विखमु वीचारु ।
गावै को साजि करे तनु खेह, गावै को जीअ लै फिरि देह ।
गावै को जापै दिसै दूरि, गावै को वेखै हादरा हदूरि ।
कथना कथी न आवै तोटि, कथि कथि कथी कोटी कोटि कोटि ।
देदा दे लैदे थकि पाहि, जुगा जुगंतरि खाही खाहि ।
हुकमी हुकमु चलाए राहु, नानक विगसै बेपरवाहु ।। ३

प्रभू की महिमा वर्णन से परे है—वह अद्वितीय दाता है, गुणवान् है, विद्या-विचारवान् है, सृजनकर्ता है, शरीर देने और लेने वाला है । दूर भी है, समीप भी है, सर्वव्यापक है, सर्वशक्तिमान है—और उसका वर्णन सामर्थ्य से परे है । युगों-युगों से असख्यों उसका गुणगान, उसकी कीर्ति गा रहे और कथन करते आ रहे हैं, फिर भी वह पूरा नहीं होता । लेनेवाले, उसकी निअमतों का सुख उठानेवाले, भले ही थक जायँ, किन्तु उसकी कृपा का अन्त नहीं । उसकी दिखाई राह पर ही सब चल रहे हैं, परन्तु स्वयं वह बेपरवाह (निस्पृह) और सर्वदा प्रसन्नचित्त है । ३

पौड़ी ४

साचा साहिबु साचु नाय भाखिआ भाउ अपारु ।
आखहि मंगहि देहि देहि दाति करे दातारु ।
फेरि कि अगै रखीऐ जितु दिसै दरबारु ।
मुहौ कि बोलणु बोलीऐ जितु सुणि धरे पिआरु ।।
अमृत बेला सचु नाउ वडिआई वीचारु ।
करमी आवै कपड़ा नदरी मोखु दुआरु ।
नानक एवै जाणीऐ सभु आपे सचिआरु ।। ४

प्रभू सत्य है—उसका नाम भी सत्य है—इस सच्चाई को ग्रहण करना बड़ा महत्त्वपूर्ण है; और इस सच्चाई को ग्रहण करनेवालों के लिए उसके भंडार सदैव खुले रहते हैं । फिर ऐसे दाता की प्राप्ति के लिए उसके समक्ष क्या अर्पण करें, जिससे वह रीझ जाए और उसके दरबार की प्राप्ति हो; मुँह से क्या कहें, जिसे सुनकर वह प्यार करने लग जाए, अर्थात् उससे किस प्रकार मिलें । इन सभी प्रश्नों का उत्तर है—अमृत-वेला में उठकर निद्रा-आलस्य का त्यागकर, मनसा-वाचा-कर्मणा उसकी

सच्ची अराधना ही उसकी कृपा का पात्र बना सकती है। यह शरीर-रूपी वस्त्र उसकी कृपा से ही प्राप्त होता है और उसी की कृपा-दृष्टि से मोक्ष का द्वार खुल जाता है—श्रीगुरू नानकदेव जी कहते हैं कि हे मनुष्यो! वह ईश्वर ही—सत्यस्वरूप, सार्मथ्यवान् और सब कुछ है, ऐसा जानो। ४

पौड़ी ५

थापिया न जाय कीता न होय, आपे आपि निरंजनु सोय।
जिनि सेविआ तिनि पाइआ मानु, नानक गावीऐ गुणी निधानु।
गाविऐ सुणीऐ मनि रखिऐ भाउ, दुखु परहरि सुखु घरि लै जाय।
गुरमुखि नादं गुरमुखि वेदं गुरमुखि रहिआ समाई।
गुरु ईसरु गुरु गोरखु बरमा गुरु पारबती माई।
जे हउ जाणा आखा नाही कहणा कथनु न जाई।
गुरा इक देहि बुझाई।
सभना जीआ का इकु दाता सो मै विसरि न जाई॥ ५

प्रभू की (एक स्थान पर, एक रूप में) स्थापना नहीं हो सकती—वह अनादि, मायारहित (निर्मल) और स्वयंभू है—उसकी सेवा-अराधना करनेवाला मान-सम्मान का पात्र बनता है—यदि सच्ची लगन और पूर्ण आस्था से उसका गायन, श्रवन और मनन करेंगे, तो सभी दुःख-क्लेश के बदले परम सुख और शान्ति प्राप्त होगी। गुरु की वाणी, भवसागर से पार लगानेवाली नाव है, गुरु की वाणी ही वेद-ज्ञान है। गुरु परमात्मा-स्वरूप है। (प्रभू में अभेद होनेवाले ही अपुनरावृत्ति को प्राप्त करते हैं।) ब्रह्मा, विष्णु, शिव (स्रष्टा, भर्ता, संहारकर्ता)—यह तीनों उसी ईश्वर के स्वरूप हैं। (सरस्वती, लक्ष्मी,) पार्वती (आदि सब) उसी गुरु की शक्तियाँ हैं। यदि उस अभेद्य गुरु परमात्मा को (हम) जान भी लें तो उसका वर्णन कैसे करें, शब्द कहाँ से पावें? गुरु अकथनीय है; और जिसने यह समझा दिया है कि सभी प्राणीमात्र का वही एक पालनकर्त्ता है, उसको कभी न बिसारना हम सबका पुनीत कर्त्तव्य है। ५

पौड़ी ६

तीरथि नावा जे तिसु भावा विणु भाणे कि नाय करी।
जेती सृष्टि उपाई वेखा विणु करमा कि मिलै लई।
मति विचि रतन जवाहर माणिक जे इक गुर की सिख सुणी।

गुरा इक देहि बुझाई ।
सभना जीआ का इकु दाता सो मै विसरि न जाई ।। ६

तीर्थस्नान भी तभी सफल है जब उस ईश्वर की प्रसन्नता उसमें निहित हो—सारी सृष्टि के कर्त्ता की जब कृपादृष्टि न हुई, तब सब कुछ व्यर्थ है। संसार के रत्न, धन, सुख आदि तभी यथार्थ हैं, जब सत्कर्मों में, गुरु से प्राप्त सद्बुद्धि द्वारा, हम उनका सदुपयोग करें। गुरुदेव जी ने यह समझा दिया है कि सब जीवों का दाता ईश्वर एक है और उसे सदैव याद रखना, कभी न बिसारना हम सबका कर्त्तव्य है। ६

पौड़ी ७

जे जुग चारे आरजा होर दसूणी होय ।
नवा खंडा विचि जाणीऐ नालि चलै सभु कोय ।
चंगा नाउ रखायकै जसु कीरति जगि लेय ।
जे तिसु नदरि न आवई त वात न पुछै के ।
कीटा अंदरि कीटु करि दोसी दोस धरे ।
नानक निरगुणि गुणु करे गुणवंतिआ गुणु दे ।
तेहा कोय न सुझई जि तिसु गुणु कोय करे ।। ७

श्रीगुरू नानकदेव जी कहते हैं कि यदि चारों युगों तक की आयु हो अथवा उससे भी दसगुनी हो जावे, सारी पृथ्वी पर प्रसिद्ध हो, उसके साथ और अधीन सभी चलनेवाले हों, अच्छे नाम-काम वाला यशस्वी-कीर्तिवान् भी हो, फिर भी यदि वह प्रभू की कृपादृष्टि का पात्र नहीं है तो उसको पूछनेवाला कोई नहीं है। उसकी गणना कीड़े-मकोड़ों में होती है, और अवगुणी तक उसमें दोष निकालने लगते हैं। वह ईश्वर तो निर्गुण व्यक्तियों को गुणवान् बनाता और गुणवानों को और भी गुण प्रदान करता है; परन्तु ऐसा कोई और नहीं दीखता जो ईश्वर के उपकारों का बदला चुका सके। ७

पौड़ी ८–११

सुणिऐ सिध पीर सुरि नाथ, सुणिऐ धरति धवल आकास ।
सुणिऐ दीप लोअ पाताल, सुणिऐ पोहि न सकै कालु ।
नानक भगता सदा विगासु, सुणिऐ दूख पाप का नासु ।। ८

सुणिऐ ईसरु बरमा इन्दु, सुणिऐ मुखि सालाहण मन्दु ।
सुणिऐ जोग जुगति तनि भेद, सुणिऐ सासत सिम्रिति वेद ।
नानक भगता सदा विगासु, सुणिऐ दूख पाप का नासु ।। ६

सुणिऐ सतु संतोखु गिआनु, सुणिऐ अठसठि का इसनानु ।
सुणिऐ पड़ि पड़ि पावहि मानु, सुणिऐ लागै सहजि धिआनु ।
नानक भगता सदा विगासु, सुणिऐ दूख पाप का नासु ।। १०

सुणिऐ सरा गुणा के गाह, सुणिऐ सेख पीर पातिसाह ।
सुणिऐ अंधे पावहि राहु, सुणिऐ हाथ होवै असगाहु ।
नानक भगता सदा विगासु, सुणिऐ दूख पाप का नासु ।। ११

गुरु की अराधना से ही सिद्ध, पीर, जोगी, जती, देवताओं ने प्रतिष्ठा पाई है। पृथ्वी और आकाश पाताल भी उसकी इच्छा में स्थित हैं और वह इन्हीं में विराजमान है। ईश्वर का नाम सुनने-गानेवाले का यमराज भी कुछ नहीं बिगाड़ सकता; उसके भक्त सदैव आनन्दित रहते हैं और दु:ख-क्लेश उनके पास भी नहीं फटकते। ८ ईश्वर का नाम सुनने से ही मनुष्य शिव, ब्रह्मा, इन्द्र जैसा पद प्राप्त करता है, निकृष्ट व्यक्ति प्रधान और यशस्वी बन जाता है। योग, युक्ति और शारीरिक रहस्यों की जानकारी होती है—शास्त्रों, स्मृतियों और वेदों का ज्ञान प्राप्त होता है—श्रीगुरू नानकदेव जी कहते हैं कि ईश्वर का नाम सुनने से सदैव आनन्द प्राप्त होता है और दुख-दारिद्र का नाश होता है। ९ ईश्वर का नाम सुनने से सत्य, संतोष, ज्ञान, ६८ तीर्थों का स्नान-फल, ध्यान, मान-सम्मान और यश की प्राप्ति होती है; श्रीगुरू नानकदेव महाराज कहते हैं कि प्रभू के नाम के सहारे भक्तजन सारे कष्टों से बचकर चिरसुखी होते हैं। १० ईश्वर-नाम के सुनने से ही समुद्र जैसे गहरे विचारवान् व्यक्ति बनते हैं; शेख़, पीर और बादशाह भी उसी की कृपा से बनते हैं। गुरूपदेश से अंध अज्ञानी-जीव सुमार्ग प्राप्त करते हैं; कठिन कार्य आसान हो जाते हैं। नाम सुनने से ही सदैव सुख, शांति, ख़ुशियाँ प्राप्त होती हैं और दु:ख-दारिद्र का नाश होता है। ११

पौड़ी १२-१५

मंने की गति कही न जाय, जे को कहै पिछै पछुताय ।
कागदि कलम न लिखणहारु, मंने का बहि करनि वीचारु ।
ऐसा नामु निरंजनु होय, जे को मंनि जाणै मनि कोय ।। १२

मंनै सुरति होवै मनि बुधि, मंनै सगल भवण की सुधि।
मंनै मुहि चोटा ना खाय, मंनै जम कै साथि न जाय।
ऐसा नामु निरंजनु होय, जे को मंनि जाणै मनि कोय ॥ १३
मंनै मारगि ठाक न पाय, मंनै पति सिउ परगटु जाय।
मंनै मगु न चलै पंथु, मन धरम सेती सनबंधु।
ऐसा नामु निरंजनु होय, जे को मनि जाणै मनि कोय ॥ १४
मंनै पावहि मोखु दुआरु, मंनै परवारै साधारु।
मंनै तरै तारे गुरु सिख, मंनै नानक भवहि न भिख।
ऐसा नामु निरंजनु होय, जे को मंनि जाणै मनि कोय ॥ १५

ईश्वरीय नाम के श्रवण करने की महिमा का वर्णन करने के पश्चात् अब श्रीगुरू नानकदेव जी मनन करने की महिमा का वर्णन करते हुए कहते हैं कि गुरू के वचनों की महिमा अवर्णनीय है। जो उसकी स्तुति नहीं करते वे अन्त में पछताते हैं। प्रभु की महिमा का वर्णन कागजों पर अंकित नहीं किया जा सकता; हाँ वह ध्यान-मनन की वस्तु है। उस प्रभू का नाम ऐसा मायारहित है जिसे स्वीकार करके ही प्रभु की प्राप्ति होती है। १२ नाम की महिमा माननेवाले की सुधि, बुद्धि, मन, सब शुद्ध हो जाता है और हर ओर की सूझ-बूझ प्राप्त हो जाती है। उस मनुष्य को किसी प्रकार की ग्लानि नहीं सहनी पड़ती, और यम के दरबार में भी उसे कोई कष्ट नहीं होता। ईश्वर का नाम ऐसा निर्मल मायारहित है, जिसे स्वीकार करके ही प्रभू की प्राप्ति होती है। १३ माननेवालों के मार्ग में कोई रुकावट नहीं पड़ती, उनका सत्कार होता है। वे भ्रम के अंधेरों से दूर सुमार्ग पर चलने लगते हैं और उनका संबन्ध सीधा धर्म के साथ हो जाता है, अर्थात् वे अधर्मी नहीं होते। प्रभू का नाम ऐसा मायारहित है, जिसे स्वीकार करके ही प्रभू की प्राप्ति होती है। १४ गुरु-वचनों को माननेवाले के लिए मुक्ति के द्वार खुल जाते हैं। साथ ही उसके परिवार तक का भी कल्याण हो जाता है। वह स्वयं भी भवसागर से पार हो जाता है एवं उसके अनुगत शिष्य भी तर जाते हैं। वे योनियों में भ्रमण नहीं करते। प्रभू का नाम ऐसा मायारहित है, जिसे स्वीकार करके ही प्रभू की प्राप्ति होती है। १५

पौड़ी १६

पंच परवाण पंच परधानु, पंचे पावहि दरगहि मानु।
पंचे सोहहि दरि राजानु, पंचा का गुरु एकु धिआनु।

जे को कहै करै वीचारु, करते कै करणै नाही सुमारु।
धौलु धरमु दइआ का पूतु, संतोखु थापि रखिआ जिनि सूति।
जे को बुझै होवै सचिआरु, धवलै उपरि केता भारु।
धरती होरु परै होरु होरु, तिस ते भारु तलै कवणु जोरु।
जीअ जाति रंगा के नाव, सभना लिखिआ वुड़ी कलाम।
एहु लेखा लिखि जाणै कोय, लेखा लिखिआ केता होय।
केता ताण सुआलिहु रूपु, केती दाति जाणै कौणु कूतु।
कीता पसाउ एको कवाउ, तिसते होए लख दरीआउ।
कुदरति कवण कहा वीचारु, वारिआ न जावा एक वार।
जो तुधु भावै साई भली कार, तू सदा सलामति निरंकार ॥ १६

अगली पंक्तियों में पंच-परमात्मा (सन्तों) की झाँकी मिलती है। प्रभू-भक्त पंचजन, ईश्वर की दरगाह में शिरोमणि होते हैं, आदर पाते हैं; शोभनीय होते हैं और ईश्वर की आस्था में पूर्ण विश्वास करते हैं; और जो कुछ वे विचार करके कहते-करते हैं उसका अर्थ यह है कि ईश्वर ही कर्त्ता है, उसकी महिमा अपरंपार है और उसकी आज्ञा से ही सबकुछ हो रहा है।

यह धरती दया के पुत्र धर्म (बैल) के सहारे खड़ी है। धैर्य-संतोष, मर्यादा में बँधी है। इस सत्यता को स्वीकार करनेवाला ही, सच्चा पुरुष है[1]। धर्म के पुत्र बैल के ऊपर कितना भार है। धरती और उसके भी आगे संसार हैं, और फिर जब पृथ्वी का कोई अन्त नहीं तो जिसके ऊपर पृथ्वी टिकी है वह स्वयं किस महान् शक्ति के आधार पर खड़ा है? कई जाति, सम्प्रदाय, रंग-रूप और नाम-धर्मों के लोग इस पृथ्वी पर हैं। सभी का भाग्य उनके साथ है, सबके भाग्य की रेखाएँ अंकित करनेवाला कौन है, वह कितना बड़ा विशाल होगा! कितना सामर्थ्यवान्, शक्तिशाली एवं रूप-स्वरूप का स्वामी एवं प्रशंसनीय वह है! परन्तु हममें से कौन ऐसा शक्तिशाली है जो उसकी कृपाओं और महिमाओं को जान सके! वह प्रभु तो ऐसा है जिसके एक बोल से ही सब कुछ बनता है, लाखों नदियाँ बह निकली हैं, प्रकृति कितनी विशाल है, अर्थात् सब कुछ इतना फैला हुआ है कि जिसकी कल्पना करते ही हम उस प्रभु पर अपना सर्वस्व निछावर करने को तैयार हो जाते हैं; हे ईश्वर! जो आपको भाए वही ठीक है। और आप सर्वदा स्थिर और निरंकार है। १६

---

१ धरती के बारे में विभिन्न विचारधाराएँ प्रचलित हैं कि यह शेषनाग पर टिकी है, बैल पर टिकी हुई है आदि। परन्तु कोई भी यह नहीं बताता कि स्वयं शेषनाग और बैल आदि किस पर टिके हुए हैं।

श्रीमद्गोस्वामी तुलसीदास-रचित

श्रीरामचरितमानस

एवं संस्कृत-पद्यानुवाद

मानस-भारती

रचयिता

श्री जनार्दन गंगाधर रटाटे एम० ए०, साहित्यरत्न

अतुलितबलधामं स्वर्णशैलाभदेहं
दनुजवनकृशानुं ज्ञानिनामग्रगण्यम् ।
सकलगुणनिधानं वानराणामधीशं
रघुपतिवरदूतं वातजातं नमामि ॥

श्रीराम-पञ्चायतन

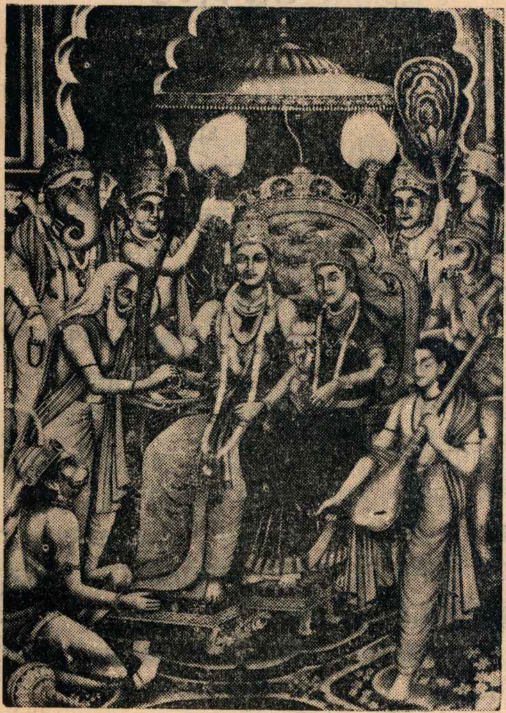

राम लक्ष्मणपूर्वजं रघुवरं सीतापतिं सुन्दरम् ।
काकुत्स्थं करुणामयं गुणनिधिं विप्रप्रियं धार्मिकम् ।।
राजेन्द्रं सत्यसन्धं दशरथतनयं श्यामलं शान्तिमूर्त्तिम् ।
वन्दे लोकाभिरामं रघुकुलतिलकं राघवं रावणारिम् ।।

* श्रीगणेशायनमः *

रामचरितमानस

बालकाण्ड

वर्णानामर्थसंघानां रसानां छन्दसामपि ।
मङ्गलानां च कर्तारौ वन्दे वाणीविनायकौ ॥ १ ॥
भवानीशङ्करौ वन्दे श्रद्धाविश्वासरूपिणौ ।
याभ्यां विना न पश्यन्ति सिद्धाः स्वान्तःस्थमीश्वरम् ॥ २ ॥
वन्दे बोधमयं नित्यं गुरुं शङ्कररूपिणम् ।
यमाश्रितो हि वक्रोऽपि चन्द्रः सर्वत्र वन्द्यते ॥ ३ ॥
सीतारामगुणग्रामपुण्यारण्यविहारिणौ ।
वन्दे विशुद्धविज्ञानौ कवीश्वरकपीश्वरौ ॥ ४ ॥
उद्भवस्थितिसंहारकारिणीं क्लेशहारिणीम् ।
सर्वश्रेयस्करीं सीतां नतोऽहं रामवल्लभाम् ॥ ५ ॥
यन्मायावशवर्ति विश्वमखिलं ब्रह्मादिदेवासुरा
यत्सत्त्वादमृषैव भाति सकलं रज्जौ यथाहेर्भ्रमः ।
यत्पादप्लवमेकमेव हि भवाम्भोधेस्तितीर्षावतां
वन्देऽहं तमशेषकारणपरं रामाख्यमीशं हरिम् ॥ ६ ॥
नानापुराणनिगमागमसम्मतं यद्
रामायणे निगदितं क्वचिदन्यतोऽपि ।
स्वान्तःसुखाय तुलसी रघुनाथगाथा-
भाषानिबन्धमतिमञ्जुलमातनोति ॥ ७ ॥

पाठकों को विदित है कि अवधी भाषा में 'एकार' और 'ओकार' की मात्राएं ह्रस्व और दीर्घ—दो प्रकार से बोली जाती हैं। यथा—'जे बिन काज दाहिनेहि बायें', 'जो जस कीन सो तस फल चाखा'। इनमें 'जे, ने और जो, सो' में ए और ओ की मात्राएँ क्रमशः दीर्घ और ह्रस्व हैं। संस्कृत अनुवाद 'मानस-भारती' सहित 'श्रीरामचरितमानस' के प्रकाशन को देश-देशान्तर में शुद्ध पढ़ा जाय—अवधी में अनभ्यस्त समुदाय के पाठ करते समय, ह्रस्व-दीर्घ एकार-ओकार के उच्चारण में भ्रम उत्पन्न होकर छन्द और लय भंग न हो जाय—इस हेतु सर्वभारतीय काशिराज-न्यास द्वारा प्रकाशित मानस-संस्करण में प्रयुक्त ह्रस्व तथा दीर्घ क्रमशः ॅ ो, ॅ ो का प्रयोग मानस-पाठ के प्रस्तुत संस्करण में किया गया है। पूज्य श्री विनोबा भावे जी ने भी अपने तमिळ-देवनागरी लिप्यन्तरण में इन मात्रा-चिह्नों का प्रयोग किया है। भुवन वाणी ट्रस्ट भी, उर्दू-फ़ारसी के सामासिक पदों, कश्मीरी, तमिळ, तेलुगु, मलयाळम

* श्रीगणेशायनमः *

मानस-भारती

बालकाण्डम्

श्रीशम्भुगौरीमहितं गजास्यं सर्वार्थसिद्धिप्रदमिन्दुभास्यम् ।
चतुर्भुजं साधक-बुद्धिलास्यं वन्देऽर्पयन्तं रघुनाथदास्यम् ॥ क ॥

साकेतसिंहासनराजमानं स्वभ्रातृभिर्मारुतिना च युक्तम् ।
वसन्तमन्तर्बहिरिष्टरूपं नमामि सीतापतिमाप्तकामम् ॥ ख ॥

श्रीरामकीर्तिलतिकालसितं विकासि
वाल्मीकिवाक्यरचनासरसप्रवाहम् ।
गोस्वामिदासतुलसीकृततीर्थपङ्क्ति
तापापहं जयति मानसमत्युदारम् ॥ ग ॥

पार्वतीशिवगोविन्दपरब्रह्मस्वरूपिणम् ।
सद्गुरुं सर्वदा नौमि मदर्थं कल्पपादपम् ॥ घ ॥

नानाविधप्रसृतवाङ्मयसाधकानां
योगेन पापकलितापहरा सुलक्ष्मीः ।
लब्धुं चराचरमयेशकृपामजस्र-
मारच्यतेऽतितनुमानसभारतीयम् ॥ ङ ॥

गोस्वामितुलसीदासरामायणकथाश्रिता ।
भावानुवादरूपैषा जयतात् संस्कृताकृतिः ॥ च ॥

चौपाईग्रथितानुष्टुप् छन्दसीह मयाध्रुवम् ।
दोहेन्द्रोपेन्द्रवज्रोपजातिच्छन्दसि योजितः ॥ छ ॥

छन्दः प्रमाणिकानाम्निच्छन्दस्यत्र प्रयोजितम् ।
सोरठा च भुजङ्गाख्यप्रयाते प्रतिवेदितः ॥ ज ॥

और कन्नड़-ग्रंथों के देववागरी-लिप्यन्तरणों, तथा अवधी, ब्रजभाषा में इन विशिष्ट ह्रस्व-दीर्घ उच्चारणों को खास अवसरों पर व्यक्त करने के लिए, इन्हीं मात्रा-आकृतियों का प्रयोग कर रहा है। तदर्थ हम सर्वभारतीय काशिराज-न्यास तथा उसके मंत्री श्री रमेशचन्द्र देव के अतिशय अनुगृहीत हैं। यह भी ज्ञातव्य है कि दक्षिणी लिपियों की स्वरावलियों में 'एकार' और 'ओकार' के ह्रस्व एवं दीर्घ—दो रूपों का प्रयोग सदैव से प्रयुक्त होता आ रहा है। **—नन्दकुमार अवस्थी, सम्पादक 'वाणीसरोवर'**

सो०—जो सुमिरत सिधि होइ, गननायक करिबर - बदन।
करउ अनुग्रह सोइ, बुद्धिरासि सुभ - गुन - सदन॥ १॥

मूक होइ बाचाल, पंगु चढ़इ गिरिबर गहन।
जासु कृपाँ सो दयाल, द्रवउ सकल कलिमल - दहन॥ २॥

नील - सरोरुह - स्याम, तरुन - अरुन - बारिज - नयन।
करउ सो मम उर धाम, सदा छीरसागर - सयन॥ ३॥

कुंद - इंदु - सम देह, उमारमन करुना - अयन।
जाहि दीन पर नेह, करउ कृपा मर्दन - मयन॥ ४॥

बंदउँ गुरु - पद - कंज, कृपासिंधु नररूप हरि।
महामोह - तम - पुंज, जासु बचन रबि - कर - निकर॥ ५॥

बंदउँ गुरु - पद - पदुम - परागा। सुरुचि - सुबास, सरस अनुरागा॥
अमिअ - मूरिमय चूरन चारू। समन सकल भव - रुज - परिवारू॥
सुकृति - संभुतन बिमल बिभूती। मंजुल - मंगल - मोद - प्रसूती॥
जन - मन - मंजु - मुकुर - मल - हरनी। किएँ तिलक गुन-गन-बस-करनी॥
श्रीगुर - पद - नख - मनि - गन - जोती। सुमिरत दिब्य दृष्टि हियँ होती॥
दलन मोहतम सो सुप्रकासू। बड़े भाग उर आवइ जासू॥
उघरहिं बिमल बिलोचन ही के। मिटहिं दोष-दुख भव-रजनी के॥
सूझहिं राम चरित मनि मानिक। गुपुत प्रगट जहँ जो जेहि खानिक॥

दो०—जथा सुअंजन अंजि दृग, साधक सिद्ध सुजान।
कौतुक देखत सैल बन, भूतल भूरि निधान॥ १॥

गुरु - पद - रज - मृदु - मंजुल - अंजन। नयन-अमिअ, दृग-दोष-बिभंजन॥
तेहिं करि बिमल बिबेक - बिलोचन। बरनउँ राम-चरित भवमोचन॥
बंदउँ प्रथम महीसुर - चरना। मोह - जनित संसय सब हरना॥
सुजन-समाज सकल - गुन - खानी। करउँ प्रनाम सप्रेम सुबानी॥
साधु - चरित सुभ चरित कपासू। निरस बिसद गुनमय फल जासू॥
जो सहि दुख परछिद्र दुरावा। बंदनीय जेहिं जग जस पावा॥
मुद - मंगलमय संत - समाजू। जो जग जंगम तीरथराजू॥
राम - भक्ति जहँ सुरसरि - धारा। सरसइ ब्रह्मबिचार - प्रचारा॥
बिधि - निषेधमय कलिमल - हरनी। करम - कथा रबिनंदिनि बरनी॥
हरि - हर - कथा बिराजति बेनी। सुनत सकल - मुद - मंगल - देनी॥
बटु बिस्वास अचल निज धरमा। तीरथराज समाज सुकरमा॥
सबहिं सुलभ सब दिन सब देसा। सेवत सादर समन कलेसा॥
अकथ अलौकिक तीरथराऊ। देइ सद्य फल प्रगट प्रभाऊ॥

दो०—सुनि समुझहिं जन मुदित मन, मज्जहिं अति अनुराग।
लहहिं चारि फल अछत तनु, साधु - समाज प्रयाग॥ २॥

स्मृतेर्यस्य सिद्धिर्भवेत् कार्यजाते गणेशो द्विपास्यः समूहश्च बुद्धेः ।
शुभानां गुणानां वरं धाम पूज्यो मयि स्यात् कृपालुः सदा विघ्नहर्ता ॥ १ ॥

कृपातो भवेद्यस्य मूकोऽपि वाग्मी गिरीन् दुर्गमान् पङ्गुरालङ्घते च ।
समेषां कलेर्नाशको यो मलानां दयालुर्द्रवेद् देवदेवो मयीशः ॥ २ ॥

सदा क्षीरसिन्धौ भवेन्निद्रितो यः स्वरूपेण नीलाम्बुजश्यामवर्णः ।
विकासिप्रकृष्टारुणाब्जे क्षणो यो वसेन्मानसे मेऽनिशं सर्वसेव्यः ॥ ३ ॥

शिवश्चन्द्रकुन्देन्दुगौरो दयाया निवासोऽसमानः प्रियः शैलजायाः ।
चिरस्नेहयुक्तश्च यो दीनलोके मयि स्यात् कृपालुः स पुष्पेषुमर्दः ॥ ४ ॥

गुरोस्तस्य पादाम्बुजे नौमि नित्यं हरिर्यो नराख्यः कृपासागरश्च ।
महामोहमोहान्धकारस्य नाशे वचो यस्य सूर्यांशुपुञ्जस्वरूपम् ॥ ५ ॥

वन्दे परागमनिशं सद्गुरोः पादपद्मयोः । सुरुचिं गन्धलसितं सरसञ्चानुरागतः ॥
सञ्जीवनौषधेश्चारुतमं चूर्णमिदं मतम् । यन्नूनं भवरोगाणां परिवारस्य शामकम् ॥
पुण्यकृन्नीलकण्ठस्य विभूतिर्विमला तनौ । प्रसवित्री दिव्यरूपा मञ्जुमङ्गलमोदयोः ॥
जनचित्तोज्ज्वलादर्शदोषपुञ्जहरं परम् । गुणसन्दोहवशकृद् यदि स्यात् तिलकायितम् ॥
श्रीगुरोः पादनखरज्योतिर्मणिगणोद्भवम् । यस्य स्मृतेर्दिव्यदृष्टिर्जायते मानसे क्षणात् ॥
तज्ज्योतिर्दलनं मोहरूपिणस्तमसः स्मृतम् । आयात्येतद् यस्य चित्ते स नरोऽत्यन्तभाग्यवान् ॥
तज्ज्योतिषा विकसिते स्यातां हृन्नयनेऽमले । विलोप्यन्ते दुःखदोषा भवरात्र्यास्तदागमात् ॥
दृश्या अदृश्या ये यस्यां कस्यामपि खनौ स्थिताः । दृश्यन्ते रामचरितमुक्तामणिगणास्तु ते ॥

यथाञ्जनं मञ्जु विधाय नेत्रे सिद्धाः सुविज्ञा गुणसाधकाश्च ।
शैले वने भूमितले निधानं पश्यन्ति कौतूहलतोऽप्यनेकम् ॥ १ ॥

गुरोः पादरजः सौम्यं मञ्जुलं तत् सदञ्जनम् । यन्नेत्रयोः सुधारूपं तयोर्दोषान् निवारयत् ॥
विवेकनेत्रे विमले कृत्वा तेनैव साम्प्रतम् । वर्णये रामचरितं भवबन्धविमोचनम् ॥
सर्वेषां मोहजन्यानां सन्देहानां विनाशकान् । प्रथमं भूमिदेवानां चरणान् नौमि सादरम् ॥
ततः सर्वगुणोदारमणिपुञ्जप्रसूं खनिम् । सतां समाजं वन्देऽहं सुवाचा प्रेमपूर्वकम् ॥
शुभं चरित्रं साधूनां कार्पासः सुयशाः क्षितौ । गुणवन्नीरसं यस्य विशदञ्च फलं मतम् ॥
दुःखं सोढ्वापि येनात्र परच्छिद्रं निवार्यते । वन्दनीय यशः प्राप्तं हेतुना तेन भूतले ॥
सुजनानां समाजस्तु शिवमोदमयः स्मृतः । यो जङ्गमस्तीर्थराजः प्रथितो जगतीतले ॥
रामभक्तिर्यत्र धारा सुरनद्याः प्रकीर्तिता । ब्रह्मतत्त्वविचारस्य प्रचारश्च सरस्वती ॥
कलिजानां कल्मषानां हन्त्री विधिनिषेधयुक् । श्रौती कर्मकथा यत्र यमुना परिकीर्तिता ॥
त्रिवेणीरूपिणी भाति कथा हरिहराश्रिता । श्रवणादेव या सर्वमङ्गलानन्ददायिनी ॥
स्वधर्मे दृढविश्वासो यत्राक्षयवटो मतः । सर्वाणि शुभकर्माणि सामग्री तीर्थराजगा ॥
सर्वत्र सुलभः सोऽयं सर्वेभ्यः सर्वदः सदा । सर्वान् शमयति क्लेशान् सादरं यदि सेव्यते ॥
गिरामविषयस्तीर्थराजो लोकविलक्षणः । आविष्कृतप्रभावस्तु फलं सद्यः प्रयच्छति ॥

ये सत्समाजं वरतीर्थराजं श्रृण्वन्ति गायन्त्यनुमोदमानाः ।
गाहन्ति चातिप्रणयेन ते स्युश्चतुःपुमर्थाप्तियुता इहैव ॥ २ ॥

मज्जन - फल पेखिअ ततकाला । काक होहिं पिक, बकउ मराला ॥
सुनि आचरज करै जनि कोई । सतसंगति - महिमा नहिं गोई ॥
बालमीक नारद घटजोनी । निज-निज मुखनि कही निज होनी ॥
जलचर थलचर नभचर नाना । जे जड़ चेतन जीव जहाना ॥
मति - कीरति - गति - भूति - भलाई । जब जेहिं जतन जहाँ जेहिं पाई ॥
सो जानब सतसंग - प्रभाऊ । लोकहुँ बेद न आन उपाऊ ॥
बिनु सतसंग बिबेक न होई । रामकृपा - बिनु सुलभ न सोई ॥
सतसंगत मुद - मंगल - मूला । सोइ फल-सिधि, सब साधन फूला ॥
सठ सुधरहिं सतसंगति पाई । पारस - परस कुधातु सुहाई ॥
बिधिबस सुजन कुसंगत परहीं । फनि-मनि-सम निज गुन अनुसरहीं ॥
बिधि-हरि-हर-कबि-कोबिद-बानी । कहत साधु - महिमा सकुचानी ॥
सो मो - सन कहि जात न कैसें । साक - बनिक मनि - गुन - गन जैसें ॥

दो०—बंदउँ संत समान चित, हित अनहित नहिं कोइ ।
अंजलि - गत सुभ सुमन जिमि, सम सुगंध कर दोइ ॥ ३ (क) ॥
संत सरल-चित जगत - हित, जानि सुभाउ सनेहु ।
बाल - बिनय सुनि करि कृपा, रामचरन - रति देहु ॥ ३ (ख) ॥

बहुरि बंदि खलगन सति भाएँ । जे बिनु काज दाहिनेहु बाएँ ॥
परहित - हानि लाभ जिन्ह - केरें । उजरें हरष, बिषाद बसेरें ॥
हरि - हर - जस राकेस राहु - से । पर - अकाज भट सहसबाहु - से ॥
जे पर - दोष लखहिं सहसाखी । परहित - घृत जिन्हके मन माखी ॥
तेज कृसानु, रोष महिषेसा । अघ - अवगुन - धन - धनी धनेसा ॥
उदय केतु सम हित सबही - के । कुंभकरन - सम सोवत नीके ॥
पर अकाजु लगि तनु परिहरहीं । जिमि हिम-उपल कृषी दलि गरहीं ॥
बंदउँ खल जस सेष सरोषा । सहस - बदन बरनइ परदोषा ॥
पुनि प्रनवउँ पृथुराज - समाना । पर अघ सुनइ सहसदस काना ॥
बहुरि सक्र सम बिनवउँ तेही । संतत सुरानीक हित जेही ॥
बचन बज्र जेहि सदा पिआरा । सहसनयन पर - दोष निहारा ॥

दो०—उदासीन - अरि - मीत - हित, सुनत जरहिं खल - रीति ।
जानि पानि जुग जोरि जन, बिनती करइ सप्रीति ॥ ४ ॥

मैं अपनी दिसि कीन्ह निहोरा । तिन्ह निज ओर न लाउब भोरा ॥
बायस पलिअहिं अति अनुरागा । होहिं निरामिष कबहुँ कि कागा ॥
बंदउँ संत - असज्जन - चरना । दुखप्रद उभय बीच कछु बरना ॥
बिछुरत एक प्रान हरि लेहीं । मिलत एक दुख दारुन देहीं ॥
उपजहिं एक संग जग माहीं । जलज - जोंक जिमि गुन बिलगाहीं ॥
सुधा, सुरा सम साधु, असाधू । जनक एक जग जलधि अगाधू ॥
भल, अनभल निज - निज करतूती । लहत सुजस अपलोक बिभूती ॥
सुधा, सुधाकर, सुरसरि, साधू । गरल, अनल, कलिमल-सरि, ब्याधू ॥
गुन - अवगुन जानत सब कोई । जो जेहि भाव नीक तेहि सोई ॥

हमारे २१२ ग्रन्थ

आपका ज्ञान और आपके घर की शोभा बढ़ायेंगे

★ यदि आप चाहते हैं कि अपना समुचित विकास करें,

★ यदि आप चाहते हैं कि जीवन को नया प्रकाश मिले,

★ यदि आप चाहते हैं कि साहित्य आपको शक्ति दे,

★ यदि आप चाहते हैं कि समाज आपका सम्मान करे,

★ तो हमारा आपसे विनम्र निवेदन है कि—'हिन्दी समिति' के ये ग्रन्थ जीवन के उद्देश्यों की पूर्ति के सर्वोत्तम सुलभ साधन हैं ।

हिन्दी समिति ने कला, विज्ञान, संस्कृति, इतिहास, दर्शन आदि विविध विषयों पर अब तक २१२ ग्रन्थ प्रकाशित किये हैं ।

ये ग्रन्थ नयनाभिराम मुद्रण, आकर्षक आवरण, सुदृढ़ जिल्द और उचित मूल्य के लिए बहु-प्रशंसित हैं ।

● ● ●

विशेष जानकारी और सूची-पत्र के लिए हमे लिखें । हम आपकी सहायता के लिए प्रस्तुत हैं ।

हिन्दी समिति

सचिव,
हिन्दी समिति, उत्तर प्रदेश शासन,
हिन्दी भवन, महात्मा गांधी मार्ग,
लखनऊ

भाषायी विवाद और झगड़े

भाषाओं की प्रगति में सहायक नहीं होते

संविधान में सभी प्रमुख भाषाओं को

समान स्तर प्राप्त है

देश की एकता और स्वाधीनता की रक्षा के लिए

विभिन्न भाषा-भाषियों का एक दूसरे के प्रति

उदार होना आवश्यक है

उत्तर प्रदेश सरकार

प्रदेश में प्रचलित हिन्दी और उर्दू दोनो ही भाषाओं

के विकास के लिए

दोनो ही भाषाओं में उच्च कोटि के ग्रन्थों के लेखन प्रकाशन

के लिए और

लेखकों को आर्थिक सहायता देने के लिए

कृतसंकल्प और तत्पर है।

भाषाएँ अभिव्यक्ति का साधन मात्र हैं

उनसे

विचारों की एकता खपित न होने दीजिए

ग १४५०० सूचना विभाग, उत्तर प्रदेश द्वारा प्रेषित।

स्थापित वर्ष १९४९:५० फोन २५६३४
२२६९८

उत्तर प्रदेशीय सहकारी गन्ना समिति संघ लि०,

लखनऊ

१२, राणा प्रताप मार्ग, लखनऊ

प्रदेश की १३४ सहकारी गन्ना समितियों की सर्वोच्च संस्था

गन्ना संघ व सदस्य समितियाँ लगभग २२ लाख गन्ना उत्पादकों के क्रय-विक्रय सम्बन्धी सभी समस्याओं का समाधान करते हुए तथा कृषि-उत्पादन व गन्ने की पैदावार बढ़ाने हेतु सभी आवश्यक साधनों को सुलभ करने में सतत प्रयत्नशील है।

लघु सिंचाई-साधनों को बढ़ावा देना, खादों का उपयोग बढ़ाने हेतु खाद-भण्डारों का निर्माण, विभिन्न प्रकार के उर्वरकों, खादों व कीट-नाशक पदार्थों का प्रबन्ध, उन्नतिशील बीजों का वितरण आदि कार्यों को सुविधाजनक बनाते हुये कार्यान्वित करना संघ का मुख्य कार्य है।

आधुनिकतम मशीनों से युक्त गन्ना-संघ-प्रेस सदस्य समितियों की मुद्रण-आवश्यकताओं की पूर्ति करता है।

चेचक से बचिये

इसके प्रकोप से कहीं आपका बच्चा यदि मृत्यु से बच गया, तो अन्धा, गूंगा, लंगड़ा व कुरूप न हो जाय ?

बचाव के लिए

१ चेचक का टीका लगवाइये। यह टीका जन्म होने के बाद एक सप्ताह के अन्दर लगवाना उत्तम है।

२ अड़ोस-पड़ोस में चेचक का एक भी रोगी होने पर तुरन्त निकट के प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र तथा जनपद या नगर के स्वास्थ्य अधिकारी को रोगी के पूरे पते से अवगत कराइये, ताकि रोग का विस्तार रोका जा सके।

ग २३२७ **उपस्वास्थ्य सेवा निदेशक (राष्ट्रीय चेचक उन्मूलन कार्यक्रम), उत्तर प्रदेश द्वारा प्रसारित**

स्वराष्ट्र समृद्धये परिवारो नियोज्यताम

प्रत्येक पुरुष का यह दायित्व है।

● पत्नी को स्वरूप स्वस्थ और सुखी रखे।

● बच्चों को अच्छा भोजन, शिक्षा और स्नेह प्रदान करे।

छोटे परिवार के आदर्श को जीवन में अपना कर परिवार एवं राष्ट्र की समृद्धि में सहायक हो।

ग १६२४६ राज्य परिवार नियोजन ब्यूरो, उत्तर प्रदेश द्वारा प्रसारित

वाणी सरोवर

(अपने ढंग का निराला त्रैमासिक पत्र)

इस पत्र में हिन्दी, उर्दू, अरबी, फ़ारसी, संस्कृत, पारसी, बंगला, ओड़िया, मराठी, गुरमुखी, तमिळ, मलयाळम, असमी, गुजराती, तेलुगु, कन्नड़, सिन्धी, कश्मीरी और नेपाली के अनुपम ग्रंथों का हिन्दी अनुवाद तथा देवनागरी लिपि में उनका मूल पाठ धारावाहिक प्रकाशित हो रहा है। वार्षिक शुल्क १०·०० मात्र। पाली, प्राकृत आदि का धारावाहिक कार्यक्रम भी शीघ्र ही अपनाया जायगा।

नवीन ग्राहक बननेवाले सज्जनों को सन् १९७० से १९७२ तक का शुल्क ३०·०० और इसी प्रकार वर्ष १९७३ के लिए १०·०० अर्थात् ४०·०० चार वर्ष के लिए भेजना उनके हित में होगा। बीते हुए वर्षों के अंक न मंगाने पर धारावाहिक चलनेवाले पहले से शुरू अनेक ग्रंथ उनके संग्रहालय में अपूर्ण रह जायँगे।

प्रा० स्थान—भुवन वाणी ट्रस्ट ४०५/१२८ चौपटियाँ रोड, लखनऊ–३

प्रदेश उत्तम स्वास्थ्य की ओर अग्रसर

- पिछले २५ वर्ष में औसत आयु लगभग दूनी हो गई है।

- चिकित्सा एवं उपचार के लिये औषधालय चिकित्सालय काफ़ी खोले गये हैं, डाक्टरों की नियुक्ति की गई है। साथ ही निरोधात्मक एवं अन्य जन स्वास्थ्य सेवाओं का काफी विस्तार हुआ है।

- स्वतंत्रता के पूर्व विशिष्ट सेवाओं का कोई समुचित प्रबन्ध नहीं था, इस अवधि में अनेकों विशिष्ट सेवाएँ जैसे बाल रुजालय, दन्त रुजालय, एनोस्थियिपालोजी इकाइयों, पैथालोजी इकाइयों और ब्लड बैंक आदि खोले गये हैं।

- परिवार को एकीकृत समग्र इकाई मानकर मातृ-शिशु स्वास्थ्य और परिवार नियोजन सेवाओं की व्यवस्था कीगई है।

- हृदय रोग और कैन्सर के उपचार हेतु भी व्यवस्था है और पोषण व्यवस्थित करने के लिए अनेकों कार्यक्रम चल रहे हैं।

- प्रदेश में अनेकों रोगों के विरुद्ध अभियान में सफलता प्राप्त हुई है जैसे मलेरिया, प्लेग आदि।

ग २२९१ प्रसारित :— स्वास्थ्य शिक्षा ब्यूरो

चिकित्सा, स्वास्थ्य एवं परिवार नियोजन निदेशालय, उ० प्र० लखनऊ।

Regd. No. R.N. 19347-70 Govt. of India

भुवन वाणी ट्रस्ट,

'प्रभाकर निलयम्', ४०५/१२८ चौपटियाँ रोड, लखनऊ–३

जो कार्य किये जा रहे हैं (सानुवाद देवनागरी-लिप्यन्तरण):—

१—(तमिळ) तिरुक्कुऱळ् २—(तमिळ) कम्ब रामायण
३—(तॅलुगु) रंगनाथ रामायण ४—(कन्नड़) पम्प रामायण—जैनसाहित्य
५—(असमिया) माधवकंदली रामायण ६—(कश्मीरी) रामावतार चरित
७—(नेपाली) रामायण भानुभक्त कृत ८—(गुजराती) गिरधर रामायण
९—(बंगला) कृत्तिवास रामायण लं०कां० १०—(सिंधी) स्वामी के सलोक
११—(मलयाळम) तुञ्चत्त् एऴुत्तच्छन् कृत महाभारत
१२—(ओड़िआ) वैदेहीश-विळास—उपेन्द्र भञ्ज कृत
१३—(मराठी) श्रीराम-विजय—श्रीधर स्वामी कृत मूल एवं अनुवाद
१४—(उर्दू) श्री 'रुस्वा' कृत "शरीफ़ज़ादः" मू० ४·००
१५—(उर्दू) गुज़श्तः लखनऊ—डॉ० शरर
१६—(गुरमुखी) श्री गुरु ग्रंथ साहब
१७—(गुरमुखी) जपुजी तथा सुखमनी साहब—गुरमुखी मूल पाठ तथा गीता के यशस्वी अनुवादक खा०ब० ख्वाजः दिलमुहम्मद कृत उर्दू पद्यानुवाद—दोनो देवनागरी लिपि में—मू० ४·००
१८—(फ़ारसी) दाराशिकोह कृत ५१ उपनिषदों के फ़ारसी-भाष्य (डॉ० ताराचंद द्वारा सम्पादित तथा ईरान में प्रकाशित 'सिर्रे अक्बर') का धारावाहिक हिन्दी अनुवाद
१९—(अ़रबी) रियाज़ुस्सालिहीन (हदीस)—(ज़ादँ सफ़र)
२०—(वाणी सरोवर)—विविध भाषाओं के उपर्युक्त अनुपम ग्रंथों का सानुवाद धारावाहिक देवनागरी लिप्यन्तरण का त्रैमासिक पत्र—वार्षिक मूल्य १०·००
२१—रामचरितमानस (तुलसी)—संस्कृत पद्यानुवाद, तथा ओड़िया लिपि में लिप्यन्तरण एवं ओड़िया गद्य-पद्यानुवाद
२२—इनके अतिरिक्त संस्कृत, पाली-प्राकृत, पारसी (ज़रथूस्त्र-गाथा) बाइबिल आदि के अनेक उद्धरण।

ट्रस्ट के अतिरिक्त, सानुवाद देवनागरी-लिप्यन्तरण के अन्य कार्य, जो अन्यत्र हो चुके हैं:—

१—(अ़रबी) क़ुर्आन (मूल आयतें अरबी व देवनागरी लिपि में, अनुवाद, टिप्पणी सहित)—इस्लामी धर्माचार्यों द्वारा प्रतिपादित—
२—(बंगला) कृत्तिवास रामायण—(पाँच काण्ड) बंगला मूल देवनागरी में लिप्यन्तरित, अवधी पद्यानुवाद—

वाणी प्रेस, लखनऊ-३ में मुद्रित एवं भुवन वाणी ट्रस्ट, लखनऊ–३ द्वारा प्रकाशित।
—द्वारा नन्दकुमार अवस्थी, सम्पादक